मानसी

भाग 2

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद
NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING

मानसी

भाग 2

पुस्तक-निर्माण में सहयोग के लिए आभार

(स्वर्गीय) प्रो. रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव, प्रो. सूरजभान सिंह, डा. जयपाल सिंह तरंग, डा. मानसिंह वर्मा, डा. निरंजन कुमार सिंह, डा. सुरेश पंत, डा. पंजाबीलाल शर्मा, डा. विश्वनाथ सिंह, श्री गंगा दत्त शर्मा, डा. महेन्द्र पाल शर्मा. डा. अमरसिंह कुशवाहा, डा. चंद्रलेखा डिसूजा, श्री गोविंद राजन।

मानसी

भाग 2

(केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के अंतर्गत द्वितीय भाषा के रूप में हिंदी पढ़ने वाले विद्यार्थियों के लिए दसवीं कक्षा की पाठ्यपुस्तक)

इंद्रसेन शर्मा

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING

प्रथम संस्करण
मार्च 1993 फाल्गुन 1914
दूसरा पुनर्मुद्रण
अक्टूबर 1993 कार्तिक 1915
P D 90T MB

एन.सी.ई.आर.टी. के प्रकाशन विभाग के कार्यालय

एन.सी.ई.आर.टी. कैम्पस	सी.डब्ल्यू.सी. कैम्पस	नवजीवन ट्रस्ट भवन	सी.डब्ल्यू.सी. कैम्पस
श्री अरविंद मार्ग	चितलापक्कम, क्रोमपेट	डाकघर नवजीवन	32, बी.टी. रोड, सुखचर
नई दिल्ली 110016	**मद्रास 600064**	**अहमदाबाद 380014**	**24 परगना 743179**

MAX. RETAIL PRICE
INCLUSIVE OF ALL TAXES
Rs 20-00-

प्रकाशन विभाग में सचिव, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, श्री अरविंद मार्ग, नई दिल्ली 110 016 द्वारा प्रकाशित तथा कौशिक बुक बाइंडिंग हाउस, सी-31, सैक्टर 8, नोएडा 201 301, गाजियाबाद, उ॰प्र॰ द्वारा मुद्रित

आमुख

भारत एक बहुभाषी देश है। इसके बहुभाषिक स्वरूप को बनाए रखने के लिए तथा देश की अखंडता, भावात्मक एकता एवं सांस्कृतिक समृद्धि के लिए यह आवश्यक है कि त्रिभाषा सूत्र को प्रभावी ढंग से लागू किया जाए। राष्ट्रीय शिक्षा नीति-1986 में भी इसीलिए त्रिभाषा सूत्र के कार्यान्वयन पर विशेष बल दिया गया है। इस दृष्टि से अखिल भारतीय संदर्भ में हिंदी के पठन-पाठन की तीन स्थितिपरक भूमिकाएँ हो जाती हैं।

इन तीनों भूमिकाओं के निर्वाह के लिए निम्नलिखित योजना के अनुसार दसवीं कक्षा तक हिंदी के पठन-पाठन की व्यवस्था की गई है :

1. प्रथम भाषा के रूप में दस वर्ष (पहली कक्षा से दसवीं तक)।
2. द्वितीय भाषा के रूप में कम से कम पाँच वर्ष (छठी कक्षा से दसवीं तक)।
3. तृतीय भाषा के रूप में कम से कम चार वर्ष (सातवीं कक्षा से दसवीं कक्षा तक)।

अतः भारतीय विद्यालयी शिक्षा में लगभग सभी राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों में उच्च माध्यमिक स्तर पर प्रत्येक विद्यार्थी से अनिवार्य रूप से तीन भाषाओं के अध्ययन की अपेक्षा की गई है।

अखिल भारतीय परिप्रेक्ष्य में बहुभाषिक संप्रेषण की दृष्टि से द्वितीय भाषा के रूप में हिंदी के पठन-पाठन का मुख्य उद्देश्य विभिन्न भाषा-भाषी क्षेत्रों के बीच संपर्क स्थापित करना तथा राष्ट्रीय भावात्मक एकता का आधार तैयार करना है।

द्वितीय भाषा के रूप में किसी भाषा के पठन-पाठन में कुछ विशेष अपेक्षाएँ निहित होती हैं। इस दृष्टि से द्वितीय भाषा-शिक्षण के उद्देश्य और प्रणाली प्रथम भाषा-शिक्षण के उद्देश्य और प्रणाली से भिन्न होते हैं।

द्वितीय भाषा का अध्ययन प्रारंभ करने से पूर्व विद्यार्थी प्रथम भाषा में पर्याप्त दक्षता हासिल कर चुका होता है। इस कक्षा तक पहुँचते-पहुँचते वह तीन वर्ष हिंदी पढ़ने के बाद नवीं कक्षा के पाठ्यक्रम को भी एक वर्ष पढ़ चुका है। आशा की जा सकती है कि अब तक के अध्ययन से विद्यार्थी में हिंदी भाषा को सुनकर

समझने, वार्तालाप करने, शुद्ध और स्पष्ट बोलने तथा लिखने की क्षमता का पर्याप्त विकास हो चुका होगा।

केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के पाठ्यक्रम के अनुसार द्वितीय भाषा के रूप में हिंदी के पठन-पाठन के दो स्तर हैं—

कक्षा छह से कक्षा आठ तक (तीन वर्षीय पाठ्यक्रम)।

कक्षा नौ से कक्षा दस तक (दो वर्षीय पाठ्यक्रम)।

इन दोनों स्तरों पर हिंदी के शिक्षण के लिए प्रति सप्ताह छह-छह पीरियड निर्धारित किए गए हैं।

उपर्युक्त व्यवस्था को ध्यान में रखते हुए द्वितीय भाषा के रूप में हिंदी-शिक्षण के लिए पाठ्यक्रम-निर्धारण एवं सामग्री-निर्माण के मार्गदर्शक-सिद्धांत निश्चित करने की आवश्यकता पड़ी। इस दृष्टि से राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् ने अखिल भारतीय स्तर पर जनवरी 1990 में हैदराबाद में शिक्षाविदों और भाषाशास्त्रियों की एक विचार-गोष्ठी का आयोजन किया था। इस गोष्ठी में केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड की अकादमिक शाखा के तत्कालीन निदेशक डॉ. कृष्णदेव शर्मा तथा बोर्ड की हिंदी पाठ्यक्रम समिति के अध्यक्ष डॉ. रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव ने भी भाग लिया था। मैं इन महानुभावों तथा विचार-गोष्ठी के अन्य प्रतिभागी विद्वानों के प्रति आभार व्यक्त करता हूँ।

इस गोष्ठी में पर्याप्त विचार-विमर्श के पश्चात् पाठ्यक्रम-निर्धारण एवं सामग्री-निर्माण के लिए निम्नलिखित मार्गदर्शक-सिद्धांत सुझाए गए :

1. पाठ्यक्रम में ऐसी पाठ्यसामग्री एवं शैक्षिक क्रियाओं का समावेश किया जाए जिससे विद्यार्थियों में राष्ट्रीय लक्ष्यों—लोकतंत्र, धर्मनिरपेक्षता, समाजवाद, सामाजिक न्याय और राष्ट्रीय एकता के प्रति चेतना एवं आस्था उत्पन्न हो और उनमें तर्कसंगत वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास हो।
2. पाठ्यचर्या एवं पाठ्यसामग्री भारतीय जीवन-परिस्थितियों तथा सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिवेश पर आधारित हो और उनमें छात्रों के वांछित विकास की दिशा भी परिलक्षित हो।
3. पाठ्यसामग्री के चयन में राष्ट्रीय शिक्षा नीति के आधारभूत सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए केंद्रीय पाठ्यचर्या से संबंधित विषय-सामग्री एवं ज़ीवन मूल्यों पर विशेष बल हो।
4. विद्यार्थियों के सांप्रतिक एवं भावी जगत को सुखद, सुंदर बनाने वाली जीवन-परिस्थितियों की ओर संकेत करने वाले पाठों का समावेश किया जाए।

5. पाठों का चयन करते समय उनकी बोधगम्यता, विधागत विविधता तथा राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में उनकी प्रासंगिकता के साथ-साथ छात्रों के मानसिक स्तर के उन्नयन एवं पठनरुचि के संवर्द्धन में उनकी उपयुक्तता को भी ध्यान में रखा जाए जिससे विद्यार्थी निर्धारित पाठ्य-विषय तक ही सीमित न रहकर विशद् एवं व्यापक अध्ययन के लिए जिज्ञासु तथा प्रयत्नशील बनें।

दसवीं कक्षा के लिए निर्धारित पाठ्यक्रम के अनुसार सामग्री-निर्माण-कार्य को इन सभी दृष्टियों से परिपूर्ण तथा प्रामाणिक बनाने के लिए जिन विषय-विशेषज्ञों, अधिकारी-विद्वानों तथा अनुभवी-शिक्षकों ने सहयोग दिया है उनके प्रति मैं हार्दिक आभार व्यक्त करता हूँ। इस कार्य में हमें दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, हैदराबाद, केंद्रीय हिंदी निदेशालय, तकनीकी एवं वैज्ञानिक शब्दावली आयोग, केंद्रीय हिंदी संस्थान, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, जामिया मिलिया इस्लामिया, केंद्रीय विश्वविद्यालय, हैदराबाद, उस्मानिया विश्वविद्यालय, कानपुर विश्वविद्यालय, गोवा विश्वविद्यालय, गढ़वाल विश्वविद्यालय, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, शिक्षा निदेशालय, दिल्ली, शिक्षा निदेशालय, तमिलनाडु तथा राष्ट्रीय ओपन स्कूल के सभी विद्वानों से समय-समय पर महत्वपूर्ण सहयोग मिला। मैं इन सभी संस्थाओं के प्रति आभार व्यक्त करता हूँ।

परिषद् के सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी शिक्षा विभाग में मेरे सहयोगी डॉ. इंद्रसेन शर्मा ने निर्धारित पाठ्यक्रम के अनुसार पाठ्यसामग्री का संयोजन और संपादन कार्य किया है। मैं उनके प्रति धन्यवाद प्रकट करता हूँ।

आशा है "मानसी भाग 2" विद्यार्थियों को हिंदी भाषा एवं साहित्य का ज्ञान प्राप्त कराने में उपयोगी सिद्ध होगी। इसमें संशोधन एवं परिष्कार के लिए विद्वान अध्यापकों एवं शिक्षाशास्त्रियों के सुझावों का स्वागत है।

डॉ. के. गोपालन

निदेशक

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्

गांधी जी का जन्तर

तुम्हें एक जन्तर देता हूं। जब भी तुम्हें सन्देह हो या तुम्हारा अहम् तुम पर हावी होने लगे, तो यह कसौटी आजमाओ :

जो सबसे गरीब और कमजोर आदमी तुमने देखा हो, उसकी शकल याद करो और अपने दिल से पूछो कि जो कदम उठाने का तुम विचार कर रहे हो, वह उस आदमी के लिए कितना उपयोगी होगा। क्या उससे उसे कुछ लाभ पहुंचेगा ? क्या उससे वह अपने ही जीवन और भाग्य पर कुछ काबू रख सकेगा ? यानि क्या उससे उन करोड़ों लोगों को स्वराज्य मिल सकेगा जिनके पेट भूखे हैं और आत्मा अतृप्त है ?

तब तुम देखोगे कि तुम्हारा सन्देह मिट रहा है और अहम् समाप्त होता जा रहा है।

भूमिका

दूसरी भाषा के रूप में हिंदी का पठन-पाठन

मातृभाषा के रूप में हिंदी का एक जनपदीय स्वरूप है जो उसके बोली-क्षेत्रों से संबंधित और सहयोजित है। इस रूप में हिंदी खड़ी बोली, ब्रज, अवधी और राजस्थानी आदि अनेक बोलियों का समुच्चय है। हिंदी का एक दूसरा रूप भी है जिसकी प्रकृति राष्ट्रीय है। अपने इस व्यापक रूप में हिंदी अन्य भारतीय भाषाओं के संपर्क-सूत्र का काम करती है और भारत की सामासिक संस्कृति की अभिव्यक्ति का साधन बनती है। द्वितीय भाषा के रूप में हिंदी के पठन-पाठन का सीधा संबंध हिंदी के इसी रूप से है। इसका अध्ययन करने वाले मूलतः ऐसे विद्यार्थी होंगे जिनकी मातृभाषा हिंदी नहीं है अथवा जिन्होंने प्रथम भाषा के रूप में हिंदी का अध्ययन नहीं किया है। स्पष्ट है कि दूसरी भाषा के रूप में हिंदी का अध्ययन करने वाले विद्यार्थियों को पहले ही एक भाषा के अध्ययन का अवसर मिल चुका होगा। दसवीं कक्षा में आने तक दूसरी भाषा के रूप में हिंदी का अध्ययन करने वाले विद्यार्थी पिछले चार वर्षों में हिंदी भाषा सीखने की प्रक्रिया से गुज़र चुके होंगे। वे हिंदी बोलने, सुनने, लिखने एवं पढ़ने आदि भाषा-कौशलों में दक्ष हो चुके होंगे, साथ ही हिंदी साहित्य के विभिन्न रूपों और क्षेत्रों में भी उनका प्रवेश हो चुका होगा। प्रस्तुत पुस्तक तैयार करते समय इन सब बातों का ध्यान रखा गया है।

शैक्षिक उद्देश्य एवं पाठ्य-वस्तु (गद्य)

प्रमुखतः हिंदी भाषा तथा गौणतः हिंदी साहित्य से संबंधित विद्यार्थियों के पूर्व अर्जित ज्ञान को संवर्धित एवं पुष्ट करने में सहायक होना प्रस्तुत पुस्तक का प्रमुख उद्देश्य है। पाठ-चयन में यह ध्यान रखा गया है कि शिक्षार्थियों को हिंदी भाषा की संरचनाओं की इतनी जानकारी और अभ्यास हो जाए कि वे हिंदी भाषा के माध्यम से विभिन्न भाषा-भाषी क्षेत्रों के बीच संपर्क स्थापित कर सकें। मित्रों और संबंधियों को पत्र लिख सकें। दूरदर्शन, रेडियो एवं समाचार-पत्र आदि दूर-संचार के माध्यमों के प्रसारण को अर्थ-बोध के साथ सुन [illegible] दिन-प्रतिदिन

के कार्य-कलापों में हिंदी भाषा का यथावश्यक लिखित एवं मौखिक प्रयोग कर सकें। अपनी भाषा में पढ़ी हुई बात को हिंदी में और हिंदी में पढ़ी हुई बात को प्रथम भाषा में लिख और बोल सकें। अंततः उद्देश्य यही है कि उनमें प्रथम भाषा से हिंदी में और हिंदी से प्रथम भाषा में विचार व्यक्त कर सकने की क्षमता भी आ सके। वे दोनों भाषाओं के साहित्यकारों और रचनाओं की तुलना कर सकें। विविधताओं से भरे इस राष्ट्र की सामासिक संस्कृति से परिचित हो सकें और दूर-दराज़ के निवासियों के साथ भावनात्मक रूप से जुड़ सकें।

यह भी ध्यान रखा गया है कि विद्यार्थियों में लोकतांत्रिकता, राष्ट्रप्रेम, सर्वधर्म समभाव, सामाजिक समता, पारस्परिक सौहार्द, स्त्री-पुरुष समानता तथा वैज्ञानिक दृष्टिकोण आदि राष्ट्रीय मूल्यों के प्रति चेतना जग सके।

गद्य में निबंधों के अतिरिक्त आत्मकथा, व्यंग्य, कहानी, रेखाचित्र, यात्रा-वृत्तांत व एकांकी विधाओं के समावेश से जहाँ विद्यार्थी विविध विधाओं से परिचित हो सकेंगे, वहीं पाठ्यवस्तु की रोचकता और विविधता उन्हें पढ़ने के लिए आकृष्ट कर सकेगी। चयन में यह भी ध्यान रखा गया है कि पाठों की भाषा सरल, सुबोध और स्तरानुकूल हो तथा वह विविध भाषिक संरचनाओं और प्रयोगों से युक्त हो।

उक्त उद्देश्यों और मूल्यों की संप्राप्ति में सहायक संकलित पाठों की विषय-वस्तु की ओर भी यहाँ कुछ संकेत देना उपयोगी होगा। 'मेरी जीवन रेखा' आत्मकथा में मानव जीवन की सफलता के लिए दृढ़-संकल्प, आत्म-विश्वास, विनम्रता और आत्म-निरीक्षण जैसे गुणों की आवश्यकता पर बल दिया गया है। "मेरी अंतिम अभिलाषा" में जवाहरलाल नेहरू की उस उत्कट और उदार अभिलाषा की अभिव्यक्ति हुई है जिसमें वे अपनी भस्म को किसी देवता के चरणों में चढ़ाने की बात नहीं करते, बल्कि उसे भारत की मिट्टी में बिखेरने की बात करते हैं ताकि वह उसका एक अभिन्न अंग बन सके। "इब्राहिम गार्दी" कहानी में मराठा-काल की उत्कट देश-भक्ति की भावना व्यक्त हुई है। साथ ही गार्दी की कर्तव्यनिष्ठा और प्रलोभन के सामने न झुकने का गुण भी अनुकरणीय है। सामाजिक सद्भाव और हिंदू-मुस्लिम सौहार्द के लिए "सुभान खाँ" रेखाचित्र पठनीय है। नारी की मनोव्यथा और पुरुष की निर्ममता को व्यक्त करती है—"अकेली" कहानी। यह अंततः स्त्री-पुरुष समानता के लिए प्रेरित करती है और नारी में विद्यमान सामाजिकता के भाव को उजागर करती है। "भारतीय संस्कृति में गुरु-शिष्य संबंध" निबंध जहाँ आज की शिक्षा में बढ़ती हुई व्यावसायिकता की प्रवृत्ति पर गहरी चोट करता है, वहीं भारतीय संस्कृति में विद्यमान गुरु-शिष्य के पावन-संबंधों की जानकारी भी देता है। "पहली चूक" में ऐसे लोगों पर कराना व्यंग्य किया गया है जो महानगरों में बैठकर ग्रामीण जीवन और कृषि-कर्म की

आवश्यकता और महत्ता की चर्चा करते नहीं थकते और भावी पीढ़ी को गाँवों में रहकर खेती करने के लिए भाषण झाड़ते हैं किंतु स्वयं ग्रामीण जीवन, वहाँ के खेतों, फसलों और वहाँ की समस्याओं के विषय में एकदम अनभिज्ञ हैं।

"अपना-अपना भाग्य" कहानी में समाज के उस संपन्न वर्ग पर चोट की गई है, जो समुचित वस्त्रों के अभाव में ठिठुरते बच्चे को देखकर मौखिक सहानुभूति तो प्रकट करते हैं, किंतु उस स्थिति को उसके भाग्य का दोष मानकर उसकी सहायता करने के लिए आगे नहीं आते। "बीमार का इलाज" एकांकी बड़े मनोरंजक ढंग से परिवार के विभिन्न सदस्यों की अविवेकपूर्ण आस्थाओं और लिजलिजी भावनाओं का भंडाफोड़ करता है। "व्यवहार-कुशलता" निबंध में बतलाया गया है कि निराश और पराजित व्यक्ति को दिया गया प्रोत्साहन, सहानुभूति एवं प्रेम उसके तमाम अवसाद को दूर ही नहीं करता, बल्कि उसे सफलता के उच्च शिखरों तक भी पहुँचा देता है। "क्या निराश हुआ जाए" निबंध जहाँ जीवन में आशावादिता की झलक देता है, वहाँ बुराई के स्थान पर अच्छाई देखने की प्रवृत्ति के महत्व को भी रेखांकित करता है। "सागर-तट के आस-पास" यात्रा-वृत्तांत बच्चों को बंगाल और उड़ीसा के अपेक्षाकृत कम चर्चित दीघा और रतनपुर के सागर-तटों की यात्रा के लिए प्रेरित करता है और वहाँ की प्रकृति, वनस्पति और लोक-जीवन की जानकारी देता है। इस प्रकार पाठ्यसामग्री का चयन युग की माँग और आवश्यकता के अनुकूल किया गया है।

गद्य पाठों का अध्ययन-अध्यापन

इन पाठों को पढ़ाते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि ऐसी शिक्षण-विधि अपनाई जाए जिससे पाठों की समग्र संवेदना उजागर हो उठे। साथ ही यह भी ध्यान रखना होगा कि निबंध, कहानी और एकांकी आदि विभिन्न विधाओं के शिक्षण का ढंग भी किंचित भिन्न हो। निबंधों में जहाँ विषय-वस्तु के बोध को हृदयंगम कराने और कठिन शब्दों, वाक्यांशों और संदर्भों की व्याख्या की आवश्यकता होगी, वहीं विभिन्न भाषिक प्रयोगों और संरचनाओं का अभ्यास भी जरूरी होगा। कहानी में घटनासूत्र और चरित्र की विशेषताओं पर बल देना होगा। एकांकी में संवादों और नाटक की अभिनेयता पर अधिक ध्यान देना होगा।

पाठों के प्रारंभ में पाठों का सारांश दिया गया है। इससे न केवल पाठ के केंद्रीय भाव तथा विचार की जानकारी होगी, बल्कि शिक्षण-बिंदु निर्धारित करने में भी सहायता मिलेगी। पाठ के अंत में "विचार-बोध" के प्रश्न दिए गए हैं। इन प्रश्नों के उत्तरों की खोज के प्रसंग में पाठ की समग्र संवेदना विद्यार्थियों के स्तर के अनुरूप खुलकर सामने आ जाएगी। "भाषा-प्रयोग" के अंतर्गत दिए गए प्रश्न विद्यार्थियों की भाषिक कुशलताओं को विकसित करने में सहायक होंगे। "योग्यता-

विस्तार" में बच्चों की रचनात्मक क्षमता, मौखिक एवं लिखित अभिव्यक्ति, उनकी मौलिक कल्पना एवं चिंतन तथा अध्ययन के विस्तार की प्रवृत्ति को विकसित किए जाने का प्रयत्न किया गया है। निर्धारित पाठ्यक्रम के अनुसार सार-लेखन, अनुच्छेद-लेखन, संवाद-लेखन, भाव-पल्लवन एवं रूपरेखा देकर कहानी तथा निबंध-लेखन के अवसर भी संकेतित हैं।

शैक्षिक उद्देश्य एवं पाठ्यवस्तु (पद्य)

द्वितीय भाषा में पद्य-शिक्षण के उद्देश्य गद्य-शिक्षण से कुछ भिन्न होंगे। कविता मूलतः पाठक की भावनाओं को उदात्त बनाती है, उसके सौंदर्य-बोध में परिष्कार लाती है और उसे परिवेश से जोड़ती है। किशोर विद्यार्थियों की भावनाओं का परिष्करण, उनमें संवेदनशीलता तथा सुरुचि का विकास करना भी कविता-शिक्षण के क्षेत्र में आता है। सौंदर्यानुभूति और विवेचन-क्षमता कविता-पठन के अतिरिक्त लाभ हैं। इन सभी उद्देश्यों को कविता-शिक्षण का आधार बनाया जाना चाहिए।

यह उल्लेखनीय है कि द्वितीय भाषा के रूप में हिंदी पढ़ने वाला विद्यार्थी अपनी प्रथम भाषा की कविताओं से सुपरिचित होगा। अतः द्वितीय भाषा की कविताएँ पढ़ते हुए उसे यह अवसर दिया जाना चाहिए कि वह इन कविताओं के भाव, विचार तथा शिल्प-सौंदर्य की तुलना अपनी प्रथम भाषा की कविताओं से कर सके। प्रयास यह होना चाहिए कि विद्यार्थी में धीरे-धीरे ऐसी क्षमता का विकास हो सके कि वह कविता की मूल संवेदना को सहज रूप में ग्रहण कर सके और उसे अपने शब्दों में व्यक्त कर सके।

उपर्युक्त उद्देश्यों को सामने रखकर ही प्रस्तुत संकलन की कविताएँ चुनी गई हैं। तुलसीदास, नरोत्तमदास और रहीम की कविताओं की भाषा जनभाषा के निकट किंतु आज की हिंदी से कुछ भिन्न है। इसके अतिरिक्त इनकी भावभूमि देशभर की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि को आधार प्रदान करती है। इससे कटकर हिंदी कविता निर्मूल पौधे-सी लगती है। अतः "मानसी भाग 2" में इसके समावेश का मुख्य कारण विद्यार्थियों को सार्वदेशिक संस्कृति से परिचित कराना है।

आधुनिक हिंदी कवियों में सात प्रमुख कवियों की कविताओं का परिचय विद्यार्थी "मानसी भाग 1" में प्राप्त कर चुके हैं। इस संकलन में भी हिंदी के आठ अन्य कवियों की ऐसी कविताएँ ली गई हैं जिनसे वे कविता की भाव-विविधता से परिचित हो सकेंगे। ये कविताएँ राष्ट्रीय शिक्षा नीति में सुझाए गए बिंदुओं का भी स्पर्श करती हैं। संकलित कविताओं के माध्यम से छात्र समसामयिक जीवन, राष्ट्रीय चेतना, सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, मैत्री, नैतिकता, श्रम की प्रतिष्ठा, कर्तव्यपालन, उत्साह, प्रकृति-प्रेम जैसे मूल्यों और गुणों से परिचित हो सकेंगे।

संकलित कविताओं में जहाँ "रहीम के दोहे" लोकनीति और मानव-मूल्यों पर

बल देते हैं वहीं तुलसीदास की रचना "केवट की चाह" में केवट की अनन्य भक्ति और बोलने की चतुराई का परिचय मिलता है। नरोत्तमदास का "सुदामाचरित" मित्रता, समानता, स्वाभिमान और परोपकार जैसे मूल्यों को स्थापित करता है। "हरिऔध" की कविता "कर्मवीर" कर्मठता और उत्साह की भावमा को जगाने वाली कविता है। सियारामशरण गुप्त की "एक फूल की चाह" छुआछूत जैसी सामाजिक बुराई और धार्मिक पाखंड के अमानवीय पक्ष को उजागर करती है। "निराला" की रचना 'प्रियतम" विष्णु और नारद जैसे पौराणिक पात्रों के माध्यम से यह स्थापित करती है कि उत्तरदायित्व निभाते हुए ईश्वर का स्मरण करने वाला भक्त अकर्मण्य भक्त से श्रेष्ठ है। गोपाल सिंह नेपाली की कविता 'हिमालय और हम" ओज और आत्मगौरव की कविता है। हरिवंशराय "बच्चन" की रचना "गीत मेरे" में कवि अपनी कविता के माध्यम से अपने अंदर के और बाहरी जगत के अंधकार को दूर करने की आकांक्षा प्रकट करता है। भवानीप्रसाद मिश्र की छोटी-सी रचना "इसे जगाओ" में मनुष्य को सतत जागरूक रहकर अवसर का लाभ उठाने का संदेश बड़ी ही कुशलता से दिया गया है। "नागार्जुन" की "अकाल और उसके बाद" यों तो छोटी-सी रचना है, पर अकाल की विभीषिका और उसके प्रभाव का एक मर्मस्पर्शी चित्र खींचती है।

सभी भारतीय भाषाएँ एक ही सांस्कृतिक दाय का वहन करती हैं, अतः भाषाई आवरण के पीछे इनकी चेतना और स्वर समान है। यह बात तब और भी अधिक स्पष्ट हो जाती है जब हम समकालीन साहित्यकारों की अनूदित रचनाएँ पढ़ते हैं। इसी की झलक देने के लिए दो सुप्रसिद्ध भारतीय कवियों— रवीन्द्रनाथ ठाकुर (बाङ्ला) तथा सुब्रह्मण्यम भारती (तमिल) की एक-एक अनूदित रचना का समावेश भी किया गया है। रवीन्द्र की कविता "पुजारी! भजन, पूजन और साधन" में श्रमिक और उसके श्रम की प्रतिष्ठा को रेखांकित किया गया हैं तो भारती की रचना "यह है भारत देश हमारा" में देश की गौरव गाथा को।

कविता पाठों का अध्ययन-अध्यापन

कविता-शिक्षण के सैद्धांतिक पक्ष की विवेचना "मानसी भाग 1" में कर दी गई है। वस्तुतः काव्य-शिक्षण के उद्देश्यों की संप्राप्ति के लिए विद्यार्थी को वहाँ तक ले जाने में कुछ सोपानों का अनुपालन आवश्यक है। उचित लय और प्रवाहपूर्ण वाचन के साथ कविता की प्रस्तुति उसकी पहली शर्त है। संकलन की कुछ कविताएँ विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। सियारामशरण गुप्त की कविता "एक फूल की चाह" में संवादात्मकता है जो वाचन में अभिव्यक्त होना चाहिए। "हिमालय और हम" (नेपाली) तथा "यह है भारत देश हमारा" (भारती) कविता के वाचन में स्वर का ओजपूर्ण होना आवश्यक है। प्राचीन कवियों (तुलसी, रहीम,

नरोत्तमदास) की रचनाओं का उचित वाचन कक्षा में एक विशेष वातावरण के निर्माण में सहायक होगा। भवानीप्रसाद मिश्र की संकलित कविता की मूल संवेदना भी उचित वाचन के द्वारा ही उद्घाटित की जा सकती है। अतः छात्रों को कविता के आदर्श एवं अनुकरण-वाचन के पर्याप्त अवसर दिए जाने चाहिए।

सस्वर वाचन के बाद प्रश्नोत्तर-विधि के द्वारा कविता में अंतर्निहित सौंदर्य को स्पष्ट करना उपयुक्त रहेगा। यह भी ध्यान में रखना होगा कि कविता का मूल भाव किसी एक पद या पंक्ति में न होकर समग्र कविता में व्याप्त होता है, साथ ही उसके बोधन के लिए कविता की खंड-खंड इकाइयों से गुज़रना भी ज़रूरी होता है। किंतु भावार्थ-ग्रहण करने के लिए पंक्तिशः व्याख्या करना ठीक नहीं। प्रश्नोत्तर विधि से अंतर्निहित सौंदर्य को स्पष्ट करना चाहिए। इसमें कविता के अंत में दिए गए प्रश्न-अभ्यास सहायक होंगे।

कविताओं के प्रश्न-अभ्यास कुछ इस प्रकार बनाए गए हैं कि वे कविता के भाव और विचार को स्पष्ट करने के साथ-साथ विद्यार्थी को अभिव्यक्ति का अवसर भी प्रदान कर सकेंगे। दैनंदिन व्यवहार में भाषा बोली अधिक जाती है, लिखी कम जाती है। इसलिए प्रश्नों के लिखित उत्तरों पर बल देने की अपेक्षा उनके उत्तर छात्रों से बुलवाए जाएँ। कुछ प्रश्न तो केवल मौखिक अभिव्यक्ति के लिए ही बनाए गए हैं। प्रयास यह भी किया गया है कि वस्तुनिष्ठ, लघूत्तर और निबंधात्मक सभी प्रकार के प्रश्नों से छात्रों का परिचय हो सके। योग्यता-विस्तार का उद्देश्य भी मौखिक और लिखित अभिव्यक्ति का कौशल विकसित करना है। प्रयास यह किया जाना चाहि[illegible] के [illegible] रोचक और सर्जनात्मक बनाया जाए तथा विद्यार्थी के जीवन और अनुभव-संसार के निकट रखा जाए। इसी दृष्टि से संवाद-लेखन, रचना-विस्तार, भाव पल्लवन आदि से संबंधित अभ्यास दिए गए हैं।

इस प्रकार उपर्युक्त संकेतों के अनुसार इन कविताओं का अध्ययन-अध्यापन सुगम और उपयोगी होगा।

अनुक्रमणिका

गद्य

कविता

गद्य

भगवती प्रसाद वाजपेयी

भगवती प्रसाद वाजपेयी का जन्म कानपुर जिले के मंगलापुर गाँव में सन् 1899 ई. में हुआ। बचपन में ही उनके माता-पिता की मृत्यु हो गई थी। इसी कारण उन्हें मिडिल (आठवीं कक्षा) तक ही नियमित शिक्षा मिल सकी। जीविका चलाने के लिए उन्होंने अनेक कार्य किए—जैसे पशु चराना, खेती करना, पुस्तकालय की नौकरी, छापेखाने में प्रूफरीडरी, अध्यापन आदि। अपनी साहित्य-सेवा के कारण वे हिन्दी साहित्य-सम्मेलन की साहित्य-परिषद के सभापति भी चुने गए।

वाजपेयी जी प्रेमचन्द जी के बाद की पीढ़ी के साहित्यकार हैं। उन्होंने कहानी, उपन्यास, नाटक, कविता आदे विधाओं में काफी साहित्य लिखा है। उनकी मुख्य देन कथा-साहित्य के क्षेत्र में है। उन्होंने सामाजिक और मनोवैज्ञानिक विषयों पर अनेक कहानियाँ लिखी हैं। उनके पात्र मध्यम वर्ग के हैं। उनकी भाषा सहज और प्रवाहमयी है। बालोपयोगी साहित्य तथा संपादन के क्षेत्र में भी उनका काफी योगदान है। उन्होंने 'ऊर्मि', 'आरती' आदि पत्रिकाओं का संपादन भी किया।

प्रेमपथ, त्यागमयी, मनुष्य और देवता, विश्वास का बल, हिरन की आँखें आदि उपन्यास तथा मधुपर्क, हिलोर, दीपमालिका, मेरे सपने, बाती और लौ, उपहार आदि कथा-संग्रह वाजपेयी जी की प्रमुख रचनाएँ हैं।

1

मिठाईवाला

[प्रस्तुत कहानी के माध्यम से लेखक ने एक ऐसे धनी और प्रतिष्ठित व्यक्ति की मनःस्थिति का वर्णन किया है, जिसने असमय ही अपने बच्चों को खो दिया। अपने बच्चों की झलक अन्य बच्चों में देखने के लिए वह उन्हें लुभाने वाली चीजें, जैसे – मिठाई, मुरली आदि बेचता है। बच्चे उससे ये चीजें खरीदकर खुश होते हैं। उनकी खुशी में वह अपने बच्चों की खुशी देखता है। वात्सल्य की इस अनुभूति में उसे संतोष प्राप्त होता है।]

बहुत ही मीठे स्वर में वह गलियों में घूमता हुआ कहता, "बच्चों को बहलानेवाला, खिलौनेवाला।"

इस अधूरे वाक्य को वह ऐसे विचित्र, किन्तु मधुर ढंग से गाकर कहता कि सुनने वाले एक बार चंचल हो उठते। उसके स्नेहाभिषिक्त कंठ से फूटा हुआ उपर्युक्त गान सुनकर निकट के मकानों में हलचल मच जाती। छोटे-छोटे बच्चों को अपनी गोद में लिए स्त्रियाँ चिकों को उठाकर छज्जों पर से नीचे झाँकने लगतीं। गलियों तथा उनके अंतर्व्यापी छोटे-छोटे उद्यानों में खेलते और इठलाते हुए बच्चों का झुंड उसे घेर लेता और तब वह खिलौनेवाला वहीं-कहीं बैठकर खिलौनों की पेटी खोल देता।

बच्चे खिलौने देखकर पुलकित हो उठते। वे पैसे लाकर खिलौने के मोल-भाव करने लगते। पूछते, "इसका दाम क्या है, औरं इछका, औल इछका ?"

खिलौनेवाला बच्चों को देखता, उनकी नन्हीं-नन्हीं उँगलियों और हथेलियों से पैसे लेता और बच्चों की इच्छानुसार उन्हें खिलौने दे देता। खिलौने लेकर बच्चे उछलने-कूदने लगते। उसके बाद खिलौनेवाला

उसी प्रकार गाकर कहता, "बच्चों को बहलानेवाला, खिलौनेवाला।" सागर की हिलोर की भाँति उसका यह मादक गान गली-पार के मकानों में इस ओर से उस ओर तक लहराता हुआ पहुँचता और खिलौनेवाला बढ़ जाता।

राय विजय बहादुर के बच्चे भी एक दिन खिलौने लेकर घर आए। वे दो बच्चे थे— चुन्नू और मुन्नू। चुन्नू जब खिलौने ले आया तो बोला, "मेला घोला कैछा छुंदल ऐ।"

मुन्नू बोला, "औल देथो, मेला आती कैछा छुंदल ऐ !"

दोनों अपने हाथी-घोड़े लेकर घर-भर में उछलने लगे। इन बच्चों की माँ रोहिणी कुछ देर तक खड़े-खड़े उनका खेल निरखती रही। अंत में दोनों बच्चों को बुलाकर उसने उनसे पूछा, —"अरे ओ चून्नू-मून्नू, ये खिलौने तुमने कितने में लिए हैं ?"

मुन्नू बोला, "दो पैछे में खिलौनेवाला दे गया ऐ।"

रोहिणी सोचने लगी, "इतने सस्ते कैसे दे गया ?"

कैसे दे गया है, यह तो वही जाने। लेकिन दे तो गया ही है, इतना तो निश्चय है। जरा सी बात ठहरी। रोहिणी अपने काम में लग गई। फिर कभी इस पर उसे विचार करने की भला आवश्यकता ही क्यों पड़ती ?

छह महीने बाद।

नगर भर में एक मुरलीवाले के आने का समाचार फैल गया। लोग कहने लगे, "भई वाह ! मुरली बजाने में वह एक ही उस्ताद है। मुरली बजाकर, गाना-सुनाकर, वह मुरली बेचता भी है। सो भी दो-दो पैसे। भला, इसमें उसे क्या मिलता होगा ? मेहनत भी तो न आती होगी !" एक व्यक्ति ने कहीं पूछ लिया, "कैसा है वह मुरलीवाला, मैंने तो उसे नहीं देखा।"

उत्तर मिला, "उम्र तो उसकी अभी अधिक न होगी, यही कोई तीस-चालीस का होगा। दुबला-पतला गोरा युवक है, बीकानेरी रंगीन साफा बाँधता है।"

"वही तो नहीं, जो पहले खिलौने बेचा करता था ?"

"तो क्या वह पहले खिलौने भी बेचता था ?"

"हाँ, जो आकार-प्रकार तुमने बतलाया, उसी प्रकार का वह भी था।"

"तो वही होगा। पर भई, है वह एक ही उस्ताद !"

प्रतिदिन इसी प्रकार उस मुरलीवाले की चर्चा होती। प्रतिदिन नगर की प्रत्येक गली में उसका मादक-मृदुल स्वर सुनाई पड़ता, "बच्चों को बहलानेवाला, मुरलियावाला।"

रोहिणी ने भी मुरलीवाले का यह स्वर सुना। तुरंत ही उसे खिलौनेवाले का स्मरण हो आया। उसने मन-ही-मन कहा, "खिलौनेवाला भी इसी प्रकार गाकर खिलौने बेचा करता था।"

रोहिणी उठकर अपने पति विजय बाबू के पास गई, बोली, "ज़रा उस मुरलीवाले को बुलाओ तो, मैं भी चुन्नू-मुन्नू के लिए ले लूँ। क्या जाने वह फिर इधर आए, न आए। जान पड़ता है बच्चे पार्क में खेलने निकल गए हैं।"

विजय बाबू समाचार-पत्र पढ़ रहे थे। उसी तरह उसे लिए हुए वे दरवाजे पर आकर मुरलीवाले से बोले, "क्यों भाई, किस भाव देते हो मुरली ?"

मुरलीवाले की आवाज सुनकर दौड़ते-दौड़ते बच्चों का झुंड भी आ पहुँचा। एक स्वर से बोल उठे, "अम बी लेंदे मुरली, अम बी लेंदे मुल्ली !"

मुरलीवाला हर्ष से गद्‌गद् हो उठा। बोला, "सबको देंगे भैया। लेकिन ज़रा रूको, ज़रा ठहरो, एक-एक को लेने दो। अभी इतनी जल्दी हम कहीं लौट थोड़े ही जाएँगे। बेचने ही तो आए हैं, और हैं भी इस समय मेरे पास एक-दो नहीं, पूरी सत्तावन। . . . . हाँ बाबूजी, क्या पूछा था आपने, "कितने में दी ?" . . . दी तो वैसे तीन-तीन पैसे के हिसाब से हैं, पर आपको दो-दो पैसे में दे दूँगा।"

विजय बाबू भीतर-बाहर दोनों रूपों से मुस्करा दिए। मन-ही-मन कहने लगे, कैसा ठग है ! देता सबको इसी भाव से है, पर मुझ पर उल्टा एहसान लाद रहा है। फिर बोले, "तुम लोगों की झूठ बोलने

की आदत हो जाती है। देते होगे सभी को दो-दो पैसे में, एहसान का बोझ मुझ पर लाद रहे हो।"

मुरलीवाला एकदम अप्रतिभ हो उठा। बोला, "आपको क्या पता बाबूजी कि इनकी असली लागत क्या है। यह तो ग्राहकों का दस्तूर होता है कि दुकानदार चाहे हानि ही उठाकर चीज़ क्यों न बेचे, पर ग्राहक यही समझते हैं, दुकानदार मुझे लूट रहा है ! . . .आप भला काहे को विश्वास करेंगे। लेकिन सच पूछिए तो बाबूजी, इनका असली दाम तीन ही पैसा है। आप क़हीं से भी दो-दो पैसे में ये मुरलियाँ नहीं पा सकेंगे। मैंने तो पूरी एक हज़ार बनवाई थीं, तब मुझे इस भाव पड़ी हैं।"

विजय बाबू बोले, "अच्छा-अच्छा, बहस के लिए मेरे पास ज्यादा वक्त नहीं, जल्दी से दो निकाल दो।"

दो मुरलियाँ लेकर विजय बाबू फिर मकान के भीतर जा पहुँचे।

मुरलीवाला देर तक उन बच्चों के झुंड में मुरलियाँ बेचता रहा। उसके पास कई रंग की मुरलियाँ थीं। बच्चे जो पसंद करते, मुरलीवाला वही मुरली दे देता।

"यह बड़ी अच्छी मुरली है, तुम यही ले लो बाबू, राजाबाबू, तुम्हारे लायक तो बस यही है। . . . हाँ, भैये, तुमको वही देंगे। ये लो। . . . तुमको वैसी न चाहिए, यह नारंगी रंग की, अच्छा यह लो। . . पैसे नहीं हैं ? अच्छा अम्मा से पैसे लाओ। मैं अभी बैठा हूँ। तुम ले आए पैसे ? . . . . . अच्छा, ये लो, तुम्हारे लिए मैंने पहले ही से निकाल रखी है। . . . तुमको पैसे नहीं मिले ? तुमने अम्मा से ठीक तरह माँगे न होंगे। धोती पकड़कर पैर से लिपटकर, अम्मा से पैसे माँगे जाते हैं, बाबू ! हाँ फिर जाओ। अबकी बार मिल जाएँगे। . . . दुअन्नी है ? तो क्या हुआ, ये छह पैसे वापस लो। ठीक हो गया न हिसाब ? . . . मिल गए पैसे ? देखो , मैंने कैसी तरकीब बताई। अच्छा अब तो किसी को नहीं लेना है ? . . . अच्छा, तुम भी यह लो। तो अब मैं चलता हूँ।"

इस तरह मुरलीवाला मुरली बजाता हुआ आगे बढ़ गया।

आज अपने मकान में बैठी हुई रोहिणी मुरलीवाले की सब बातें सुनती रही। आज भी उसने अनुभव किया, बच्चों के साथ इतने प्यार से बातें करनेवाला कोई फेरीवाला कभी पहले नहीं आया। फिर वह सौदा भी कैसा सस्ता बेचता है। भला आदमी जान पड़ता है। समय की बात है जो बेचारा इस तरह मारा-मारा फिरता है। पेट जो न कराए, सो थोड़ा।

इसी समय मुरलीवाले का क्षीण स्वर निकट की गली में सुनाई पड़ा, "बच्चों को बहलानेवाला, मुरलीवाला।"

रोहिणी इसे सुनकर मन-ही-मन कहने लगी, स्वर कैसा मीठा है इसका !

बहुत दिनों तक रोहिणी को मुरलीवाले का वह मीठा स्वर और उसकी बच्चों के प्रति वे स्नेहसिक्त बातें याद आती रहीं। महीने-के-महीने आए और चले गए, पर मुरलीवाला जब न आया तो धीरे-धीरे उसकी स्मृति भी क्षीण हो गई।

आठ मास बाद।

सरदी के दिन थे। रोहिणी स्नान करके अपने कमरे की छत पर चढ़कर बाल सुखा रही थी। इसी समय नीचे की गली में सुनाई पड़ा, "बच्चों को बहलानेवाला, मिठाईवाला।"

मिठाईवाले का स्वर उसके लिए परिचित था। झट से रोहिणी नीचे उतर आई। उस समय उसके पति मकान में न थे। हाँ, वृद्धा दादी थीं। रोहिणी उनके निकट आकर बोली, "दादी, चुन्नू-मुन्नू के लिए मिठाई लेनी है। ज़रा कमरे में चलकर ठहराओ तो। मैं इधर कैसे जाऊँ, कोई आता न हो ! ज़रा हटकर मैं भी चिक की ओट में बैठी रहूँगी।"

दादी उठकर बोलीं, "मिठाईवाले ! इधर आना।"

मिठाईवाला निकट आ गया, बोला, कितनी मिठाई दूँ माँ ? ये नई तरह की मिठाइयाँ हैं— रंग-बिरंगी, कुछ-कुछ खट्टी, कुछ-कुछ मीठी, जायकेदार, बड़ी देर तक मुँह में टिकती हैं। जल्दी नहीं घुलतीं, बच्चे इन्हें बड़े चाव से चूसते हैं। इन गुणों के सिवा यह खाँसी भी

दूर करती है। कितनी दूँ ? चपटी, गोल और पहलदार कई तरह की गोलियाँ हैं। पैसे की सोलह देता हूँ।"

दादी बोलीं, "सोलह तो बहुत कम होती हैं, भला पच्चीस तो दे।"

मिठाईवाला बोला, "नहीं दादी, अधिक नहीं दे सकता, इतनी भी कैसे देता हूँ, यह अब तुम्हें क्या बताऊँ . . .। खैर, मैं अधिक न दे सकूँगा।"

रोहिणी दादी के पास बैठी थी, बोली, "दादी, फिर भी काफी सस्ती दे रहा है। चार पैसे की ले लो। ये पैसे रहे।"

मिठाईवाला मिठाइयाँ गिनने लगा।

"चार पैसे की दे दो। अच्छा, पच्चीस न सही बीस ही दो। अरे हाँ मैं बूढ़ी हुई, मोल-भाव यों भी मुझे करना आता नहीं।" कहते हुए दादी के पोपले मुँह की मुस्कराहट भी थोड़ी फूट निकली।

रोहिणी ने दादी से कहा, "दादी, इससे पूछो, तुम इस शहर में और भी कभी आए थे, या पहली बार आए हो, यहाँ के निवासी तो तुम हो नहीं।"

दादी ने इस कथन को दुहराने की चेष्टा की थी कि मिठाईवाले ने उत्तर दिया, "पहली बार नहीं, और भी कई बार आ चुका हूँ।"

रोहिणी चिक की आड़ ही से बोली, "पहले यही मिठाई बेचते हुए आए या और कोई चीज़ लेकर ?"

मिठाईवाला हर्ष, संशय और विस्मयादि भावों में डूबकर बोला, "इससे पहले मुरली लेकर आया था और उससे पहले खिलौने लेकर।"

रोहिणी का अनुमान सही निकला। तब वह उससे कुछ और बातें पूछने के लिए अस्थिर हो उठी। बोली, "इस व्यवसाय में भला तुम्हें क्या मिलता होगा ?"

वह बोला, "मिलता भला क्या है। यही, खाने-भर को मिल जाता है। कभी नहीं भी मिलता है। पर हाँ, संतोष, धीरज और असीम सुख जरूर मिलता है और मैं यही चाहता भी हूँ।"

"सो कैसे ? वह भी तो बताओ।"

"अब व्यर्थ उन बातों की चर्चा क्यों करूँ ? उन्हें आप जाने ही दें। उन बातों को सुनकर आपको दुःख ही होगा।"

"जब इतना बताया है, तब और भी बता दो, मैं बहुत उत्सुक हूँ। तुम्हारा हर्जा न होगा। मिठाई मैं कुछ और भी ले लूँगी।"

तब अतिशय गंभीरता के साथ मिठाईवाले ने कहा, "मैं भी अपने नगर का एक प्रतिष्ठित आदमी था। मकान, व्यवसाय, गाड़ी-घोड़े, नौकर-चाकर, सभी कुछ था। बाहर संपत्ति का वैभव था, भीतर सांसारिक सुख का आनंद। स्त्री सुंदर थी, मेरी प्राण थी। बच्चे ऐसे सुंदर थे, जैसे सोने के सजीव खिलौने। उनकी अठखेलियों के मारे घर में कोलाहल मचा रहता था। समय की गति ! विधाता की लीला ! अब कोई नहीं है। बहन, प्राण निकाले नहीं निकले, इसलिए अपने उन बच्चों की खोज में निकला हूँ। वे सब अंत में होंगे तो यहीं कहीं। आखिर कहीं-न-कहीं जन्मे ही होंगे। उस तरह रहता, घुल-घुलकर मरता। इस तरह संतोष-सुख के साथ मरूँगा। इस तरह के जीवन में मुझे कभी-कभी अपने उन बच्चों की झलक-सी मिल जाती है। जान पड़ता है, जैसे वे इन्हीं में उछल-उछलकर हँस-खेल रहे हैं। पैसे की कमी थोड़े है, आपकी दया से पैसे तो काफी हैं। जो नहीं है, इस तरह उसी को पा जाता हूँ।"

रोहिणी ने मिठाईवाले की ओर देखा। देखा, उसकी आँखें आँसुओं से तर हैं।

इसी समय चुन्नू-मुन्नू आ गए। रोहिणी से लिपटकर उसका आँचल पकड़कर बोले, "अम्मा, मिठाई।"

"मुझसे ले लो।" कहकर, मिठाईवाले ने तत्काल कागज की दो पुड़ियाँ मिठाइयों से भरी, चुन्नू-मुन्नू को दे दीं।

रोहिणी ने भीतर से पैसे फेंक दिए।

मिठाईवाले ने पेटी उठाई और कहा, "अब इस बार ये पैसे न लूँगा।"

दादी बोलीं, "अरे-अरे, अपने पैसे लिए जा भाई।"

तब तक आगे फिर सुनाई पड़ा। उसी प्रकार मादक, मृदुल स्वर "बच्चों को बहलानेवाला, मिठाईवाला !"

प्रश्न-अभ्यास

I. विचार-बोध

1. खिलौनेवाले की मधुर आवाज़ का बच्चों पर क्या प्रभाव पड़ता था ?
2. नगर-भर में मुरलीवाले के आने का समाचार क्यों फैल गया ?
3. रोहिणी को मिठाईवाले का स्वर सुनकर खिलौनेवाले और मुरलीवाले का स्मरण क्यों हो आया ?
4. मिठाईवाले ने अपनी मिठाइयों की क्या-क्या विशेषताएँ बताईं ?
5. मिठाईवाले को अपने व्यवसाय में पैसे के अलावा और क्या मिलता था ?
6. रोहिणी को मिठाईवाले के सबंध्र में जानने की उत्सुकता क्यों थी ?
7. फेरीवाले को गली के बच्चों पर ममता क्यों थी ?
8. मिठाईवाला बच्चों के लिए ही चीजें लेकर क्यों आता था? सही उत्तर छाँटिए–

(क) वह अधिक पैसा कमाना चाहता था।

(ख) वह लोगों को आकर्षित करना चाहता था।

(ग) वह लोगों में नाम कमाना चाहता था।

(घ) वह बच्चों से मिलकर अपनी ममता की पूर्ति करना चाहता था।

II. भाषा-प्रयोग

1. 'वाला' प्रत्यय के लिए निम्नलिखित प्रयोग देखिए और इनका वाक्यों में प्रयोग कीजिए–

क.	मिठाई + वाला	=	मिठाईवाला
	मुरली + वाला	=	मुरलीवाला
	खिलौने + वाला	=	खिलौनेवाला
ख.	टोपी + वाला	=	टोपीवाला
	कुर्ते + वाला	=	कुर्तेवाला
	धोती + वाला	=	धोतीवाला
ग.	गानेवाला	=	..... + ...
	रोनेवाला	=	..... + ...
	बोलनेवाला	=	..... + ...
	हँसनेवाला	=	..... + ...

2\. अ. नमूने के अनुसार वाक्य बदलिए—

उदाहरण : बच्चों ने खिलौने **देखे और** पुलकित हुए।
→ **बच्चे** खिलौने **देखकर** पुलकित हुए।

क. मोहन ने मित्र की बात सुनी और चल दिया।
→- - - - - - - - - - - - - - - -।

ख. माँ ने बच्चे को देखा और प्रसन्न हुई।
→- - - - - - - - - - - - - - - -।

ग. मोहम्मद ने बच्चों को मिठाई दी और खुश हुआ।
→- - - - - - - - - - - - - -।

घ. गीता ने सहेली की व्यथा सुनी और दुखी हुई।
→- - - - - - - - - - - - - -।

ब. उदाहरण के अनुसार वाक्यों के क्रियारूप बदलिए—

उदाहरण : खिलौनेवाला मिठाई **बेचते हुए** आया।
→ खिलौनेवाला मिठाई **बेचकर** आया।

क. लड़की खाना खाते हुए बाहर आयी।
→- - - - - - - - - - - - -।

ख. बच्च दूध पीने हुए सो गया।
→- - - - - - - - - - - - -।

ग. मारिया स्कूल जाते हुए शीला से मिली।
→- - - - - - - - - - - - -।

घ. रमेश मुरली बजाते हुए चला गया।
→- - - - - - - - - - - - -।

3\. क. निर्देश : "क" स्तंभ के शब्दों के विलोम शब्द "ख" स्तंभ से छाँटिए :

क	ख
सजीव	दुराचार
सबल	निर्जीव
उपयोगी	दुर्व्यवहार
उपयुक्त	निर्बल
सद्व्यवहार	अनुपयोगी
सदाचार	अनुपयुक्त

ख. "सजीव" में "स" उपसर्ग का प्रयोग हुआ है। इसी प्रकार पाठ में से उपसर्ग वाले पाँच शब्द छाँटिए।

III. योग्यता-विस्तार

1. विजय बाबू और मिठाईवाले के वार्तालाप को अपने शब्दों में लिखिए।
2. मिठाईवाले की व्यथा को कक्षा में अपने शब्दों में सुनाइए।

शब्दार्थ और टिप्पणी

स्नेहाभिषिक्त = (स्नेह + अभिषिक्त) प्रेम में भीगे, स्नेहसिक्त
अन्तर्व्यापी = (अन्तः + व्यापी) (गलियों) के अन्दर व्याप्त या स्थित
पुलकित = प्रसन्न
इच्छानुसार = (इच्छा + अनुसार) इच्छा के अनुसार
हिलोर = लहर, तरंग
निरखना = प्यार से देखना
उस्ताद = गुरु, प्रवीण
आकार-प्रकार = रूप, बनावट
मादक = नशा पैदा करने वाला
मृदुल = कोमल
ठग = धोखेबाज
अप्रतिभ = आश्चर्यचकित, विस्मित
क्षीण = कमजोर, दुर्बल
संशय = संदेह
प्रतिष्ठित = सम्मानित
दुअन्नी = दो आने (पुराने आठ पैसे) का सिक्का जो अब प्रचलित नहीं है
गद्‌गद् होना = प्रसन्न होना, पुलकित, रोमांचित होना
घुट-घुट कर मरना = दुःख के कारण धीरे-धीरे कमजोर हो जाना।

अनंत गोपाल शेवड़े

अनंत गोपाल शेवड़े का जन्म सन् 1911 ई. में महाराष्ट्र में हुआ। वे मराठी भाषी हिन्दी लेखक थे। उन्होंने अंग्रेजी साहित्य में एम.ए. करने के पश्चात् पत्रकारिता को व्यवसाय बनाया। वे लगभग 35 वर्ष तक नागपुर के अंग्रेजी दैनिक 'नागपुर टाइम्स' के सम्पादक विभाग से सम्बद्ध रहे। महात्मा गाँधी से प्रभावित होकर उन्होंने अंग्रेजी के साथ-साथ हिन्दी में भी लिखना शुरू किया और जीवन-भर उनके आदर्शों का प्रचार करते रहे। सन् 19[illegible] ई. में उनका स्वर्गवास हो गया।

शेवड़े जी का उपन्यास 'ज्वालामुखी' अत्यंत लोकप्रिय हुआ। इसका अनेक भाषाओं में अनुवाद भी हुआ। उन्होंने एक दर्जन से अधिक कृतियाँ लिखी हैं जिनमें कथा साहित्य प्रमुख हैं। प्रथम विश्व हिन्दी सम्मेलन नागपुर में शेवड़े जी ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। इसके लिए उन्हें देश-विदेश में ख्याति मिली।

उनकी प्रमुख रचनाएँ हैं– इंद्रधनुष अधूरा बना, ईसाई बाला, तीसरी भूख, निशादीप आदि।

व्यवहार-कुशलता

[प्रस्तुत निबंध में लेखक ने इस बात पर बल दिया है कि व्यक्तियों को एक-दूसरे के सहारे और प्रोत्साहन की सबसे अधिक आवश्यकता उस समय होती है जब वे निराशा में डूबे हुए हों। ऐसे समय हमारी सहानुभूति और सहायता उनके खोए हुए आत्मविश्वास को वापस ले आती है। दूसरे की भावनाओं का सम्मान करना, उनके साथ सच्चाई और स्नेह का व्यवहार करना न केवल सज्जनता है, बल्कि सच्ची व्यवहार-कुशलता है।]

एक साहित्यिक सभा में एक तरुण विद्यार्थी भाषण देने के लिए खड़ा हुआ, पर उसका भाषण जमा नहीं— वह घबरा गया। श्रोताओं ने तालियाँ पीटीं, दस-पाँच वाक्य कहने के बाद ही उसे बैठ जाना पड़ा। मंच पर उसकी कुर्सी हमारी कुर्सी के पास ही थी क्योंकि हमें भी उस सभा में बोलने का निमंत्रण था। अपना पसीना पोंछते हुए उसने मुझसे धीरे से कहा :

"यह मेरा भाषण देने का पहला ही मौका था।"

"ऐसा ! तब तो तुमने बड़ी हिम्मत दिखाई। मैं तो अपने पहले भाषण में मुश्किल से तीन वाक्य भी ठीक से नहीं बोल पाया था। शुरू-शुरू में तो ऐसा होता ही है, पर बाद में आदत होने से यह सब दूर हो जाता है।"

"सच !" वह उत्साह से बोल उठा। उसकी परेशानी कुछ कम हुई।

'बिलकुल", मैंने कहा। जिन्होंने तालियाँ पीटीं उनमें से ऐसे कितने होंगे जो तुम्हारे जैसे यहाँ खड़े होकर इतने बड़े श्रोता-समुदाय का सामना कर सकेंगे ?

वह आश्वस्त हो गया। उसकी हिम्मत लौट आयी और आगे चलकर वह काफी अच्छा वक्ता हो गया। दो-तीन बार उसने मुझे धन्यवाद दिया और कहा कि यदि उस दिन आप मुझे प्रोत्साहन नहीं देते तो शायद मैं भाषण देना ही छोड़ देता।

जब लोग त्रस्त हों, पराजित हों, या शोक-ग्रस्त हों तभी उन्हें हमारी सहानुभूति, सहायता या प्रोत्साहन की जरूरत होती है। उस समय उनका आत्म-विश्वास लड़खड़ा जाता है। उस समय उनकी खिल्ली उड़ाने का या उनकी परेशानी का मजा लूटने का मोह हमें रोकना चाहिए और उन्हें सहारा देना चाहिए, उनकी हिम्मत बढ़ानी चाहिए। जो ऐसा करते हैं वे उनके हृदय में हमेशा के लिए स्थान प्राप्त कर लेते हैं, अपनी लोकप्रियता की परिधि विस्तृत करते हैं।

दूसरों के सुख-दुःखों में सच्चे अन्तःकरण से दिलचस्पी लेना अच्छे संस्कार का लक्षण तो है ही, साथ ही व्यवहार कुशलता भी है जो लोगों को हमारी ओर आकर्षित करती है। हाँ, इसमें दिखावा, बनावटीपन और ऊपरी-ऊपरी शिष्टाचार नहीं होना चाहिए। जो भावना सच्ची होती है, हृदय से निकलती है, वही हृदय को बाँध भी सकती है।

मानव की दो मूल प्रवृत्तियाँ होती हैं। एक तो यह कि लोग हमारे गुणों की कद्र करें, हमें दाद दें और हमारा आदर करें और दूसरे वे हम पर प्रेम करें, हमारा अभाव महसूस करें, उनके जीवन में हम कुछ महत्त्व रखते हैं— ऐसा अनुभव करें।

आपके जरा-से भी कार्य की यदि किसी ने सच्चे दिल से प्रशंसा की तो आपका दिल कैसा खिल उठता है ? कोई आपकी सलाह माँगने आता है तो आपका मन कैसे फूल जाता है ?

ऊपर से कोई बड़ा आदमी कितना भी आत्मविश्वासी और आत्मतुष्ट क्यों न दिखाई दे, भीतर से वह हमारी-आपकी तरह प्रशंसा का, प्रोत्साहन का, स्नेह का भूखा है। यदि आप उसे प्रामाणिकतापूर्वक ले सकें तो आप फौरन उसके हृदय के निकट पहुँच जाएँगे। दूसरों की भावनाओं को ठीक-ठीक समझना, उनकी कद्र करना, उनके साथ सचाई और स्नेह का व्यवहार करना यही व्यवहार कुशलता है। इसी

से सामाजिक जीवन में लोकप्रियता के दरवाजे खोलने की कुंजी हाथ लगती है। इससे हमारी अपनी सुख-शांति बढ़ती है, सो अलग।

प्रश्न-अभ्यास

I. विचार-बोध

1. विद्यार्थी के भाषण पर श्रोताओं ने तालियाँ क्यों पीटीं ?
2. भाषण देने में असफल विद्यार्थी की हिम्मत लेखक ने किस प्रकार बढ़ाई ?
3. लेखक के प्रोत्साहन का विद्यार्थी पर क्या प्रभाव प्ड़ा ?
4. लोगों को हमारी सहानुभूति की सबसे अधिक आवश्यकता कब होती है ?
5. व्यवहार कुशलता का उपयुक्त लक्षण छाँटिए :
   (क) दूसरों के प्रति शिष्टाचार का निर्वाह करना।
   (ख) दूसरे की भावना को समझकर चुप रहना।
   (ग) आत्मप्रशंसा के लिए अवसर के अनुकूल आचरण करना।
   (घ) किसी को दुखी देखकर अपना दुख प्रकट करना।
6. मनुष्य की किन दो मूल प्रवृत्तियों की ओर लेखक ने ध्यान दिलाया है ?
7. किसी व्यक्ति के हृदय को जीतने के लिए हमें किस तरह का व्यवहार करना चाहिए ?

II. भाषा-प्रयोग

1. "तब तो तुमने बड़ी हिम्मत दिखाई" वाक्य में "तो" का प्रयोग बल देने के लिए किया गया है। इस तरह बल देने के लिए "तो" का प्रयोग पाठ में अन्यत्र भी हुआ है। इस प्रकार के चार वाक्य बनाइए।
2. इस पाठ में "आत्मविश्वास" और "आत्मतुष्ट" शब्द आए हैं। "आत्म" शब्द से युक्त चार और शब्द बनाइए।
3. नीचे लिखे वाक्यों को "चाहिए" का प्रयोग करते हुए उदाहरण के अनुसार बदलिए :—

उदाहरण : गोविन्द ने उसकी हिम्मत **बढ़ाई**
→ गोविन्द को उसकी हिम्मत **बढ़ानी चाहिए।**

क. हमने शीला को आश्वासन दिया → - - - - - - - - - -

ख. शीला ने मुझे प्रेरणा दी → - - - - - - - - - - -

ग. आपने उस गरीब को आश्रय दिया → - - - - - - - - -

घ. कमला ने राम का साहस बढ़ाया → - - - - - - - - - -

ङ. अध्यापक ने बच्चों का उत्साह बढ़ाया → - - - - - - - -

4. नीचे लिखे वाक्यों को उदाहरण के अनुसार बदलिए :

उदाहरण : वहाँ उसे **बैठ जाना पड़ा** → वहाँ उसे **बैठना पड़ा**।

क. दोपहर को मुझे घर लौट जाना पड़ा → - - - - - - - -

ख. शिक्षक के आते ही कमला को कुर्सी से उठ जाना पड़ा
→- - - - - - - - - - -

ग. थकान के कारण उसे सो जाना पड़ा → - - - - - - - -

III. योग्यता-विस्तार

1. 'व्यवहार कुशलता ही हमारे चरित्र की कसौटी है'– विषय पर कक्षा में परिचर्चा आयोजित कीजिए।

2. किसी कथन को संक्षेप में इस प्रकार लिखना कि उसका आशय बना रहे "संक्षेपण" कहलाता है। नीचे लिखे अनुच्छेद का संक्षेपण लगभग एक-तिहाई शब्दों में कीजिए :

कृष्ण ने दुर्योधन से कहा– भाई ! तुम जैसा व्यवहार करते हो वह तुम्हारे वंश के योग्य नहीं। तुम्हारे इस बुरे व्यवहार से जो अनर्थ होने वाला है उसका निवारण करके अपने भाइयों और मित्रों का कल्याण करो। हे दुर्योधन, पाण्डवों के साथ संधि स्थापित करने की तुम्हारे सभी गुरुजनों की सलाह है। तुम्हें उनका कहना अवश्य मानना चाहिए। जिन लोगों के ऊपर भरोसा करके पांडवों को तुम जीतना चाहते हो, वे किसी तरह पांडवों की बराबरी नहीं कर सकते। तुम यदि सचमुच यह समझते हो कि युद्ध में तुम अर्जुन को हरा दोगे तो व्यर्थ में और लोगों का नाश करने से क्या लाभ ? तुम अपने पक्ष में से किसी एक वीर को अर्जुन के साथ युद्ध करने के लिए चुन लो। उन दोनों के युद्ध का जैसा परिणाम हो, उसी के अनुसार दोनों पक्षों की हार-जीत का निश्चय हो जाएगा।

शब्दार्थ और टिप्पणी

तरुण	=	नवयुवक
श्रोता	=	सुनने वाला
आश्वस्त	=	जिसे भरोसा दिलाया गया हो
प्रोत्साहन	=	उत्साह बढ़ाना
त्रस्त	=	भयभीत
शोक-ग्रस्त	=	(शोक + ग्रस्त) दुखी
आत्मविश्वास	=	(आत्म + विश्वास) अपने आप पर भरोसा
लोकप्रियता	=	लोगों में प्रिय होना
परिधि	=	सीमा
अन्तःकरण	=	हृदय
संस्कारिता	=	शुद्ध आचरण
लक्षण	=	चिह्न, विशेषता
शिष्टाचार	=	(शिष्ट + आचार) सभ्य व्यवहार
मूलप्रवृत्तियाँ	=	(मूल + प्रवृत्तियाँ) जन्मजात गुण
दाद	=	प्रशंसा
आत्मतुष्ट	=	(आत्म + तुष्ट) अपने आप में संतुष्ट होना
कद्र	=	इज़्जत
विस्तृत	=	फैला हुआ
खिल्ली उड़ाना	=	हँसी उड़ाना (मुहावरा)

सहानुभूति में ऊपरी दिखावा, बनावटीपन या
कोरा शिष्टाचार नहीं होना चाहिए।

वृंदावनलाल वर्मा

वृंदावनलाल वर्मा का जन्म 9 जनवरी, सन् 1889 ई. को झाँसी जिले के मऊरानीपुर नामक ग्राम में हुआ था। वे बाल्यकाल से ही बड़े भावुक थे। उनकी प्रारंभिक शिक्षा विभिन्न स्थानों पर हुई। बी.ए. करने के बाद उन्होंने कानून की परीक्षा उत्तीर्ण की और वकालत करने लगे। वर्मा जी पंद्रह वर्ष की अवस्था से ही लिखने लगे थे। उनकी साहित्यिक सेवाओं के लिए आगरा विश्वविद्यालय ने उन्हें डी.लिट्. की मानद उपाधि से सम्मानित किया। सन् 1969 ई. में उनका देहान्त हुआ।

वर्माजी ने यद्यपि अनेक उपन्यास, नाटक, निबन्ध और कहानियों की रचना की है, पर ऐतिहासिक उपन्यासकार के रूप में उन्हें अधिक प्रसिद्धि मिली। उन्होंने अपनी रचनाओं में नारी को वीरांगना, योद्धा, समाज-सेविका तथा रूढ़ि-विरोधी के रूप में प्रतिष्ठित करके उसके महत्व को स्थापित किया है। वर्मा जी की भाषा में बुंदेलखंडी का पुट मिलता है।

वर्माजी की प्रमुख रच .ऐं हैं—'विराटा की पद्मिनी', 'गढ़ कुंडार', 'झाँसी की रानी', 'कचनार', 'मृगनयनी', 'अचल मेरा कोई' उपन्यास 'सेनापति' 'ऊदल', 'हंसमयूर', 'ललित विक्रम' और 'राखी की लाज' नाटक तथा 'दबे पाँव', 'शरणागत' और 'कलाकार का दण्ड' कहानियाँ।

Ahmad Shah Abdali – Ahmad Shah was the first King of Modern Afganistan
He was the ablest general of Nadir Shah. After the assasination of Nadir Shah in 1747, He became the independent king of Afganistan
From 1748 to 1767 he made about ten invasions of India.
His most important invasion was in 1761 when he defeated the Marathas in the third battle of Panipat.
Abdali died in 1773 at the age of

3

इब्राहिम गार्दी

[प्रस्तुत कहानी अहमदशाह अब्दाली और मराठों के बीच हुए पानीपत के तीसरे युद्ध की ऐतिहासिक घटना पर आधारित है। अहमदशाह मराठों के सेनापति इब्राहिम गार्दी को सच्चा मुसलमान नहीं मानता था क्योंकि उसने हिन्दुओं का साथ दिया था। इब्राहिम देशभक्ति को ही सच्चा धर्म मानता था। अहमदशाह अब्दाली ने उसे अपनी ओर मिलाने के लिए अनेक प्रलोभन और धमकियाँ दीं लेकिन इब्राहिम अपनी आस्था पर दृढ़ बना रहा और उसने देश के लिए अपने प्राणों की बलि दे दी।]

सन् 1761 ई. में पानीपत के युद्ध में अहमदशाह अब्दाली से मराठे हार गए। मराठों का सेनापति इब्राहिम गार्दी बंदी हुआ। वह अन्त तक लड़ता रहा और घायल हो जाने के कारण पकड़ लिया गया। इस युद्ध में अवध का नवाब शुजाउद्दौला अहमदशाह अब्दाली की ओर से लड़ा था। घायल इब्राहिम गार्दी को शुजाउद्दौला के टीले में जो अफगान शाह अब्दाली की छावनी के भीतर ही था, पकड़कर रख लिया गया। अब्दाली को इब्राहिम के नाम से घृणा थी। इब्राहिम के पकड़े जाने और शुजाउद्दौला के टीले में होने का समाचार उसको मिल चुका था। इसलिए उसने इब्राहिम को अपने सामने पेश किए जाने के लिए शुजाउद्दौला के पास दूत भेजा

शुजाउद्दौला इब्राहिम गार्दी की उपस्थिति से इंकार न कर सका। उसने अनुरोध किया, "इब्राहिम काफी घायल हो गया है, अच्छा हो जाने पर पेश कर दूँगा।"

दूत ने अपने शाह का आग्रह प्रकट किया, "उसको हर हालत में इसी पल जाना होगा।"

शुजाउद्दौला का प्रतिवाद क्षीण पड़ गया। फिर भी उसने कहा, "इब्राहिम मराठों के दस हजार सिपाहियों का सेनापति था। इस समय वह घायल हुआ पड़ा है। कम-से-कम इस वक्त तो उसे नहीं बुलाना चाहिए।"

दूत नहीं माना। उसको अहमदशाह अब्दाली का स्पष्ट आदेश था। शुजाउद्दौला को उस आदेश का पालन करना पड़ा।

अहमदशाह के सामने इब्राहिम गार्दी लाया गया।

अहमदशाह ने पूछा, "तुम मराठों की दस पलटनों के जनरल थे?"

उसने उत्तर दिया, "हाँ, था।"

"पहले तुम फ्रांसीसियों के नौकर थे ?"

"जी हाँ !"

"फिर हैदराबाद के निज़ाम के यहाँ नौकर हुए ?"

"सही है।"

"तुमने निज़ाम की नौकरी क्यों छोड़ दी ?"

"क्योंकि निज़ाम के रवैये को मैंने अपने उसूल के खिलाफ़ पाया।"

"तुमने फिरंगी ज़बान भी पढ़ी है ?"

"जी हाँ।"

"मुसलमान होकर फिरँगी ज़बान पढ़ी। फिर मराठों की नौकरी की। खैर, . . . अब तक जो कुछ तुमने किया, उस पर तुमको तौबा करनी चाहिए। तुमको शर्म आनी चाहिए।"

घाव की परवाह न करते हुए इब्राहिम बोला, तौबा और शर्म ! आप क्या कहते हैं अफ़गान शाह ? आपके देश में अपने मुल्क से मुहब्बत करने और उस पर जान देने वालों को क्या तौबा करनी पड़ती है ? और क्या उसके लिए सर नीचा करना पड़ता है ?"

"जानते हो तुम इस वक्त किसके सामने हो और किससे बातें कर रहे हो ?" अहमदशाह ने कठोर वाणी में कहा।

"जानता हूँ। और न भी जानता होता तो जान जाता। पर यह यकीन है कि आप खुदा के फ़रिश्ते नहीं हैं।"

"इतनी बड़ी फतह के बाद मैं गुस्से को अपने पास नहीं आने देना चाहता। मुझे ताज्जुब है, मुसलमान होकर तुमने अपनी ज़िन्दगी को इस तरह बिगाड़ा।"

"तब आप यह जानते ही नहीं कि मुसलमान कहते किसको हैं। जो अपने मुल्क के साथ गद्दारी करे, जो अपने मुल्क को बरबाद करने वाले परदेसियों का साथ दे, वह मुसलमान नहीं।"

"मुझको मालूम हुआ है कि तुम फिरंगियों के कायल रहे हो। उनकी शागिर्दी में ही तुमने यह सब सीखा है। क्यों . . . . ? क्या तुम नमाज़ पढ़ते हो ?"

"हमेशा, पाँचों वक्त।"

अहमदशाह के चेहरे पर व्यंग्यभरी मुसकराहट आई और आँखों में वध की क्रूरता। बोला, "फिरंगी या मराठी ज़बान में नमाज़ पढ़ते होगे।"

इब्राहिम ने घावों की पीड़ा दबाते हुए कहा, "खुदा अरबी, फारसी या पश्तो जबान को ही समझता है क्या ? वह मराठी या फ्रांसीसी नहीं जानता ? क्या खुदा राम नहीं है ? और क्या राम और रहीम अलग-अलग हैं ?"

अहमदशाह का चेहरा क्रोध से तमतमा उठा। बोला, "क्यों कुफ्र बकता है ? तौबा करो, नहीं तो टुकड़े-टुकड़े कर दिए जाओगे।"

"मेरे इस तन के टुकड़े हो जाने से रूह के टुकड़े तो होंगे नहीं।" इब्राहिम ने शांत किन्तु दृढ़ स्वर में कहा।

घायल इब्राहिम के ठंडे स्वर से अहमदशाह की क्रूरता कुछ कुंठित हुई। एक क्षण सोचने के बाद बोला, "अच्छा, हम तुमको तौबा करने के लिए वक्त देते हैं। तौबा कर लो तो हम तुमको छोड़ देंगे। अपनी फौज में अच्छी नौकरी भी देंगे। तुम फिरंगी तरीके पर कुछ दस्ते तैयार करना।"

कराह को दबाते हुए इब्राहिम के ओठों पर झीनी हँसी आ गई। अहमदशाह के उस खिलवाड़ को इब्राहिम समाप्त करना चाहता था। उसने कहा, "अगर छूट जाऊँ तो पूना में ही फिर पलटनें तैयार करूँ

और फ़िर इसी पानीपत के मैदान में उन अरमानों को निकालूँ, जिनको आज निकाल न पाया और जो मेरे कलेजे में धधक रहे हैं।"

"अब समझ में आ गया, तुम असल में बुतपरस्त हो।"

"ज़रूर हूँ, लेकिन मैं ऐसे बुत को पूजता हूँ जो दिल में बसा हुआ है और खयाल में मीठा है। जिन बुतों को बहुत-से लोग पूजते हैं, और आप भी; मैं उनको नहीं पूजता।"

"हम भी ? खबरदार !"

"हाँ, आप भी। हर तंबू के सामने मरे हुए सिपाहियों के सरों के ढेर के इर्द-गिर्द जो आपके पठान और रुहेले सिपाही नाच-नाचकर जश्न मना रहे हैं, वह सब क्या है ? क्या वह बुतपरस्ती नहीं ?"

"हूँ, तुम बदज़ुबान हो। तुम्हारा भी वही हाल किया जाएगा, जो तुम्हारे सदाशिव राव भाऊ का हुआ।"

चकित इब्राहिम के मुँह से निकल पड़ा, "क्यों उनका क्या हुआ ?"

उत्तर मिला, "मार दिया गया, सर काट लिया गया।"

"उफ . . ." घायल इब्राहिम ने दोनों हाथों से सर थामकर कहा।

अब्दाली को उसकी पीड़ा रूची। बोला, "तुम लोगों का वह खूबसूरत छोकरा विश्वासराव भी मारा गया।"

इब्राहिम की बुझती हुई आँखों के सामने और भी अंधेरा छा गया। उसने कुपित स्वर में कहा, "विश्वासराव ! मेरे मुल्क का ताज, मेरे सिपाहियों के हौसलों का ताज। उफ....!"

इब्राहिम, गिर पड़ा।

अहमदशाह उसके तड़पने पर प्रसन्न था। उसकी निर्ममता ने सोचा, "शहीदी को जीत लिया।"

जहाँ का तहाँ पड़कर इब्राहिम ने कहा, "तौबा ? शहीदी कहीं तौबा करता है ?

इब्राहिम ज़रा-सा उठकर भरभराते हुए स्वर में बोला, "पानी।"

अब्दाली कड़का, "पहले तौबा कर।"

"तौबा करें वे लोग जो कैदियों, घायलों और निहत्थों का कत्ल करते हैं।"

अब्दाली से नहीं सहा गया। इब्राहिम भी नहीं सह पा रहा था। अब्दाली ने उसके टुकड़े-टुकड़े करके वध करने की आज्ञा दी।

एक अंग कटने पर इब्राहिम की चीख में से निकला, "मेरे ईमान पर पहली नियाज़।" दूसरे पर क्षीण स्वर में निकला, "हम हिन्दू-मुसलमानों की मिट्टी से ऐसे सूरमा पैदा होंगे, जो वहशियों और ज़ालिमों का नामोनिशां मिटा देंगे।"

और फिर अंत में मराठों के सेनापति इब्राहिम खाँ गार्दी के मुँह से केवल एक शब्द निकला, "अल्लाह" !

प्रश्न-अभ्यास

I. विचार-बोध

1. अहमदशाह अब्दाली को गार्दी से घृणा क्यों थी ?
2. इब्राहिम गार्दी को क्षमा करने के लिए अब्दाली ने क्या शर्त रखी ?
3. गार्दी को अपनी ओर मिलाने के लिए अब्दाली ने क्या-क्या प्रलोभन दिए ?
4. इब्राहिम की किस बात को सुनकर अहमदशाह का चेहरा क्रोध से तमतमा उठा था ?
5. इस कहानी से आपको क्या प्रेरणा मिलती है ?
6. इब्राहिम के बारे में कौन-से कथन सत्य हैं ?
   (क) इब्राहिम गार्दी बहुत बलवान था।
   (ख) इब्राहिम गार्दी सच्चा देश-भक्त था।
   (ग) इब्राहिम गार्दी अत्यन्त निर्मम था।
   (घ) इब्राहिम गार्दी सेनापति था।

II. भाषा-प्रयोग

1. नीचे दिए गए उदाहरण को ध्यान से देखिए और उसी प्रकार के अन्य शब्दों में "बद" जोड़कर नए शब्द बनाइए—

उदाहरण : ज़बान → बदज़बान

तमीज → – –

किस्मत → – –

सलूक → – –

हवाश → – –

दुआ → – –

2. ध्यान दें कि प्रश्नवाचक वाक्यों के अंत में प्रश्नवाचक का चिह्न (?) लगाया जाता है। प्रश्नवाचक वाक्य दो प्रकार के होते हैं :

(अ) जिनका उत्तर **हाँ या नहीं से भिन्न किन्हीं शब्दों में** देना होता है, जैसे–, चकित इब्राहिम के मुँह से निकल पड़ा, "उनका क्या हुआ ?"

(ब) जिनका उत्तर **हाँ या नहीं में दिया जा सकता है**, जैसे– क्या राम और रहीम अलग-अलग हैं ?

(क) चार ऐसे प्रश्नवाचक वाक्य लिखिए जिनके उत्तर "हाँ" या "नहीं" में दिए जा सकते हों।

(ख) चार ऐसे प्रश्नवाचक वाक्य लिखिए जिनके उत्तर अन्य शब्दों में दिए जाएँ।

3. ध्यान दीजिए और नमूने के अनुसार शब्द बनाकर आगे लिखिए–

कुंठा + इत = कुंठित = कुंठा से भरा हुआ।

कलुष + इत = - - - - - - - - - - -

जर्जर + इत = - - - - - - - - - - -

प्रफुल्ल + इत = - - - - - - - - - - -

प्रतिष्ठा + इत = - - - - - - - - - - -

4. दिए गए उदाहरण के अनुसार निम्नलिखित क्रिया-रूपों के वाक्य बनाइए :

उदाहरण : इब्राहिम गार्दी युद्ध में अंत तक . . . . . . । (लड़ना) इब्राहीम गार्दी युद्ध में अंत तक **लड़ता रहा**।

1. लड़का आधे घंटे तक . . . . (दौड़ना)
2. माँ रात-भर . . . . (जगना)
3. खिलाड़ी शाम तक . . . . (खेलना)

III. योग्यता-विस्तार

1. "देश-प्रेम" विषय पर कक्षा में दो मिनट का भाषण दीजिए।

2. इब्राहीम गार्दी के चरित्र की विशेषताएँ बताते हुए एक अनुच्छेद लिखिए जिसमें निम्नलिखित शब्दों/अभिव्यक्तियों का प्रयोग किया गया हो : स्वाभिमान, घायल, देश-प्रेम, धर्मनिष्ठा, स्वामिभक्त, अरमानों को निकालूँ, मुल्क का ताज।

शब्दार्थ और टिप्पणी

अरमान = इच्छा, लालसा
वहशी = जँगली, असभ्य
रवैया = ढंग, व्यवहार, आचरण
उसूल = सिद्धांत
सूरमा = वीर, योद्धा
फतह = विजय
फिरंगी जबान = अंग्रेजी भाषा
वध = हत्या, जान से मार डालना
मुल्क = देश
रूह = आत्मा, प्राण
बुतपरस्त = मूर्ति की पूजा करने वाला
कुपित = गुस्से से भरा
नियाज = चढ़ावा, भेंट
कुफ्र = खुदा के अस्तित्व से इन्कार
शहीदी = शहीद होने को तैयार
कुंठित = किसी इच्छा के पूरा न होने पर निराश होना
बदज़बान = अप्रिय भाषा बोलने वाला, अपशब्द बोलने वाला
छोकरा = बालक, लड़का
सिर नीचा करना = लज्जित होना
कलेजे में धधकना = बदला लेने की तीव्र भावना
नामोनिशां मिटा देना = बिल्कुल नष्ट कर देना
नमाज़ = मुसलमानों द्वारा की जाने वाली इबादत (प्रार्थना), यह दिन में पाँच बार पढ़ी जाती है
तौबा = अफसोस, पछतावा, किसी निंदनीय कार्य को फिर से न करने की प्रतिज्ञा
तौबा करना = प्रायश्चित्त करना, गलती स्वीकार करना
फिरंगी = अंग्रेज

श्रीलाल शुक्ल

प्रसिद्ध व्यंग्यकार-कथाकार श्रीलाल शुक्ल का जन्म 31 दिसम्बर, 1925 ई. में लखनऊ के पास अतरौली नामक गाँव में हुआ था। इनकी शिक्षा लखनऊ और इलाहाबाद में हुई। 1950 ई. में वे भारतीय प्रशासनिक सेवा (आई.ए.एस.) के लिए चुने गए। उत्तर प्रदेश शासन में उन्होंने विभिन्न उत्तरदायित्वपूर्ण पदों पर कार्य किया और अंत में सचिव पद से अवकाश ग्रहण किया।

श्रीलाल शुक्ल ने 1955 ई. से साहित्य-रचना आरंभ की। वे अपने व्यंग्य-लेखन के लिए मुख्य रूप से चर्चित हुए। अपनी कुछ रचनाओं में श्रीलाल शुक्ल ने जासूसी और रहस्य-रोमांच के तत्वों का भी उपयोग किया है। "रागदरबारी" (1968) उनका प्रसिद्ध व्यंग्यपूर्ण आंचलिक उपन्यास है। इस उपन्यास पर उन्हें 1970 ई. में साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया। "रागदरबारी" दूरदर्शन पर धारावाहिक के रूप में भी बहुत लोकप्रिय हुआ। उन्होंने जन-जीवन से जुड़ी भाषा का प्रयोग किया है जिसमें हिन्दी, उर्दू, अंग्रेजी शब्दों को लिया गया है। वे अभी भी साहित्य सेवा में संलग्न हैं।

उनकी प्रमुख रचनाएँ हैं— अंगद का पाँव, यहाँ से वहाँ, सूनी घाटी का सूरज, अज्ञातवास, सीमाएँ टूटती हैं, आदमी का ज़हर, मकान, रागदरबारी आदि।

पहली चूक

[इस पाठ में लेखक ने ऐसे पढ़े-लिखे लोगों पर व्यंग्य किया है जो शहर में रहते हैं और गाँव के वातावरण से बिल्कुल अपरिचित होते हैं। वे पुस्तकों और सिनेमा से प्राप्त जानकारी के आधार पर मन में कल्पना का गाँव बनाते हैं। उनकी यह कल्पना गाँव पहुँचकर वहाँ के यथार्थ जीवन को देख कर टूट जाती है। लेखक ने सुख-सुविधापूर्ण शहरी वातावरण में रहकर गाँव की समस्याओं को सुलझाने की असंगति को स्पष्ट किया है।

उत्तम खेती मध्यम बान,
अधम चाकरी भीख निदान।

यह कहावत पहले मैं कई बार सुन चुका था। अब हुआ यह कि बी. ए. पास करने के बाद मुझे अधम चाकरी मिली ही नहीं। इसलिए उसे भीख निदान समझकर मैंने खेती के उत्तम व्यवसाय में हाथ लगाना चाहा और अपने गाँव चला आया।

मेरे चचा ने मुझे समझाया कि खेती का काम है तो बड़ा उत्तम, पर फारसी पढ़कर जिस प्रकार तेल नहीं बेचा जा सकता वैसे ही अंग्रेजी पढ़कर खेत नहीं जोता जा सकता। इस पर मैंने उन्हें बताया कि यह सब कुदरत का खेल है क्योंकि फ़ारस में तेल बेचने वाले संस्कृत नहीं बोलते, खेत जोतते हैं।

चचा बोले, "बेटा, यह खेती का पेशा तुमसे नहीं चलेगा। यह तो हम जैसे जाहिलों के लिए है। इसमें तो दिन-रात पानी और पसीना, मिट्टी और गोबर से खेलना पड़ता है"

इस पर मैंने जवाब दिया कि यह शरीर ही मिट्टी का बना हुआ है और गोबर तो परम पवित्र वस्तु है। मिट्टी का स्थान यदि पंचभूत

में है तो गोबर का स्थान पंचगव्य में है।

मेरे मुँह से पवित्रता की बात सुनते ही चचा दंग रह गये आस-पास बैठे हुए लोगों में "धन्य है, धन्य है" का नारा लग गया तब मैंने फिर कहना शुरू किया, "और चचा, यह खेती जाहिलों क पेशा नहीं है। बड़ों-बड़ों ने इसकी प्रशंसा की है। कार्लाइल ने इस प लेख लिखे हैं, टॉलस्टाय तो स्वयं किसान ही हो गया था, वाल्टेय खुद बागवानी करता था, ग्लैड्स्टन लकड़ी चीरता था। अपने देश भी गौतम जैसे ऋषि गेहूँ बोते थे। वैसे तो, कंद-मूल-फल खाने कारण उनकी दिलचस्पी हॉर्टिकल्चर में थी और वे ज्यादातर फल औ शकरकंद ही पैदा करते थे, इसलिए खेती को उत्तम मानना ही चाहिए। मैं कल से खेती करूँगा। मेरा यही फैसला है।"

मेरे चचा मेरी बात से प्रभावित तो हुए पर बोले, "बेटा, खेती करोगे पर इतना समझ लो कि खेतों के आस-पास न तो कॉफी हाउस होते हैं न क्लब। सिनेमाघरों की गद्देदार कुर्सियों की जगह अरहर ठूँठियों पर घूमना-फिरना होता है।"

यहाँ मैं आपको बता दूँ कि मुझे सिनेमा का बड़ा शौक है। वह इसलिए कि सिनेमा खेती की उन्नति का एक अच्छा साधन है। सिनेमा द्वारा खेती का बड़ा प्रचार हुआ है। बड़े-बड़े हीरो खेत जोतते जाते हैं और गाते जाते हैं। हीरोइन खेत पर टोकरी में रोटी लेकर आती है। हरी-भरी फसल में आँखमिचौनी का खेल होता है। फसल काटते समय हीरोइन के साथ बहुत-सी लड़कियाँ नाचती हैं और गाती भी हैं। वे नाचती जाती हैं और फसल अपने-आप कटती जाती है। ऐसे ही मधुर दृश्यों को देखकर पढ़े-लिखे आदमी गाँवों में आने लगते हैं और खेतों का चक्कर काटने लगते हैं। इस प्रकार सिनेमा द्वारा खेती की शिक्षा मिलती है। सच पूछिए तो खेती करने की सच्ची शिक्षा मुझे भी सिनेमा से ही मिली थी।

दूसरे दिन चचा ने मुझसे खेतों पर जाकर काम करने के लिए कहा। मैंने पूछा, "खेत कहाँ पर हैं।"

उन्होंने कहा, "गाँव के दक्खिन की ओर, रमेसर की बाग के

आगे से गलियारा जाता है। गलियारे से पश्चिम एक राह फूटती है। राह से उत्तर एक मेंड़ जाती है। मेंड़ के पूरब गन्ने का एक खेत है। गन्ने के खेत के पास बाजरा खड़ा है। वहीं अपने खेत जोते जा रहे हैं। तुम वहीं जाकर काम देखो।"

मैं चल पड़ा। कुँवार का महीना था। आसमान पर हल्के-हल्के बादल थे। ताड़ और खजूर के पेड़ हिल-हिलकर एक-दूसरे के गले मिल रहे थे। सब कुछ सिनेमा-जैसा लग रहा था। तभी आगे एक कुआँ दीख पड़ा। सिनेमा में हीरोइन कुएँ पर पानी भरती है और हीरो खेत की ओर जाते हुए उससे बातें करता है। मैंने रुककर सीटी बजाई पर कुआँ सुनसान था। किसी के पायल नहीं झनके, न कोई घड़ा फूटा। इसी तरह पूरा रास्ता कट गया। न खेतों में आँखमिचौनी का दृश्य दीख पड़ा, न हीरो ने कोरस गाए। मुझे देहात से बड़ी निराशा हुई चुपचाप मैं अपने रास्ते पर चलता गया।

अब मैं ऐसी जगह पहुँचा जहाँ मेरे खेत होने चाहिए थे। चचा ने बताया था कि वहीं गन्ने का खेत है और वहीं बाजरा खड़ा है। मैं गन्ने के बारे में ज्यादा नहीं ज़ानता था। इसलिए बाजरे का सहारा लेना पड़ा। एक मेंड़ पर एक अधेड़ किसान खड़ा हुआ था। उसके पास जाकर अपना गाना बन्द करते हुए मैंने पूछा, "आपका नाम बाजरा तो नहीं है ?"

किसान ने मेरी ओर घूरकर देखा, फिर घबराहट के साथ पूछा, "यह आप पूछ क्या रहे हैं ? मेरा नाम तो रामचरन है।"

मैंने रामचरन के कन्धे पर हाथ रखकर सार्वभौमिक मित्रता के भाव से कहा, "तो भाई रामचरन, मुझे बताओ यह बाजरा कौन है ? कहाँ रहता है ? यह खड़ा कहाँ है ? इसे क्यों खड़ा किया गया है ?" मेरी बात सुनते ही रामचरन जोर से हँसने लगा। आस-पास काम करते हुए किसानों को पुकारकर उसने कहा, "यह देखो, ये भैया तो बाजरा को आदमी समझ रहे हैं।" दो-तीन किसान हँसते हुए वहीं आ गए। मैं समझ गया कि मुझसे चूक हो गई। इसलिए बात पलटते हुए मैंने कहा, "ओ, मैं तो हँसी कर रहा था। दरअसल मैं तो बाजरे के

पेड़ की छाँह ढूँढ रहा हूँ। उसी पेड़ के पास मेरे चचा के खेत हैं।

इस बार वे किसान कुछ और जोर से हँसे। मुझे भी झेंप-सी लगी। पर मैंने हँसकर इस बात को टाल दिया।

दूसरे दिन से ही मुझे इस बात की चिन्ता हुई कि ऐसी चूक मुझसे कहीं दुबारा न हो जाए। इसलिए कृषि-शास्त्र की मोटी-मोटी किताबें मँगवाकर मैंने उनका अध्ययन आरम्भ कर दिया। गाँव से मैं हताश हो गया था। वहाँ वह था ही नहीं जो मैंने रुपहले पर्दे पर देखा था। फिर भी मैं अध्ययन करता रहा। अध्ययन करते-करते मैं इस नतीजे पर पहुँचा कि आदर्श खेती गाँव में हो ही नहीं सकती। वह शहर में ही होती है। यह सब इस प्रकार से हुआ।

मुझे बीज और खाद खरीदने के लिए बीजगोदाम जाना पड़ा। बीज गोदाम के कर्मचारी शहर गए हुए थे। इसलिए मैं भी शहर चला गया। दूसरे दिन मुझे अपने खेतों में अच्छे हलों से जोताई करानी थी। अच्छे हल शहर में मिलते हैं। इसलिए मैं फिर शहर पहुँचा। तीसरे दिन मुझे नहर में एक नया पाइप लगवाने की जरूरत जान पड़ी। उसके लिए नहर के बड़े इन्जीनियर का हुक्म लेना पड़ता है। वे शहर में रहते हैं। इसलिए मैं फिर शहर गया। चौथे दिन कुछ कीटाणुनाशक दवाइयाँ खरीदने के लिए मुझे शहर का चक्कर लगाना पड़ा। फिर मुझे कृषि-विभाग के एक कर्मचारी की शिकायत करने के लिए शहर जाना पड़ा। उसके बाद मैं जितना ही खेती की समस्याओं को समझता गया उतना ही शहर जाने की आवश्यकता बढ़ती गई। इसलिए एक दिन मैंने कृषि-शास्त्र की सब किताबें एक बैग में बंद कीं और अपनी कार्डराय की पतलून और रंग-बिरंगी छापेदार बुश शर्ट पहनी, फेल्ट कैप लगाई और चचा से कहा, "देखिए, यह खेती का काम ऐसा है कि बिना शहर गए इसे साधना कठिन है। इसलिए मैं शहर जा रहा हूँ। वहीं रहूँगा और वहीं से वैज्ञानिक ढंग की खेती करूँगा।"

चचा ने प्रसन्नतापूर्वक हँसकर कहा, "जैसे खूँटे से छूटी हुई घोड़ी भूसे के ढेर पर मुँह मारती है, जैसे धूप में बँधी हुई भैंस तालाब की ओर दौड़ती है, वैसे ही तुम्हारा शहर की ओर जाना बड़ा

्वाभाविक और उचित है। मैं आदमी पहचानने में कभी चूक नहीं करता, पर तुम्हें पहचानने में ही मुझसे पहली चूक हुई। जाओ, शहर ही में रहकर खेती करो।"

मैंने भी प्रसन्न मुद्रा में कहा, "नहीं चचा। चूक आपसे नहीं हुई, पहली चूक तो मुझी से हुई थी जो मैंने बाजरे को पहले आदमी समझा और बाद में उसे छायादार पेड़ समझता रहा। पर कोई बात नहीं। अब मैं शहर में रहकर बाजरे के विषय में अपनी रिसर्च करूँगा और बताऊँगा कि किस खाद के प्रयोग से बाजरे की लताओं में मीठे और बड़े-बड़े फल लाये जा सकते हैं।"

इस प्रकार हम दोनों ने प्रसन्नतापूर्वक एक-दूसरे से विदा ली। मैं सीटी बजाता हुआ स्टेशन की ओर चल दिया और वे बैलों की पूँछ उमेठते हुए खेत की ओर चले गए।

प्रश्न-अभ्यास

1. विचार-बोध

(1) लेखक ने खेती करने का निश्चय क्यों किया ?

(2) चचा को खेती का महत्व बताने के लिए लेखक ने कौन-कौन से उदाहरण दिए ?

(3) निम्नलिखित वाक्यों में निहित व्यंग्य स्पष्ट कीजिए—

क. "सिनेमा खेती की उन्नति का एक अच्छा साधन है।"

ख. "बाजरा खड़ा है।"

ग. "आदर्श खेती गाँव में हो ही नहीं सकती, वह शहर में ही होती है।"

(4) पहली चूक किससे हुई ? और कैसे हुई ?

(5) लेखक गाँव से हताश क्यों हो गया था ? सही उत्तर छाँटिए—

(क) उसे वहाँ शहर की सुख-सुविधा नहीं मिली।

(ख) वहाँ वह था ही नहीं, जो उसने रुपहले पर्दे पर देखा था।

(ग) उसके चचा उससे दुर्व्यवहार करते थे।

(घ) उसे अध्ययन करने का समय नहीं मिला था।

II. भाषा-प्रयोग

1. नीचे दिए गए उदाहरण के अनुसार वाक्य बदलिए—

उदाहरण :	
क.	लड़का रोटी **खा रहा** है → लड़के ने रोटी **खाई।**
ख.	लड़की आम **खा रही** है → लड़की ने आम **खाया।**

(1) महेश लकड़ी काट रहा है → . . . .
(2) शीला फल काट रही है → . . . .
(3) बच्ची खिलौने तोड़ रही है → . . . .
(4) सीता सामान रख रही है → . . . .
(5) मोहन घड़ी पहन रहा है → . . . .
(6) लड़के पुस्तक पढ़ रहे हैं → . . . .

2. नीचे दिए गए उदाहरण के अनुसार वाक्य बदलिए—

उदाहरण : यह कहावत वह कई बार **सुन चुका था।**
→ उसने यह कहावत कई बार **सुनी थी।**

(1) यह कहानी वह कई बार पढ़ चुका था।
→ — — — — — — — —

(2) यह मिठाई वह कई बार खा चुका था।
→ — — — — — — — —

(3) यह शहर मैं कई बार देख चुका था।
→ — — — — — — — —

(4) ऐसा कपड़ा वे कई बार पहन चुके थे।
→ — — — — — — — —

3. "लगना" क्रिया के निम्नलिखित प्रयोगों को ध्यान से पढ़िए—

(1) दीवाल पर घड़ी लगी है। ("लगना" का व्युत्पन्न रूप)
(2) रामचरन जोर से हँसने लगा। (आरंभ सूचक संयुक्त क्रिया)
(3) सब कुछ सिनेमा-जैसा लग रहा था। (अनुभवसूचक मूल क्रिया)
(4) ऊपर दिए गए उदाहरणों के अनुसार निम्नलिखित वाक्यों में "लगना" क्रिया के रूप पहचानिए :
   (1) सुबह से मेरा सिर दुखने लगा।
   (2) मुझे शीला चिन्तित लग रही है।

(3) बाग में बहुत से फूल लगे हैं।
(4) वह अब स्कूल जाने लगा है।
(5) गली में नल लगा हुआ है।
(6) मुझे भी झेंप-सी लगी।

4. हिन्दी में तुलना के तीन सोपान होते हैं, यथा :
लघु → लघुतर → लघुतम
इस उदाहरण के आधार पर नीचे दिए गए शब्दों का तुलनात्मक रूप बनाइए :
(1) अधिक → . . . .
(2) सुंदर → . . . .
(3) बृहत् → . . . .
(4) उच्च → . . . .

II. योग्यता-विस्तार
(1) अपनी कक्षा में "खेती के महत्त्व" पर एक संक्षिप्त भाषण दीजिए।
(2) इस पाठ में आए मुहावरे छाँटिए और उनका वाक्यों में प्रयोग कीजिए।

शब्दार्थ और टिप्पणी

चूक = भूल, गलती
कुदरत = प्रकृति
जाहिल = गँवार, मूर्ख
पंचभूत = पाँच तत्व—पृथ्वी, जल, अग्नि, आकाश और वायु।
पंचगव्य = गाय से प्राप्त पाँच वस्तुएँ—दूध, दही, घी, गोमूत्र, गोबर
दिलचस्पी = रुचि, पसंद
ठूँठी = फसल काटने के बाद खेतों में बची गड़ी हुई लकड़ी
सार्वभौमिक = जो सब स्थानों में एक समान रहे
रिसर्च (अंग्रेजी) = खोज, शोध
हाथ लगाना = शुरू करना
दंग रह जाना = आश्चर्य-चकित होना
बात टाल देना = बात बदल देना
हताश हो जाना = निराश हो जाना
टिप्पणी :

1. उत्तम खेती मध्यम बान,
   अधम चाकरी भीख निदान।
   यह कहावत घाघ कवि की है। कवि का कथन है कि व्यवसाये
   उत्तम है—खेती करना। उसके बाद व्यापार, फिर किसी की नौ
   और सबसे निम्न है—भीख माँगना।
2. "पर फारसी पढ़कर जिस प्रकार तेल नहीं बेचा जा सकता"—ले
   का संकेत एक कहावत की ओर है— पढ़े फारसी बेचे तेल,
   देखो किस्मत का खेल—इस कहावत का आशय है शिक्षा
   योग्यता के अनुरूप व्यवसाय न मिलना।

मन्नू भंडारी

श्रीमती मन्नू भंडारी का जन्म 3 अप्रैल 1931 ई. को भानुपुरा, राजस्थान में हुआ था। उनकी प्रारंभिक शिक्षा अजमेर में हुई। बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय से उन्होंने हिन्दी में एम.ए. किया। कुछ समय तक कलकत्ता में अध्यापन-कार्य करने के बाद वे मिरांडा हाऊस, दिल्ली विश्वविद्यालय में प्राध्यापिका नियुक्त हुईं। यहीं से उन्होंने अवकाश ग्रहण किया।

मन्नू भंडारी की कहानियों में नारी जीवन की व्यथा का सशक्त चित्रण किया गया है। इनकी कहानियों में घटना-तत्व का अनावश्यक विस्तार न होकर पात्रों के मनोवैज्ञानिक विश्लेषण पर बल दिया गया है। उन्होंने पारिवारिक जीवन और समाज के विभिन्न वर्गों के जीवन की विसंगतियों को विशेष रूप से उभारा है। उनकी भाषा में आक्रोश और व्यंग्य व्यक्त हुआ है।

मन्नू भंडारी के प्रमुख कहानी संग्रह हैं— मैं हार गई, एक प्लेट सैलाब, तीन निगाहों की एक तस्वीर और यही सच है। उनकी कुछ कहानियों का विभिन्न भारतीय भाषाओं में अनुवाद हुआ है और कुछ पर फिल्में भी बनी हैं। कहानियों के अतिरिक्त उन्होंने उपन्यास भी लिखे हैं, जिनमें उल्लेखनीय हैं—"आपका बंटी" और "महाभोज"।

5

अकेली

['अकेली' एक मनोवैज्ञानिक कहानी है। कहानी की नायिका सोमा बुआ है। उसके एकमात्र पुत्र का निधन हो जाता है। इस प्रकार वह नितांत अकेली हो जाती है। अपने अकेलेपन की उदासी को वह पास-पड़ोस के काम-काज में सक्रिय होकर दूर करने का प्रयास करती है। उसे उस समय बड़ा आघात लगता है कि जब उसका समधी उसे एक विवाह समारोह में आमंत्रित नहीं करता। इस समारोह में बुलाए जाने का उसे पूरा विश्वास था और उसके लिए वह बड़ी उत्सुक थी। कहानीकार ने सोमा बुआ की मनोव्यथा का बड़ा मार्मिक चित्रण किया है।]

सोमा बुआ बुढ़िया है।
सोमा बुआ परित्यक्ता है।
सोमा बुआ अकेली है।

सोमा बुआ का जवान बेटा क्या जाता रहा, उनकी अपनी जवानी चली गई। पति को पुत्र वियोग का ऐसा सदमा लगा कि वे पत्नी, घर बार तज कर तीरथवासी हुए और परिवार में कोई ऐसा सदस्य था नहीं जो उनके एकाकीपन को दूर करता। पिछले बीस वर्षों से उनके जीवन की इस एकरसता में किसी प्रकार कोई व्यवधान उपस्थित नहीं हुआ। कोई परिवर्तन नहीं आया। यों हर साल एक महीने के लिए उनके पति उनके पास आकर रहते थे, पर कभी उन्होंने पति की प्रतीक्षा नहीं की, उनकी राह में आँखें नहीं बिछाईं। जब तक पति रहते उनका मन और भी मुर्झाया हुआ रहता, क्योंकि पति के स्नेहहीन व्यवहार का अंकुश उनके रोजमर्रा के जीवन की अबाधगति से बहती स्वच्छंद धारा को कुंठित कर देता। उस समय

उनका घूमना-फिरना, मिलना-जुलना बंद हो जाता और सन्यासी जी महाराज से यह भी नहीं होता कि दो मीठे बोल बोलकर सोमा बुआ को एक ऐसा संबल ही पकड़ा दें, जिसका आसरा लेकर वह उनके वियोग के ग्यारह महीने काट जाए। इस स्थिति में बुआ को अपनी जिन्दगी आसपास वालों के भरोसे ही काटनी पड़ती थी। किसी के घर मुंडन हो, छठी हो, जनेऊ हो, शादी हो या गमी, बुआ पहुँच जातीं और फिर छाती फाड़कर काम करतीं। मानो वे दूसरे के घर में नहीं, अपने ही घर में काम कर रही हों।

आजकल सोमा बुआ के पति आए हुए हैं और अभी-अभी कुछ कहा-सुनी हो चुकी है। बुआ आँगन में बैठी धूप खा रही हैं, पास रखी कटोरी से तेल लेकर हाथों में मल रही हैं और बड़बड़ा रही हैं। इस एक महीने में अन्य अवयवों के शिथिल हो जाने के कारण उनकी जीभ ही सबसे अधिक सजीव और सक्रिय हो उठती है। तभी हाथ में एक फटी साड़ी और पापड़ लेकर ऊपर से राधा भाभी उतरीं।

"क्या हो गया बुआ, क्यों बड़बड़ा रही हो ? फिर सन्यासी जी महाराज ने कुछ कह दिया ?"

"अरे मैं कहीं चली जाऊँ सो इन्हें नहीं सुहाता। कल चौक वाले किशोरी लाल के बेटे का मुंडन था, सारी बिरादरी का न्योता था। मैं तो जानती थी कि ये पैसे का गरूर है कि मुंडन पर भी सारी बिरादरी को न्योता है, पर काम उन नई-नवेली बहुओं से संभलेगा नहीं, सो जल्दी ही चली गई। हुआ भी वही, और सरककर बुआ ने राधा के हाथ से पापड़ लेकर सुखाने शुरू कर दिए। एक काम गत से नहीं हो रहा था। अब घर में कोई बड़ा-बूढ़ा हो तो बतावे या कभी किया हो तो जानें। गीत वाली औरतें मुंडन पर बन्नी गा रही थीं। मेरा तो हँसते-हँसते पेट फूल गया और उसकी याद से ही कुछ देर पहले का दुख और आक्रोश घुल गया। अपने सहज स्वाभाविक रूप में वे कहने लगीं— भट्टी पर देखो तो अजब तमाशा— समोसे कच्चे ही उतार दिए और इतने बना दिए कि दो बार खिला दो, और गुलाब जामुन इतने कम कि एक पंगत में भी पूरे न पड़े। उसी समय

मैदा सानकर नये गुलाब जामुन बनाए। दोनों बहुएँ और किशोरी ला
तो बेचारे इतना जस मान रहे थे कि क्या बताऊँ।" कहने लगे-
"अम्मा ! तुम न होतीं तो क्या भद्द उड़ जाती। अम्मा ! तुमने ला
रख ली।" मैंने तो कह दिया कि "अपने ही काम न आवेंगे तो को
बाहर से तो आवेगा नहीं। ये तो आजकल इनका रोटी-पानी का का
रहता है, नहीं तो सबेरे से ही चली जाती।"

"तो सन्यासी महाराज क्यों बिगड़ पड़े ? उन्हें तुम्हारा आना-जा
अच्छा नहीं लगता बुआ ?"

"यों तो मैं कहीं आऊँ-जाऊँ सो ही इन्हें नहीं सुहाता और फि
कल किशोरी के यहाँ से बुलावा नहीं आया। अरे, मैं तो कहूँ कि घ
वालों का कैसा बुलावा ? वे लोग तो तुझे अपनी माँ से कम न
समझते, नहीं तो कौन भला यों भट्टी और भंडार-घर सौंप दे ? प
उन्हें अब कौन समझाए ?" तो कहने लगे—"तू जबरदस्ती दूसरों
घर में टाँग अड़ाती फिरती है।" और एकाएक उन्हें उस क्रोध भ
वाणी और कटु वचनों का स्मरण हो आया जिनकी बौछार कुछ दे
पहले ही उन पर हो चुकी थी। याद आते ही फिर उनके आँसू ब
चले।

"अरे रोती क्या हो बुआ ! कहना-सुनना तो चलता ही रहता है
सन्यासी जी महाराज एक महीने को तो आकर रहते हैं, सुन लिय
करो; और क्या ?"

"सुनने को तो सुनती ही हूँ, पर मन तो दुखता ही है कि ए
महीने को आते हैं तो भी कभी मीठे बोल नहीं बोलते। मेरा आना-जान
इन्हें सुहाता नहीं। सो तू ही बता राधा. ये तो साल में ग्यारह मही
हरिद्वार रहते हैं। इन्हें तो नाते-रिश्ते वालों से कुछ लेना-देना नहीं, प
मुझे तो सबसे निभाना पड़ता है। मैं भी सबसे तोड़ताड़ कर बैठ जाऊँ
तो कैसे चले। मैं तो इनसे कहती हूँ कि जब पल्ला पकड़ा है त
अन्त समय में भी साथ ही रखो। सो तो इनसे होता नहीं। सार
धर्म-कर्म ये ही लूटेंगे, सारा जस ये ही बटोरेंगे और मैं अके
पड़ी-पड़ी यहाँ इनके नाम को रोया करूँ। उस पर से कहीं आऊँ-जाऊँ

वह भी इनसे बर्दाश्त नहीं होता . . . . . .।" और बुआ फूट-फूट कर रो पड़ीं। राधा ने आश्वासन देते हुए कहा, "रोओ नहीं बुआ अरे वे तो इसलिए नाराज हुए कि बिना बुलाए तुम चली गईं।"

"बेचारे इतने हंगामे में बुलाना भूल गए तो मैं भी मान कर के बैठ जाती ? फिर घरवालों का कैसा बुलाना ? मैं तो अपनेपन की बात जानती हूँ। कोई प्रेम नहीं रखे तो दस बुलावे पर नहीं जाऊँ और प्रेम रखे तो बिना बुलाए भी सिर के बल जाऊँ। मेरा अपना हरखू होता और उसके घर काम होता तो क्या मैं बुलावे के भरोसे बैठी रहती ? मेरे लिए जैसा हरखू वैसा किशोरी लाल ! आज हरखू नहीं है इसी से दूसरों को देख-देख कर मन भरमाती रहती हूँ।" और वे हिचकियाँ लेने लगीं।

सूखे पापड़ों को बटोरते-बटोरते स्वर को भरसक कोमल बनाकर राधा ने कहा, "तुम भी बुआ बात को कहाँ से कहाँ ले गईं ? लो अब चुप होओ, पापड़ भूनकर लाती हूँ, खाकर बताना कैसा है ?" और वह साड़ी को समेटकर ऊपर चढ़ गई।

कोई सप्ताह भर बाद बुआ बड़े प्रसन्न मन से आईं, और सन्यासी जी से बोलीं, "सुनते हो, देवर जी के ससुराल वालों की किसी लड़की का संबंध भागीरथ जी के यहाँ हुआ है। वे सब लोग यहीं आकर ब्याह कर रहे हैं। देवर जी के बाद तो उन लोगों से कोई संबंध भी नहीं रहा, फिर भी हैं तो समधी ही। वे तो तुमको भी बुलाए बिना नहीं मानेंगे। समधी को आखिर कैसे छोड़ सकते हैं ?" और बुआ पुलकित होकर हँस पड़ीं। सन्यासी जी की मौन उपेक्षा से उनके मन को ठेस तो पहुँची फिर भी वे प्रसन्न थीं। इधर-उधर जाकर वे इस विवाह की प्रगति की खबरें लातीं। आखिर एक दिन वे यह भी सुन आईं कि उनके समधी यहाँ आ गए हैं। जोर-शोर से तैयारियाँ हो रही हैं। सारी बिरादरी को दावत दी जाएगी खूब रौनक होने वाली हैं। दोनों ही पैसे वाले ठहरे।

"क्या जानें हमारे घर को बुलावा आएगा या नहीं ? देवर जी को मरे पच्चीस वर्ष हो गए, उसके बाद से तो कोई संबंध ही नहीं

रखा। रखे भी कौन ? यह काम तो मरदों का होता है, मैं त
मरदवाली होकर भी बेमरद की हूँ।" और एक ठंडी साँस उनके दि
से निकल गई।

'अरे वाह बुआ ! तुम्हारा नाम कैसे नहीं हो सकता। तुम त
समधिन ठहरीं। संबंध न रहे तो कोई रिश्ता थोड़े ही टूट जाता है।
दाल पीसती हुई घर की बड़ी बहू बोली।

'है, बुआ, नाम है। मैं तो सारी लिस्ट देखकर आई हूँ।
विधवा ननद बोली। बैठे ही बैठे कदम आगे सरकाकर बुआ ने ब
उत्साह से पूछा, "तू अपनी आँखों से देखकर आई है नाम ? नाम त
होना ही चाहिए। पर मैंने सोचा कि क्या जानें आजकल के फैशन
पुराने संबंधियों को बुलाना हो, ना हो।" और बुआ बिना दो प
भी रुके वहाँ से चल पड़ीं। अपने घर जाकर सीधे राधा भाभी के क
में चढ़ीं। "क्यों री राधा, तू तो जानती है कि नए फैशन में लड़
की शादी में क्या दिया जाता है ? समधियों का मामला ठहरा, स
भी पैसे वाले ! खाली हाथ जाऊँगी तो अच्छा नहीं लगेगा। मैं त
पुराने जमाने की ठहरी, तू ही बता दे, क्या दूँ ? अब कुछ बनने क
का समय तो रहा नहीं, दो दिन बाकी हैं, सो कुछ बना-बनाया ।
खरीद लाना।"

"क्या देना चाहती हो अम्मा, ज़ेवर, कपड़ा या श्रृंगारदान य
कोई और चाँदी की चीजें ?"

"मैं तो कुछ भी नहीं समझूँ री। जो कुछ पास है तुझे लाकर
देती हूँ, जो तू ठीक समझे ले आना, बस भद्द नहीं उड़नी चाहिए
अच्छा देखूँ पहले कि रुपये कितने हैं ?" और वे डगमगाते कदमों
नीचे आईं। दो-तीन कपड़ों की गठरियाँ हटाकर एक छोटा-सा बक
निकाला। उसका ताला खोला। इधर-उधर करके एक छोटी-सी डिबि
निकाली। बड़े जतन से उसे खोला— उसमें सात रुपए और कु
रेजगारी पड़ी थी और एक अँगूठी। बुआ का अनुमान था कि रुप
कुछ ज्यादा होंगे, पर जब सात ही रुपए निकले तो सोच में पड़ गई
रईस समधियों के घर में इतने से रुपए से तो बिन्दी भी नहीं लगेगी

उनकी नजर अँगूठी पर गई। यह उनके मृत पुत्र की एकमात्र निशानी उनके पास रह गई थी। बड़े-बड़े आर्थिक संकटों के समय भी वे उस अँगूठी का मोह नहीं छोड़ सकी थीं। आज भी एक बार उसे उठाते समय उनका दिल धड़क गया फिर उन्होंने पाँच रुपए और वह अँगूठी आँचल से बाँध ली। बक्स को बंद किया और फिर ऊपर को चलीं, पर इस बार उनके मन का उत्साह कुछ ठंडा पड़ गया था और पैरों की गति शिथिल ! राधा के पास जाकर बोलीं, "रुपए तो नहीं निकले बहू। आएँ भी कहाँ से, मेरे कौन कमानेवाला बैठा है ? उस कोठरी का किराया आता है, उसमें तो दो समय की रोटी निकल जाती है जैसे-तैसे।" और वे रो पड़ीं। राधा ने कहा, "क्या करूँ बुआ, आजकल मेरा भी हाथ तंग है; नहीं तो मैं ही दे देती। अरे, पर तुम देने के चक्कर में पड़ती ही क्यों हो ? आजकल तो देने-लेने का रिवाज ही उठ गया है।"

"नहीं रे राधा ! समधियों का मामला ठहरा ! पच्चीस बरस हो गए तो भी वे नहीं भूले और मैं खाली हाथ जाऊँ ? नहीं-नहीं, इससे तो न जाऊँ सो ही अच्छा।"

"तो जाओ ही मत। चलो छुट्टी हुई, इतने लोगों में किसे पता लगेगा कि आईं या नहीं।" राधा ने सारी समस्या का सीधा-सा हल बताते हुए कहा।

"बड़ा बुरा मानेंगे। सारे शहर के लोग जावेंगे, और मैं समधिन होकर नहीं जाऊँगी तो यही समझेंगे कि देवर जी मरे तो संबंध भी तोड़ लिया है। नहीं-नहीं, तू यह अंगूठी बेच ही दे।" और उन्होंने आँचल की गाँठ खोलकर एक पुराने ज़माने की अँगूठी राधा के हाथ पर रख दी। फिर बड़ी मिन्नत के स्वर में बोलीं, "तू तो बाजार जाती है राधा, इसे बेच देना और जो कुछ ठीक समझे खरीद लेना। बस, शोभा रह जावे इतना ख्याल रखना।"

गली में बुआ ने चूड़ी वाले की आवाज़ सुनी तो एकाएक ही उनकी नज़र अपने हाथ की भद्दी मटमैली चूड़ियों पर जाकर टिक गई। कल समधियों के यहाँ जाना है। ज़ेवर नहीं हैं तो कम से कम

काँच की चूड़ी तो अच्छी पहन लें। पर एक अव्यक्त लाज ने उनके कदमों को रोक दिया, कोई देख लेगा तो। लेकिन दूसरे क्षण ही अपनी इस कमज़ोरी पर विजय पाती-सी वे पीछे के दरवाजे पर पहुँच गईं और एक रुपया कलदार खर्च करके लाल-हरी चूड़ियों के बंद पहन लिए। पर सारे दिन हाथों को साड़ी के आँचल से ढके-ढके फिरीं।

शाम को राधा भाभी ने बुआ को चाँदी की एक सिन्दूरदानी, एक साड़ी और एक ब्लाउंज का कपड़ा लाकर दे दिया। सब कुछ देख-पाकर बुआ बड़ी प्रसन्न हुई, और यह सोच-सोच कर कि जब वे यह सब दे देंगी तो उनकी समधिन पुरानी बातों की दुहाई दे-देकर उनकी मिलनसारिता की कितनी प्रशंसा करेगी, उनका मन पुलकित होने लगा। अँगूठी बेचने का गम भी जाता रहा। पास वाले बनिये के यहाँ से एक आने का पीला रंग लाकर रात में उन्होंने साड़ी रंगी। शादी में सफेद साड़ी पहनकर जाना क्या अच्छा लगेगा ? रात में सोईं तो मन कल की ओर दौड़ रहा था।

दूसरे दिन नौ बजते-बजते खाने का काम समाप्त कर डाला। अपनी रँगी हुई साड़ी देखी तो कुछ जँची नहीं। फिर ऊपर राधा के पास पहुँची, "क्यों राधा, तू तो रंगी साड़ी पहनती है तो बड़ी आब रहती है, चमक रहती है, इसमें तो चमक आई ही नहीं ?"

"तुमने कलफ जो नहीं लगाया अम्मा। थोड़ा-सा माँड दे देतीं तो अच्छा रहता। अभी दे लो, ठीक हो जाएगी। बुलावा कब का है ?"

"अरे नये फैशन वालों की मत पूछो ऐन मौकों पर बुलावा आता है। पाँच बजे का मुहूरत है दिन में कभी भी आ जावेगा।"

राधा भाभी मन ही मन मुस्करा उठी।

बुआ ने साड़ी में माँड लगाकर सुखा दिया। फिर एक नई थाली निकाली, अपनी जवानी के दिनों में बुना हुआ क्रोशिये का एक छोटा-सा मेजपोश निकाला। थाली में साड़ी, सिंदूरदानी, एक नारियल और थोड़े से बताशे सजाए, फिर जाकर राधा को दिखाया। सन्यासी महाराज सवेरे से इस आयोजन को देख रहे थे और उन्होंने कल से

लेकर आज तक कोई पच्चीस बार चेतावनी दे दी थी कि यदि कोई बुलाने न आए तो चली मत जाना, नहीं तो ठीक नहीं होगा। हर बार बुआ ने बड़े ही विश्वास के साथ कहा, "मुझे क्या बावली ही समझ रखा है जो बिना बुलाए चली जाऊँगी ? अरे, वह पड़ोसवालों की नंदा, अपनी आँखों से बुलावे की लिस्ट में नाम देखकर आई है। और, बुलाएँगे क्यों नहीं ? शहर वालों को बुलाएँगे और समधियों को नहीं बुलाएँगे क्या ?"

तीन बजे के करीब बुआ को अनमने भाव से छत पर इधर-उधर घूमते देख राधा भाभी ने आवाज लगाई, "गईं नहीं बुआ, ?"

एकाएक चौंकते हुए बुआ ने पूछा— "कितने बज गए राधा ? .... क्या कहा तीन ? सरदी में तो दिन का पता ही नहीं लगता है। बजे तीन ही हैं और धूप सारी छत पर ऐसे सिमट गई मानो शाम हो गई हो।" फिर एकाएक जैसे ख्याल आया कि यह तो भाभी के प्रश्न का उत्तर नहीं हुआ तो जरा ठंडे स्वर में बोलीं, "मुहूरत तो पाँच बजे का है, जाऊँगी तो चार तक जाऊँगी, अभी तो तीन ही बजे हैं।" बड़ी सावधानी से उन्होंने स्वर में लापरवाही का पुट दिया। बुआ छत पर से गली में नज़र फैलाए खड़ी थी। उनके पीछे ही रस्सी पर धोती फैली हुई थी जिसमें कलफ लगा था और अभ्रक छिड़का हुआ था। अभ्रक के बिखरे हुए कण रह-रह कर धूप में चमक जाते थे। ठीक वैसे ही जैसे किसी को भी गली में घुसता देख बुआ का चेहरा चमक उठता था।

सात बजे के धुँधलके में राधा ने ऊपर से देखा तो छत की दीवार से सटी गली की ओर मुँह किए एक छाया-मूर्ति दिखाई दी। उसका मन भर आया। बिना कुछ पूछे इतना ही कहा, "बुआ ! सरदी में खड़ी-खड़ी यहाँ क्या कर रही हो ? आज खाना नहीं बनेगा क्या ? सात तो बज गए ?"

जैसे एकाएक नींद में से जागते हुए बुआ ने पूछा, " क्या कहा, सात बज गए ?" फिर जैसे अपने से ही बोलते हुए पूछा, "पर सात कैसे बज सकते हैं, मुहूरत तो पाँच बजे का था।" और फिर एकाएक

ही सारी स्थिति को समझते हुए स्वर को भरसक संयत बनाकर बो
"अरे खाने का क्या है, अभी बना लूँगी। दो जनों का तो खाना
क्या खाना और क्या पकाना।"

फिर उन्होंने सूखी साड़ी को उतारा। नीचे जाकर अच्छी त
उसकी तह की, धीरे-धीरे हाथों से चूड़ियाँ खोलीं, थाली में सजा
हुआ सारा सामान उठाया और सारी चीजें बड़े जतन से अप
एकमात्र संदूक में रख दीं।

और फिर बड़े ही बुझे हुए दिल से अँगीठी जलाने लगीं।

प्रश्न- अभ्यास

I. विचार-बोध

1. वर्ष में केवल एक महीने के लिए पति के घर आने पर सोमा बु
का जीवन और भी अधिक दूभर क्यों हो जाता था ?
2. पास-पड़ोस के कामकाज में बुआ बड़े उत्साह से क्यों भाग लेती थीं
सही उत्तर छाँटिए :
   (क) उन्हें इन कामों में बड़ा मज़ा आता था।
   (ख) इससे उनकी उदासी और अकेलापन दूर हो जाता था।
   (ग) लोगों से उन्हें प्रशंसा मिलती थी।
   (घ) नाते-रिश्तेदारी का निर्वाह हो जाता था।
3. किस ललक ने सीमा बुआ को अपने मृत पुत्र की एक मात्र निशा
बेचने को विवश कर दिया ?
4. सोमा बुआ हाथों की लाल-हरी चूड़ियों को साड़ी के आँचल
छुपाने का प्रयत्न क्यों कर रही थीं ?
5. समधी के यहाँ विवाह में भाग लेने के लिए सोमा बुआ ने क्या-क
तैयारियाँ कीं ?
6. समधी की ओर से निमंत्रण न मिलने पर बुआ के मन पर क
गुजरी, कल्पना करके लिखिए।
7. निम्नांकित कथनों के अर्थ स्पष्ट कीजिए—
   (क) पिछले बीस वर्षों से उनके जीवन की इस एकरसता में कि
   प्रकार का कोई व्यवधान उपस्थित नहीं हुआ।

(ख) मैं तो इनसे कहती हूँ कि जब पल्ला पकड़ा है तो अंत समय में भी साथ ही रखो, सो तो इनसे होता नहीं।

(ग) मुझे क्या बावली ही समझ रखा है जो बिना बुलाए चली जाऊँगी ?

(घ) पर सात कैसे बज सकते हैं, मुहूरत तो पाँच बजे का था।

II. भाषा-प्रयोग

1. "जतन" तद्भव शब्द का तत्सम रूप है—"यत्न" और "जस" का "यश"। निम्नलिखित तद्भव शब्दों के तत्सम रूप लिखिए—

घर—

ब्याह—

धरम-करम—

मुहूरत—

2. दो शब्दों के जुड़ने को युग्म कहते हैं। इसके प्रयोग से अर्थ में चमत्कार आ जाता है। पाठ में कई शब्द-युग्म हैं। उन्हें छाँटकर लिखिए—

उदाहरण : हँसते-हँसते, खड़ी-खड़ी

3. नीचे लिखे वाक्यों को उदाहरण के अनुसार बदलिए—

उदाहरण : वह कटोरी से तेल लेकर हाथों में **मले ही जा रही है**।
→ वह कटोरी से तेल लेकर हाथों में **मल रही है**।

1. बुआ आँगन में बैठी धूप खाए ही जा रही है।
2. वह दो घंटे से बड़बड़ाए ही जा रही है।
3. रमेश छत से जुलूस को देखे ही जा रहा है।
4. सुनील और सादिक सुबह से सोए ही जा रहे हैं।
5. सीता और गीता दो घंटे से फिल्मी गीत गाए ही जा रही हैं।
6. "सिंदूरदानी" शब्द में "सिंदूर" शब्द के साथ "दानी" प्रत्यय लगा है। इस प्रत्यय के योग से चार शब्द बनाइए।

III. योग्यता-विस्तार

1. 'अकेली' कहानी से मिलती-जुलती अपनी प्रथम भाषा की कोई कहानी पढ़िए।
2. यदि सोमा बुआ का पति उससे दो मीठे बोल बोलता . . . . ? पाँच वाक्यों में बात पूरी कीजिए।

शब्दार्थ और टिप्पणी

परित्यक्ता	=	जिसे पति ने त्याग दिया हो
सदमा		गहरी चोट
गमी	=	शोक
व्यवधान	=	रुकावट
स्वच्छन्द	=	आज़ाद, उन्मुक्त
आक्रोश	=	नाराज़गी, क्रोध
अबाध	=	बेरोकटोक, बाधा रहित
मिन्नत	=	विनती
क़लदार	=	चाँदी का रुपया
पुलकित		प्रसन्न
आब	=	चमक, आभा
धुँधलका	=	हल्की रोशनी (अंधेरा-सा)
समधी	=	वधू और वर के पिता आपस में समधी होते हैं
बन्नी	=	दुल्हन, लड़की के विवाह के अवसर पर गाये जाने वाले लोकगीत
एक काम गत से नहीं हो रहा था	=	कोई काम कायदे से नहीं हो रहा था!

प्रभाकर द्विवेदी

प्रभाकर द्विवेदी का जन्म सन् 1935 ई. में मध्य प्रदेश के धार (पूर्व रियासत) में हुआ। उनका बचपन मध्य प्रदेश और राजस्थान में बीता तथा शिक्षा लखनऊ में हुई। प्रारंभ में उन्होंने भारतीय ज्ञानपीठ एवं काशी नागरी प्रचारिणी सभा में कार्य किया, वहाँ हिन्दी विश्वकोश में सहायक संपादक रहे। इसके बाद कुछ समय के लिए राउरकेला स्टील प्लांट में नौकरी की। सन् 1963 से दिल्ली में हैं। 'उत्तर प्रदेश के हिन्दी संस्थान और दिल्ली की हिन्दी अकादमी ने उन्हें अपने साहित्य पुरस्कारों से सम्मानित किया है।

प्रभाकर द्विवेदी में जीवन और जगत को गहराई से देखने की लालसा बड़ी प्रबल है। इसलिए उनका मन यात्रा वृत्तांत लिखने में विशेष रूप से रमा है। उन्होंने अनेक कहानियों और उपन्यासों की भी रचना की है। अनेक प्राकृतिक दृश्यों, वनस्पतियों, लोक-संस्कृति तथा जन-जीवन की विविध समस्याओं का अत्यंत मनोहारी चित्रण उन्होंने किया है। इन्हें पढ़कर मन-मस्तिष्क में यात्रा-स्थलों के संबंध में और अधिक जानने की उत्सुकता पैदा होती है। उनकी भाषा बड़ी जीवंत है जो स्थानीय शब्दावली के प्रयोग से यथार्थ के और भी निकट आ गई है।

उनकी यात्रा-विवरण की पुस्तकें हैं— "पार उतरि कहँ जइहौ" और "धूप में सोई नदी"। अब तक उनके तीन कहानी-संग्रह प्रकाशित हुए हैं— "इकाइयों के बीच' "कागा चुनि-चुनि खाइयो" और "सात दर्पणों की निर्मला"। उनके प्रमुख उपन्यास हैं— "किसको नमन करूँ", "फिर बहुत दिन बाद", "वही आदिम आँच" और "शीतला बहू का प्रणय प्रसंग । इसके अतिरिक्त विविध विषयों पर उनकी अनेक पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं।

6

सागर-तट के आस-पास

[प्रस्तुत पाठ एक यात्रा वृत्तांत है। लेखक ने बंगाल और उड़ीसा के समुद्रतट पर स्थित दीघा तथा रतनपुर के प्राकृतिक दृश्यों का बड़ा ही मनोरम चित्रण प्रस्तुत किया है। इस यात्रा के बीच पड़ने वाले स्थलों के प्राकृतिक दृश्यों तथा ग्रामीण परिवेश का भी मनोहारी वर्णन किया गया है। चित्रात्मक शब्दावली के प्रयोग ने प्राकृतिक दृश्यों के इस वर्णन को साकार और सजीव कर दिया है।]

दीघा—बंगाल का सागर-तट। घूमने, समुद्र-स्नान करने और आनंद मनाने के लिए रमणीक स्थान। झाऊ और केतकी के वनों तथा निर्जन सागर-तट की शोभा वाला बंग प्रदेश — दीघा। पश्चिमी बंगाल के मेदिनीपुर का ग्राम दीघा।

दीघा से तीन मील और आगे उड़ीसा में चुंदनेश्वर का मंदिर है। रास्ता ग्रामीण है— पगडंडी वाला, ताड़, नारिकेल के पेड़ों से भरा हुआ। धान के खेत हैं—हरे-भरे, सरसराते हुए। बीच-बीच में पान के भीटे मिलते हैं जिन्हें उड़ीसा के काले-लम्बे कृषक सींच रहे थे। काले-लम्बे उनके मिट्टी के घड़े भी होते हैं। केवल एक लँगोटी लगाए वे पुकुर (पुष्कर) में से पानी भर लाते हैं और छाँह में कुम्हालते हुए पानों की तृष्णा शांत करते हैं।

सफेद उजले फूलों और चिकने-चिकने पत्तों वाले पोलडं गाछ इधर बहुतायत से हैं। बीच-बीच में कटहल और काजू के पेड़ मिलते हैं। बाँस की झाड़ियाँ बहुत हैं। श्वेत कुमुदिनी और लाल, बैंगनी कमलों से तालाब और खेत भरे हैं। घासों में छुई-मुई भी खूब है जिसे इधर 'नींद कुरी' कहते हैं।

इधर कुएँ नहीं होते। तालों का पानी उपयोग में लाते हैं। गाँवों में घरों के आगे और खेतों के किनारे हैंडपम्प मिलते हैं। शायद ये सरकार की ओर से लगवा दिए गए हैं। रास्ते में एक टूटी-फूटी इमारत मिली। वह बच्चों का प्राइमरी स्कूल था।

चंदनेश्वर में शिव का मंदिर है। दर्शनार्थी चार-पाँच ही थे लेकिन पंडे चालीस-पचास रहे होंगे। व्यवहार में पंडे बनारसी थे। मंदिर से दक्षिण को एक सँकरी सड़क चली गई है। बीच-बीच में वह पगडंडी बन जाती है। उसी से चलकर सागर-तट पर पहुँचा। यहाँ रतनपुर के इस तट और दीघा के तट में बड़ा अंतर है। वहाँ तो झाऊ और केतकी के वन थे। यहाँ दूर तक फैला हुआ है—बालू का रेगिस्तान। जहाँ तक दृष्टि जाती थी, बालू ही बालू। रेत के मैदान भी थे और बड़े-बड़े टीले भी। हवा ने उन पर अपनी मार के निशान छोड़ दिए थे। नीचे रेत तप रही थी और ऊपर चीलें मँडरा रही थीं। उनकी बड़ी-बड़ी काली परछाइयाँ बालू पर भाग रही थीं।

इस सिकता-प्रांतर को पार कर नीचे की ओर उतरा तो सामने दिखा विशाल सागर। पहले श्मशान है। जली-अधजली लकड़ियाँ। बाँस के ठट्टे और खपच्चियाँ। कपड़ा जलने की सी दुर्गंध।

तट पर एक किनारे है जहाज़ — मछलियाँ भरकर ले जाएगा कलकत्ता को। दूर तक पानी में मछुवारे खड़े हैं— जाल समेटते हुए। रात के अंधेरे में ही नौकाएँ समुद्र में काफी दूर जाकर जाल फैला आती हैं। फिर माँझी मिलकर जाल खींचते हैं। कई वर्ग किलोमीटर क्षेत्र की मछलियों को बटोरता हुआ जाल किनारे की ओर आता है। कई घंटों की मेहनत के बाद टनों मछलियाँ निकाली जाती हैं। झाबों में, बहँगी पर लादकर ये सब किनारे पर लाई जाती हैं। यहाँ छान-बीन होती है—बीमार और अखाद्य जीवों को कौन खाएगा। तौल-बाँट होती है। दर्शक कोई नहीं होता। सब होते हैं श्रमिक-मछुवे, मछुवारिनें, उनके बच्चे और कुत्ते। मछलियों के साथ निकल आते हैं—शंख, सीपी, घोंघे, केकड़े और विचित्र रूप-रंग वाले समुद्री जीव-जंतु। व्यवसाय-बुद्धि खाद्य को ग्रहण कर शेष को तट पर फेंक

देती है। ज्वार के आने पर सर्वभक्षी सागर उन्हें पुनः आत्मसात् कर लेता है।

तीसरे पहर झाऊ के वनों में टहलने निकला। झाऊ के बड़े-बड़े पेड़ पंक्तिबद्ध हैं अर्थात् जंगल प्राकृतिक नहीं है। सरकार ने लगवाया है। तभी साँस भरने पर लगा कि जैसे भीगी-भीगी-सी खुशबू आ रही है कहीं से।

गंध का पता चला। वन समाप्त हो गाँव प्रारंभ हो जाता है। गाँव के लता-पौधों की, झाड़ियों की, हरियाली की एक अपनी ही गंध होती है। वही आ रही थी। बांस के बाड़े पर तमाम किस्म की बेलें फैली हैं— सेम, लोबिया, केंवाच, लौकी आदि की। सर्वत्र हरियाली है। पत्तों के बीच-बीच से धूप झाँक रही है।

गाँव को पार कर पक्की सड़क पर आ गया। पहली बार देखा कि बहँगी पर ईंटें भी ढोई जा सकती हैं। सड़क के किनारे पेड़ नहीं हैं। धूप अभी भी मंद नहीं हुई थी। ध्यान दिया कि बहुत-से स्त्री-पुरुष तेज़ी से चले जा रहे हैं— हाथ में बोतल पकड़े। कोई-कोई झोला लिए। कोई आ नहीं रहा, सभी एक ही दिशा को भागे जा रहे हैं। समझ गया कि आगे कोई मेला लगा होगा। मैं भी उधर को ही लपकने लगा। मील के कई पत्थर निकल गए पर मेला न आया। काफी आगे जाने पर एक पत्थर मिला। लिखा था— टिकरी हाट, 1/2 किमी., हाट मँगलवार, शनिवार।

बहुत छोटी-सी देहाती हाट है। मिट्टी का तेल, मछली, केकड़ा, केला, डाभ, पान, अँगोछा, धोती आदि के अलावा मटर के बड़े दाने के बराबर प्याज भी बिक रहा था। चाय की कई दुकानें थीं, मिठाई की एक भी नहीं। चाट बेचने वाले कटहल के पत्ते पर चाट और नारियल की सूखी पत्ती का चम्मच दे रहे थे। हाट रात में देर तक चलती है, लालटेनों की रोशनी में।

लालटेन वाले एक पथिक के साथ वापस लौटा। रास्ते भर साँप के भय से डरता रहा। बंगाल में जहाँ भी गया हूँ, लाठी नहीं देखी। हाट-मेले अनेक देखे। साँप-बिच्छू भी देखे। झगड़ा-टंटा भी देखा। प

लाठी किसी के हाथ में नहीं देखी। लोग रात में चलते हैं, तो लालटेन लिए रहते हैं, छाता भी रहता है।

जब दीघा पहुँचा तो सागर-तट पर गया। ज्वार का समय था। लोग लाइट हाउस की रोशनी में किनारे की सड़क और चबूतरे पर बैठे हुए थे। मैं भी वहीं बैठ कर काफी देर तक सागर-संगीत सुनता रहा। निर्जन तट पर लहरें ढाढ़ मार रही हैं। गर्जन कर रही हैं। कुछ देर में उतार होगा ज्वार का। तब भाटा हो जाएगा। सवेरे पानी बहुत दूर खिसक जाएगा।

इसी तरह जीवन-भर चलता रहेगा। लहरें आएँगी, लौट जाएँगी। मन कहता है कि एक बार ये लहरें विद्रोह क्यों नहीं कर देतीं ? नियम में बँधी क्यों चलती हैं ये ? इससे अच्छी तो नदियाँ हैं। बाढ़ आती है तो वे अपना रूप बदल देती हैं, मार्ग बदल देती हैं। पर यह सागर है कि जहाँ है, वहीं है। इसकी अपनी नियति है। उसी में फँसा रहेगा। बेचारा सागर !

प्रश्न-अभ्यास

I. विचार-बोध

1. दीघा से चंदनेश्वर जाने के मार्ग में पड़ने वाले किन दृश्यों का लेखक ने चित्रण किया है ?
2. चन्दनेश्वर के आस-पास के लोग तालाबों का पानी क्यों प्रयोग में लाते हैं ?
3. चन्दनेश्वर मंदिर की स्थिति देखकर लेखक के मन पर क्या प्रभाव पड़ा ?
4. दीघा के समुद्रतट और रतनपुर के समुद्रतट के प्राकृतिक दृश्यों में क्या भिन्नता है ?
5. "ये लहरें विद्रोह क्यों नहीं कर देतीं ?" लेखक ने यह क्यों कहा है ?
6. लेखक ने नदियों को समुद्र से अधिक जीवन्त क्यों बताया है ? सही उत्तर छाँटिए :

   क. नदियाँ बहुत दूर से बहकर आती हैं किन्तु समुद्र जहाँ है वहीं

बना रहता है।

✓ख. नदियाँ समय-समय पर अपना रूप और मार्ग बदल लेती हैं किन्तु सागर का जीवन एक समान रहता है।

ग. समुद्र में ज्वार-भाटे आते रहते हैं और नदियों में बाढ़ आती रहती है।

घ. नदियों की ध्वनि मधुर होती है और समुद्र की ध्वनि में गर्जना होती है।

7. भाव स्पष्ट कीजिए :

क. झाऊ के बड़े-बड़े पेड़ पंक्तिबद्ध हैं, अर्थात्, जंगल प्राकृतिक नहीं हैं।

ख. इसकी अपनी नियति है।

ग. व्यवसाय बुद्धि खाद्य को ग्रहण कर शेष को तट पर फेंक देती है।

II. भाषा-प्रयोग

1. इस निबंध में अनेक वाक्य ऐसे आए हैं जिनमें संक्षिप्तता लाने तथा बल देने के लिए क्रिया का प्रयोग नहीं हुआ है, जैसे—

    (i) दीघा — बंगाल का सागरतट

    (ii) पश्चिम बंगाल के मेदनीपुर का ग्राम—दीघा।

क. इस पाठ से ऐसे पाँच वाक्यों को चुनिए।

ख. चुने हुए वाक्यों में क्रियापद लगाकर उन्हें पूरा कीजिए, जैसे:

    (i) दीघा बंगाल के सागर तट पर स्थित है।

    (ii) दीघा पश्चिमी बंगाल के मेदनीपुर का ग्राम है।

2. "ही" का प्रयोग बल देने के लिए किया जाता है। जैसे— जहाँ तक दृष्टि जाती थी, बालू ही बालू थी।

"ही" लगे हुए निम्नलिखित पदबंधों का अपने वाक्यों में प्रयोग कीजिए :

मैदान ही मैदान, जानवर ही जानवर, पेड़ ही पेड़, पानी ही पानी।

3. 'दर्शनार्थी' शब्द दर्शन+अर्थी से बना है। 'अर्थी' का अर्थ है "चाह रखने वाला"। अर्थी लगाकर पाँच शब्द बनाइए।

III. योग्यता-विस्तार

1. किसी देखे हुए सुन्दर स्थान के प्राकृतिक सौन्दर्य का वर्णन करते हुए अपने मित्र को पत्र लिखिए।

2. सागर-मंथन की पौराणिक कथा कक्षा में सुनाइए।

शब्दार्थ और टिप्पणी

नारिकेल	=	नारियल
रमणीक	=	सुन्दर,. मनमोहक
निर्जन	=	सुनसान
पुकुर	=	तालाब, पोखर (पुष्कर)
तृष्णा	=	प्यास
सिकता-प्रांतर	=	बालू का क्षेत्र
मांझी	=	मल्लाह, नाव चलाने वाला
आत्मसात्	=	पचा लेना, अपना लेना
हाट	=	सड़क पर लगने वाला अस्थायी बाजार
भीटे	=	पान की बेल चढाने के लिए बनाया हुआ टीला (पिन्न)
कुमुदिनी	=	कमलिनी (एक प्रकार का. फूल जो रात्रि में खिलता है)
पोलङ्गाछ	=	एक प्रकार का पेड़
झाऊ	=	वृक्ष विशेष
केतकी	=	एक प्रकार का फूल (केवड़ा)
बहँगी	=	बाँस के डण्डे के दोनों छोरों पर छीका लटकाकर बोझा ढोने का साधन
डाभ	=	हरा नारियल
ढाढ़	=	दहाड़, गर्जना, विलाप का स्वर

1. इस निबन्ध को पढ़कर हमें भारतीय जन-जीवन को जानने, समझने और पास से देखने की प्रेरणा मिलती है।

2. पोड़े ढोंगी, कपटी, लालची

3. प्रस्तुत लेख में बंगाली जन जीवन का सजीव चित्रण
सागर तट पर रहने वाले लोगों के जीवन का एक यथार्थ प्रस्तुत किया गया है।

4. मछली उद्योग यहाँ के लोगों का उद्यम आता है।

महावीर प्रसाद द्विवेदी

महावीर प्रसाद द्विवेदी का जन्म सन् 1864 ई. में रायबरेली जिले के दौलतपुर गाँव में हुआ। उनकी प्रारंभिक शिक्षा गाँव की पाठशाला में हुई कुछ दिन तक रायबरेली के जिला स्कूल, उन्नाव जिले के रनजीत पुरव स्कूल तथा फतेहपुर के स्कूल में पढ़ने के बाद आप अपने पिता रामसहाय द्विवेदी के पास बंबई चले गए। वहाँ उन्होंने संस्कृत, गुजराती, मराठी और अंग्रेजी भाषा का अध्ययन किया। आजीविका के लिए आपने नागपुर अजमेर, बम्बई और झाँसी में रेलवे की नौकरी की परन्तु बाद में इस्तीफा देकर सेवा-मुक्त हो गए। 1903 ई. से 1920 ई. तक उन्होंने "सरस्वती" पत्रिका का सफल संपादन किया। इस काल में उन्होंने अनेक उदीयमान साहित्यकारों का मार्गदर्शन किया। 21 सितंबर, 1938 ई. को उनका देहावसान हो गया।

द्विवेदी जी ने "सरस्वती" पत्रिका के माध्यम से खड़ी बोली को परिष्कृत और व्याकरणनिष्ठ बनाने का गुरुतर कार्य किया और उसे काव्य-भाषा के रूप में प्रतिष्ठित किया। इस दृष्टि से द्विवेदी जी का ऐतिहासिक महत्त्व है। उन्होंने ज्ञान के विविध क्षेत्रों से सामग्री लेकर हिंदी भाषा और साहित्य के अभावों की पूर्ति की। उनकी भाषा-शैली अत्यंत परिष्कृत एवं परिमार्जित है।

द्विवेदी जी के मौलिक एवं अनूदित ग्रंथों की संख्या यों तो अस्सी से ऊपर है किंतु वे प्रमुखतः निबंधकार और आलोचक के रूप में ही अधिक प्रतिष्ठित हुए। उनके मौलिक ग्रंथों में नैषध चरित चर्चा, कालिदास की समालोचना, हिंदी-भाषा की उत्पत्ति, रसज्ञरंजन, अतीत-स्मृति, साहित्य-संदर्भ, अद्भुत-आलाप, साहित्य-सीकर, सम्पत्ति शास्त्र, विज्ञान-वार्ता, विचार-विमर्श आदि उल्लेखनीय हैं।

7

मेरी जीवन रेखा

[यह पाठ महावीरप्रसाद द्विवेदी की आत्मकथा का एक अंश है। इसमें हमें द्विवेदी जी के जीवन-संघर्ष और साधना का परिचय मिलता है। उनकी जीवन-यात्रा से हमें यह प्रेरणा मिलती है कि मनुष्य में यदि दृढ़ संकल्प, आत्मविश्वास, विनम्रता, विवेक हो और कठिन परिश्रम तथा लगातार आत्म-निरीक्षण की क्षमता हो तो जीवन में ऊँचा उठने से उसे कोई नहीं रोक सकता।]

मैं क्या हूँ, यह तो प्रत्यक्ष ही है। परंतु मैं क्या था, इस विषय का ज्ञान मेरे मित्रों और कृपालु हितैषियों को बहुत ही कम है। उन्होंने मुझे अनेक पत्र लिखे हैं, अनेक उलाहने दिए हैं। वे चाहते हैं कि मैं अपनी जीवन-कथा अपने ही मुँह से कह डालूँ। पर पूर्णरूप से उनकी आज्ञा का पालन करने की शक्ति मुझमें नहीं। अपनी कथा कहते हुए संकोच होता है। उसमें कुछ तत्व भी तो नहीं। उससे कोई कुछ सीख भी तो नहीं सकता। तथापि जिन सज्जनों ने मुझे अपना कृपापात्र बना लिया है उनकी आज्ञा का उल्लंघन भी धृष्टता होगी। अतएव मैं अपने जीवन से संबंध रखने वाली कुछ बातें सूत्र रूप में सुना देना चाहता हूँ। बड़े-बड़े लोगों ने इस विषय में मेरे लिए मैदान पहले ही से साफ भी कर रखा है।

मैं एक ऐसे देहाती का एकमात्र आत्मज हूँ, जिसका मासिक वेतन दस रुपए था। अपने गाँव के देहाती मदरसे में थोड़ी-सी उर्दू और घर पर थोड़ी-सी संस्कृत पढ़कर तेरह वर्ष की उम्र में मैं छब्बीस मील दूर रायबरेली के जिला स्कूल में अंग्रेजी पढ़ने गया। आटा, दाल घर से पीठ पर लादकर ले जाता था। दो आने महीने फीस देता था।

दाल ही में आटे के पेड़े या टिकियाएँ पका करके पेट-पूजा कर
था। रोटी बनाना तब मुझे आता ही न था। संस्कृत भाषा उस सम
स्कूल में अछूत समझी जाती थी। विवश होकर अंग्रेजी के सा
फारसी पढ़ता था। एक वर्ष किसी तरह वहाँ काटा। फिर पुर
फतेहपुर और उन्नाव के स्कूलों में चार वर्ष काटे। कौटुम्बिक दुरवस
के कारण मैं इससे आगे न बढ़ सका। मेरी स्कूली शिक्षा की व
समाप्ति हो गई।

एक साल अजमेर में पंद्रह रुपए महीने पर नौकरी करके, पि
के पास बंबई पहुँचा और तार का काम सीख कर जी.आई.पी. रेल
में पचास रू. महीने पर तार बाबू बना। बचपन ही से मेरी प्रवृ
सुशिक्षित जनों की संगति करने की ओर थी। दैवयोग से हरदा अ
हुशंगाबाद में मुझे ऐसी संगति सुलभ रही। फल यह हुआ कि मैं
अपने लिए चार सिद्धांत या आदर्श निश्चित किए, यथा— (1) व
की पाबंदी करना, (2) रिश्वत न लेना, (3) अपना काम ईमानदा
से करना, और (4) ज्ञान-वृद्धि के लिए सतत् प्रयत्न करते रहना
पहले तीन सिद्धांतों के अनुकूल आचरण करना तो सहज था प
चौथे के अनुकूल सचेष्ट रहना कठिन था। तथापि सतत् अभ्यास
उसमें सफलता भी होती गई। तार बाबू होकर भी टिकट बाबू, मा
बाबू, स्टेशन मास्टर, यहाँ तक कि रेल की पटरियाँ बिछाने औ
उसकी सड़क की निगरानी करने वाले प्लेटियर तक का भी काम मैं
सीख लिया। फ़ल अच्छा ही हुआ। अफसरों की नज़र मुझ पर पड़ी
मेरी तरक्की होती गई। वह इस तरह कि एक दफे छोड़कर मुझे क
तरक्की के लिए दरख़्वास्त नहीं देनी पड़ी। जब इंडियन मिडलैंड रेल
बनी और उसके दफ्तर झाँसी में खुले, तब जी.आई.पी. रेलवे
मुलाजिम जो साहब वहाँ जनरल ट्रैफिक मैनेजर मुकर्रर हुए वे मुझे
अपने साथ झाँसी लाए और नए-नए काम मुझसे लेकर मेरी पदोन्न
करते गए। इस उन्नति का प्रधान कारण मेरी ज्ञानलिप्सा और गौ
कारण उन साहब बहादुर की कृपा या गुणग्राहकता थी। दस बारह व
बाद मेरी मासिक आय मेरी योग्यता से कई गुनी हो गई।

मैं यदि किसी के अत्याचार को सह लूँगा तो उससे मेरी सहनशीलता अवश्य सूचित होती है, पर उससे मुझे औरों पर अत्याचार करने का अधिकार नहीं हो जाता। परंतु कुछ समयोत्तर बानक ऐसा बना कि मेरे प्रभु ने मेरे द्वारा औरों पर अत्याचार कराना चाहा। हुक्म हुआ कि इतने कर्मचारियों को लेकर रोज सुबह आठ बजे दफ्तर में आया करो और ठीक दस बजे मेरे कागज़ मेरी मेज़ पर मुझे रखे मिलें। मैंने कहा, मैं आठ बजे आऊँगा, पर औरों को आने के लिए लाचार न करूँगा। उन्हें हुक्म देना हुजूर का काम है। बस, बात बढ़ी और बिना किसी सोच-विचार के मैंने इस्तीफा दे दिया। बाद को उसे वापस लेने के लिए इशारे ही नहीं, सिफारिशें तक की गईं। पर सब व्यर्थ हुआ। क्या इस्तीफा वापस लेना चाहिए यह पूछने पर मेरी पत्नी ने विषण्ण होकर कहा– 'क्या थूककर भी उसे कोई चाटता है ?" मैं बोला, नहीं ऐसा कभी न होगा, तुम धन्य हो। तब उसने आठ आने रोज तक की आमदनी से भी मुझे खिलाने-पिलाने और गृह कार्य चलाने का दृढ़ संकल्प किया और मैंने "सरस्वती" की सेवा से हर महीने जो बीस रुपए उजरत और तीन रुपए डाक खर्च की आमदनी होती थी उसी से संतुष्ट रहने का निश्चय किया। मैंने सोचा, किसी समय तो मुझे पंद्रह रुपए ही मिलते थे, तेईस रुपए तो उसके ड्योढ़े से भी अधिक हैं। इतनी आमदनी मुझ देहाती के लिए कम नहीं।

मेरे पिता ईस्ट इंडिया कंपनी की एक पलटन में सैनिक या सिपाही थे। वे मामूली हिंदी पढ़े-लिखे थे। बड़े भक्त थे। सिपाहियों के काम से छुट्टी पाने पर राम-लक्ष्मण की पूजा किया करते थे। इसी से साथी सिपाहियों ने उनका नाम रखा था– लछिमन जी। गदर में पिता की पलटन बागी हो गई, जो बच निकले वे बच गए। बाकी जवान तोपों से उड़ा दिए गए। पलटन इस समय होशियारपुर (पंजाब) में थी। पिता ने भागकर अपना शरीर सतलुज की बेगवती धारा को अर्पण कर दिया। एक या दो दिन बेहोशी की हालत में सैकड़ों कोस दूर, आगे की तरफ कहीं वे किनारे लग गए। होश आने पर सँभले और हरी मोटी घास के तिनके चूस-चूस कर कुछ शक्ति संपादन की।

माँगते-खाते साधुवेश में, कई महीने बाद वह घर आए। घर पर कु
दिन रहकर इधर-उधर भटकते हुए वे बंबई पहुँचे। वहाँ वल्लभ-संप्रद
के एक गोस्वामी जी के यहाँ वे नौकर हो गए। उस गोस्वामी
मुलाजिमत में रहे। फिर सदा के लिए उसे छोड़कर घर चले आए

मेरे पितामह अलबत्ता संस्कृतज्ञ थे और अच्छे पंडित भी
बंगाल की छावनियों में स्थित पलटनों को वे पुराण सुनाया करते
उनकी एकत्र की हुई सैकड़ों हस्तलिखित पुस्तकें बेच-बेच कर मे
पितामही ने पिता और पितृव्य आदि का पालन किया। वयस्क हो
पर दो-चार पुस्तकें मुझे भी घर में पड़ी मिलीं। मेरे पितृव्य दुर्गाप्रसा
नाममात्र को हिंदी तथा कैथी जानते थे, पर उनमें नए-नए किस्से ब
कर कहने की अद्‌भुत शक्ति थी। रायबरेली जिले में दानशाह के गौ
के तत्कालीन ताल्लुकेदार भूपाल सिंह के यहाँ किस्से सुनाने के लि
वे नौकर थे। मेरे नाना और मामा भी संस्कृतज्ञ थे। मामा क
संस्कृतज्ञता का परिचय स्वयं मैंने उनके पास बैठकर प्राप्त किया था

नहीं कह सकता, शिक्षा-प्राप्ति की तरफ प्रवृत्ति होने का संस्का
मुझे किससे हुआ— पिता से या पितामह से या अपने ही कि
पूर्वजन्म के कृतकर्म से। बचपन ही से मेरा अनुराग तुलसीदास क
रामायण और ब्रजवासीदास के ब्रजविलास पर हो गया था। फुटक
कवित्त भी मैंने सैकड़ों कंठ कर लिए थे। हुशंगाबाद में रहते समय
भारतेंदु हरिश्चंद्र के 'कवि-वचन-सुधा' और गोस्वामी राधाचरण के एक
मासिक पत्र ने मेरे उस अनुराग की वृद्धि कर दी। वहीं मैंने पिंगल
का पाठ पढ़ा। फिर क्या था, मैं अपने को कवि ही नहीं महाकवि
समझने लगा। मेरा यह रोग बहुत समय तक ज्यों का त्यों बना रहा
झाँसी आने पर जब मैंने पण्डितों की कृपा से, प्रकृत कवियों के
काव्यों का अनुशीलन किया, तब मुझे अपनी भूल मालूम हो गई और
छंदोबद्ध प्रलापों के जाल से मैंने सदा के लिए छुट्टी ले ली। पर गद्य
में कुछ न कुछ लिखना जारी रखा। संस्कृत और अंग्रेजी की पुस्तकों
के कुछ अनुवाद भी मैंने किए।

जब मैं झाँसी में था। तब वहाँ के तहसीली स्कूल के एक

अध्यापक ने मुझे कोर्स की एक पुस्तक दिखाई। नाम था—तृतीय रीडर। उसने उसमें बहुत से दोष दिखाए। उस समय तक मेरी लिखी हुई कुछ समालोचनाएँ प्रकाशित हो चुकी थीं। इससे उस अध्यापक ने मुझसे उस रीडर की भी आलोचना लिखकर प्रकाशित करने का आग्रह किया। मैंने रीडर पढ़ी और अध्यापक महाशय की शिकायत को ठीक पाया। नतीजा यह हुआ कि उसकी समालोचना मैंने पुस्तकाकार में प्रकाशित की। इस रीडर का स्वत्वाधिकारी था, प्रयाग का इंडियन प्रेस। अतएव इस समालोचना की बदौलत उसने "सरस्वती" पत्रिका का संपादन-कार्य मुझे दे डालने की इच्छा प्रकट की। मैंने उसे स्वीकार कर लिया। यह घटना रेल की नौकरी छोड़ने के एक साल पहले की है।

नौकरी छोड़ने पर मेरे मित्रों ने कई प्रकार से मेरी सहायता करने की इच्छा प्रकट की। किसी ने कहा— "आओ, मैं तुम्हें अपना प्राइवेट सेक्रेटरी बनाऊँगा।" किसी ने लिखा— "मैं तुम्हारे साथ बैठकर संस्कृत पढ़ूँगा।" किसी ने कहा— "मैं तुम्हारे लिए छापाखाना खुलवा दूँगा" इत्यादि। पर मैंने सबको अपनी कृतज्ञता की सूचना दे दी और लिख दिया कि अभी मुझे आपके सहायतादान की विशेष आवश्यकता नहीं। मैंने सोचा अव्यवस्थित-चित्त मनुष्य की सफलता में सदा संदेह रहता है। क्यों न मैं अंगीकृत कार्य ही में अपनी सारी शक्ति लगा दूँ। प्रयत्न और परिश्रम की बड़ी महिमा है। अतएव "सब तज हरि भज" की मसल को चरितार्थ करता हुआ इंडियन प्रेस के प्रदत्त काम ही में मैं अपनी शक्ति खर्च करने लगा। हाँ, जो थोड़ा बहुत अवकाश कभी मिलता तो मैं उसमें अनुवाद आदि का कुछ काम और करता था। समय की कमी के कारण मैं विशेष अध्ययन न कर सका। इसी से "संपत्तिशास्त्र" नामक पुस्तक को छोड़कर और किसी अच्छे विषय पर मैं कोई नई पुस्तक न लिख सका।

मेरी सेवा से 'सरस्वती' का प्रचार जैसे-जैसे बढ़ता गया और मालिक का मैं जैसे-जैसे अधिकाधिक विश्वासभाजन होता गया वैसे ही मेरी सेवा का बदला भी मिलता गया और मेरी आर्थिक स्थिति प्रायः

वैसी ही हो गई जैसी रेलवे की नौकरी छोड़ने के समय थी। इ
मेरी कारगुजारी कम, दिवंगत बाबू चिंतामणि घोष की उदारता
अधिक कारणीभूत थी। उन्होंने मेरे संपादन-स्वातंत्र्य में कभी ब
नहीं डाली। वे मुझे अपना कुटुम्बी-सा समझते रहे और उ
उत्तराधिकारी अब तक भी मुझे वैसे ही समझते हैं।

इस समय तो कितनी ही महारानियाँ हिंदी का गौरव बढ़ा
हैं, पर उस समय एकमात्र "सरस्वती" ही पत्रिकाओं की रानी
पाठकों की सेविका थी। तब उसमें कुछ छापना या किसी के जी
चरित्र आदि प्रकाशित करना ज़रा बड़ी बात समझी जाती थी।
ऐसी होने के कारण मुझे कभी-कभी बड़े-बड़े प्रलोभन दिए जाते
कोई कहता— "मेरी मौसी का मरसिया छाप दो, मैं तुम्हें निहाल
दूँगा।" कोई लिखता— "अमुक सभापति की "स्पीच" छाप दो,
तुम्हारे गले में बनारसी दुपट्टा डाल दूँगा।" कोई आज्ञा देता— "
प्रभु का सचित्र जीवन-चरित्र निकाल दोगे तो तुम्हें एक बढ़िया
या पैरगाड़ी नज़र की जाएगी।" इन प्रलोभनों पर मैं बहरा और
बन जाता और "सरस्वती" में वही मसाला जाने देता जिससे
पाठकों का लाभ समझता। मैं उनकी रुचि का सदैव ख्याल रख
और यह देखता रहता कि मेरे किसी काम से उनको, सत्पथ
विचलित होने का साधन न प्राप्त हो। संशोधन द्वारा लेखों की भा
अधिक-संख्यक पाठकों की समझ में आने लायक कर देता। यह
देखता कि यह शब्द अरबी का है या फ़ारसी का या तुर्की व
देखता सिर्फ यह कि इस शब्द, वाक्य या लेख का आशय अधिक
पाठक समझ लेंगे या नहीं। अल्पज्ञ होकर भी किसी पर अपनी विद्व
की झूठी छाप छापने की कोशिश मैंने कभी नहीं की।

प्रश्न-अभ्यास

I. विचार-बोध

(1) रेल की नौकरी छोड़ने के बाद द्विवेदी ज़ी ने क्या किया ?

(2) द्विवेदी जी "सरस्वती" में किस प्रकार की सामग्री प्रकाशित क
थे ?

(3) लेखक को अपनी जीवन-कथा लिखने की प्रेरणा कैसे मिली ?

(4) स्कूली शिक्षा में उन्हें किन-किन कठिनाइयों का सामना करना पड़ा ?

(5) द्विवेदी जी ने नौकरी से इस्तीफा क्यों दिया ?

(6) द्विवेदी जी लेखों की भाषा में किस प्रकार का संशोधन करते थे ?

(7) रेलवे की नौकरी से इस्तीफे के बाद द्विवेदी जी "सरस्वती" के सम्पादन में ही क्यों लगे रहे ? उचित उत्तर छाँटिए—

क. मित्रों द्वारा प्रस्तावित नौकरियों का वेतन कम था।

ख. "सरस्वती" पत्रिका उस समय एक राष्ट्रीय स्तर की लोकप्रिय पत्रिका थी।

ग. एकाग्र चित होकर वे पहले से मिले इस कार्य में पूरी शक्ति लगाना चाहते थे।

घ. अन्य कार्यों की तुलना में यह कार्य अधिक आसान था।

(8) आशय स्पष्ट कीजिए—

(क) "बड़े-बड़े लोगों ने इस विषय में मेरे लिए मैदान पहले से ही साफ भी कर रखा था।"

(ख) "इस समय तो कितनी ही महारानियाँ हिन्दी का गौरव बढ़ा रही हैं।"

"मैंने सोचा अव्यवस्थित चित्त मनुष्य की सफलता में सदा संदेह रहता है।"

(घ) "प्रयत्न और परिश्रम की बड़ी महिमा है।"

II. भाषा-प्रयोग

1. नीचे दिए उदाहरण में रेखांकित अंश में पुनरुक्त शब्दों का प्रयोग हुआ है :

उदाहरण : सुब्बाराव को मित्रों को खिलाने-पिलाने में आनंद आता है।

निम्नलिखित पुनरुक्त शब्दों का वाक्य में प्रयोग कीजिए :

(क) माँगना-ख़ाना,

(ख) रोना-गाना,

(ग) चलना-फ़िरना

(घ) गाना-बजाना

2. नीचे दिए उदाहरण में रेखांकित अंश संज्ञा पदबंध हैं :

उदाहरण : मेरे प्रभु का जीवन चरित्र छाप दो।

पाठ से पाँच संज्ञा पदबंध छाँटिए।

3. निम्नलिखित वाक्य-प्रयोग पर ध्यान दीजिए :

ज्यों-ज्यों परीक्षा के दिन पास आते गए **त्यों-त्यों** रमेश की चि
बढ़ती गई।

इसी प्रकार निम्नलिखित वाक्यों में रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए

(क) . . . . .मैं उस पर विश्वास करता गया . . . . . . ।

(ख) . . . . मेरा धन समाप्त होता गया . . . . ।

(ग) . . . . वह उन्नति करता गया . . . . ।

4. दिए गए नमूने के अनुसार नीचे लिखे शब्दों से भाववाचक संज्ञा
बनाइए—

सहनशील + ता = सहनशीलता

कृतज्ञ . . . .

सुन्दर . . . .

प्रवीण . . . .

III. योग्यता-विस्तार

1. (क) "मैं यदि किसी के अत्याचार को सह लूँगा . . . . . इ
आमदनी मुझ देहाती के लिए कम नहीं"
इस अनुच्छेद को ध्यान से पढ़िए।

(ख) उपर्युक्त अनुच्छेद का सार अपने शब्दों में लिखिए।

शब्दार्थ और टिप्पणी

विषण्ण = उदास, दुखी

उलाहना = बुरा-भला कहना

बानक = संयोग

पितृव्य = चाचा

पैरगाड़ी = साइकिल

मुकर्रर = नियुक्त

मुलाजिम = नौकर

कारगुजारी = किया हुआ काम

बहरा और गूँगा होना	= ध्यान न देना, न सुनना और न बोलना
पेट-पूजा करना	= भोजना करना
थूक कर चाटना	= जिसको छोड़ दिया उसे फिर स्वीकार करना
होश में आना	= खोई चेतना फिर प्राप्त करना
कैथी	= एक लिपि विशेष का नाम
छन्दोबद्ध प्रलाप	= कविता के रूप में निरर्थक प्रयास
सतत् प्रयत्न करते रहना	= लगातार कोशिश करना, अभ्यास करना
शरीर धारा को अर्पण करना	= मरने के लिए नदी में कूद पड़ना
तुलसी की रामायण	= तुलसी का लिखा हुआ महाकाव्य "रामचरितमानस" जिसमें राम की जीवन-गाथा है
ब्रजवासीदास का ब्रजविलास	= ब्रजवासी दास का लिखा "ब्रजविलास" नामक ग्रंथ
कवि-वचन-सुधा	= भारतेंदु हरिश्चंद्र द्वारा निकाली गई एक पत्रिका
सरस्वती	= सुप्रसिद्ध मासिक पत्रिका जिसका सम्पादन आचार्य महावरी प्रसाद द्विवेदी ने किया था
पिंगल	= छन्दशास्त्र
ग़दर	= सन् 1857 का प्रथम स्वतंत्रता-संग्राम, जिसे अंग्रेजों ने गदर (सिपाही-विद्रोह) कहा था
स्वत्वाधिकारी	= प्रकाशन का अधिकार रखने वाला, स्वामी
कृतकर्म	= किया हुआ कर्म
प्रदत्त	= दिया हुआ
प्रकृत कवि	= जिनमें कविता करने की शक्ति स्वभावतः विद्यमान हो
अनुशीलन	= सतत् तथा गंभीर अभ्यास
चरितार्थ	= सिद्ध करता हुआ

आनंद शंकर माधवन

आनंद शंकर माधवन का जन्म केरल प्रदेश के क्विलन जिले में शिवरा
के दिन सन् 1914 ई. में हुआ। अनाथ और बेसहारा रह जाने के का
वे पन्द्रह वर्ष की उम्र में घर से भागकर दिल्ली आ गए। यहाँ उनका सं
डॉ. ज़ाकिर हुसैन से हुआ। वे हिन्दू-मुस्लिम के मधुर संपर्क के पक्षधर ब
गए। बाद में वे महात्मा गाँधी जी के संपर्क में आए। फलस्वरूप 1942
माधवन जी ने "भारत छोड़ो" आंदोलन में भाग लिया और वे भागल
जेल भेज दिए गए। जेल में रहकर उन्होंने हिंदी भाषा का अध्ययन कि
जेल से छूटकर वे भारत-भ्रमण को निकल पड़े और बाद में मंदार (बिह
में 'मंदार विद्यापीठ' की स्थापना करके वहीं रम गए। सन् 1984 में 'अ
मिशन' की और सन् 1985 में 'शिवधाम अभिनव शिक्षा नगरी' की स्थाप
की। अब वे तीनों संस्थाओं के संचालक हैं तथा अध्ययन-अध्यापन ए
लेखन कार्य में व्यस्त हैं।

माधवन जी ने सन् 1959 में हिंदी क्षेत्र में लेखन कार्य प्रा
किया। अब तक इनकी लगभग पचास से अधिक पुंस्तकें प्रकाशित हो चु
हैं। मलयालम तथा तमिल दोनों ही भाषाओं पर पूर्ण अधिकार होने
बावजूद उन्होंने हिन्दी में साहित्य की सृष्टि की। अपनी रचनाओं में आप
साहित्यिक एवं सहज भाषा के संगम का अधिक प्रयोग किया है। आप
विषयों में दार्शनिकता, आधुनिकता एवं आध्यात्मिकता का बाहुल्य है।

आपने सहित्य की विविध विधाओं में रचना की है। जिनमें निबं
उपन्यास, कहानी-संग्रह, काव्य-संग्रह, जीवन-साहित्य, दार्शनिक एवं आध्यात्मि
पुस्तकें हैं। आपकी प्रमुख रचनाएँ हैं : बिखरे हीरे, अनलशलाका, हिं
आंदोलन, अनामंत्रित मेहमान, आरती, उषा, संजीवनी, माधव निदान, चित्रशाल
घास के फूल आदि। इनमें से "आमंत्रित मेहमान" बिहार राष्ट्रभाष
परिषद् द्वारा पुरस्कृत है।

8

भारतीय संस्कृति में गुरु-शिष्य संबंध

[हमारे समाज में व्यावसायिक संस्कृति का बोलबाला है। इसी कारण गुरु-शिष्य संबंधों में परिवर्तन आया है। पहले विद्यालय मंदिर के समान माने जाते थे। शिक्षा देना एक आध्यात्मिक अनुष्ठान था। वह परमेश्वर-प्राप्ति का एक माध्यम था। पैसे देकर शिक्षा खरीदी नहीं जाती थी। आज स्थिति बिलकुल बदल गई है और अब शिक्षण-कार्य पेट पालने का साधन बन गया है।]

जिसे भारतीय संस्कृति कहा जाना चाहिए वह आज भारतीय मानसिक क्षितिज में क्रियाशील नहीं है। आज एक प्रकार की अव्यवस्थित व्यावसायिक संस्कृति व्याप्त है जिसकी जड़ शायद यूरोप में है। भारतीयों के सार्वजनिक व्यवहार में गुरु-शिष्य संबंध का भी तदनुरूप परिवर्तन हो गया है। यहाँ गुरु वेतन-भोगी नहीं होते थे और न शिष्य को ही शुल्क देना पड़ता था। पैसे देकर विद्या खरीदने की यह क्रय-विक्रय पद्धति निस्सन्देह इस भारतीय मिट्टी की उपज नहीं है। यहाँ शिक्षणालय एक प्रकार के आश्रम अथवा मन्दिर के समान थे। गुरु को साक्षात् परमेश्वर ही समझा जाता था। शिष्य पुत्र से अधिक प्रिय होते थे। यहाँ सम्मान मिलना ही शक्ति पाने का रहस्य रहा है। प्राचीनकाल में गुरु की शिक्षादान-क्रिया उनका आध्यात्मिक अनुष्ठान थी, परमेश्वर प्राप्ति का उनका वह एक माध्यम था। वह आज पेट पालने का जरिया बन गई है।

प्रारंभ में विवेकानन्द को भारत में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त नहीं हुआ पर जब उन्होंने अमेरिका में नाम कमा लिया तो भारतवासी दौड़े—

मालाएं लेकर स्वागत करने। रवीन्द्रनाथ ठाकुर को भी जब नो
पुरस्कार मिला तो बंगाली लोग दौड़े यह राग अलापते हुए– "अमा
ठाकुर" अमादेर सोनार कंठोर सुपूत . . . . .।" दक्षिण भारत में कु
समय पहले तक भरतनाट्यम् और कथकली को कोई नहीं पूछता।
पर जब उसे विदेशों में मान मिलने लगा तो आश्चर्य से भारतवा
सोचने लगे, "अरे, हमारी संस्कृति में इतनी अपूर्व चीजें भी पड़ी
क्या . . .!" यहाँ के लोगों को अपनी खूबसूरती नहीं नज़र आ
मगर पराये के सौन्दर्य को देख कर मोहित हो जाते हैं। जिस देश
जन्म पाने के लिए मैक्समूलर ने जीवन-भर प्रार्थना की उस देश
निवासी आज जर्मनी और विलायत जाना स्वर्ग-जाना-जैसा अनु
करते हैं। ऐसे लोगों को प्राचीन "गुरु शिष्य संबंध" की महि
सुनाना गधे को गणित सिखाने जैसा व्यर्थ प्रयास ही हो सकता है

एक बार सुप्रसिद्ध भारतीय पहलवान गामा बम्बई आए। उन्हें
विश्व के सारे पहलवानों को कुश्ती में चैलेंज दिया। अखबारों में
समाचार प्रकाशित होते ही एक फ़ारसी पत्रकार ने उत्सुकतावश उन
निकट पहुँच कर उनसे पूछा– "साहब, विश्व के किसी भी पहलवा
से लड़ने के लिए आप तैयार हैं तो आप अपने अमुक शिष्य से
लड़कर विजय प्राप्त करके दिखाएँ ?" गामा आजकल के शिक्षा-
में रंगे नहीं थे। इसलिए उन्हें इन शब्दों ने हैरान कर दिया। वे
फाड़कर उस पत्रकार का चेहरा ताकते ही रह गए। बाद में धीरे
कहा-- "भाई साहब, मैं हिन्दुस्तानी हूँ। हमारा अपना एक नि
रहन-सहन है। शायद इससे आप परिचित नहीं हैं। जिस लड़के
आपने नाम लिया, वह मेरे पसीने की कमाई, मेरा खून है और
बेटे से भी अधिक प्यारा है। इसमें और मुझमें फ़रक ही कुछ नहीं
मैं लड़ा या वह लड़ा, दोनों बराबर ही होगा। हमारी अपनी
परम्परा को आप समझने की चेष्टा कीजिए। हम लोगों को वंश-परम
से शिष्य-परम्परा ही अधिक प्रिय है। ख्याति और प्रभाव में हम स
यही चाहते हैं कि हम अपने शिष्यों से कम प्रमुख रहें। यानी ह
यही चाहेंगे कि संसार में जितना नाम मैंने कमाया उससे कहीं अधि

मेरे शिष्य कमाएं। मुझे लगता है, आप हिन्दुस्तानी नहीं हैं—"।

भारत में गुरु-शिष्य संबंध का वह भव्य रूप आज साधुओं, पहलवानों और संगीतकारों में ही थोड़ा बहुत ही सही, पाया जाता है। भगवान रामकृष्ण बरसों योग्य शिष्य को पाने के लिए प्रार्थना करते रहे। उनके जैसे व्यक्ति को भी उत्तम शिष्य के लिए रो-रोकर प्रार्थना करनी पड़ी थी। इसी से समझा जा सकता है कि एक गुरु के लिए उत्तम शिष्य कितना महँगा और महत्वपूर्ण है। संतानहीन रहना उन्हें दुःख नहीं देता पर बगैर शिष्य के रहने के लिए वे एकदम तैयार नहीं होते। इस सम्बन्ध में भगवान ईसा का एक कथन सदा स्मरणीय है। उन्होंने कहा था— "मेरे अनुयायी लोग मुझसे कहीं अधिक महान हैं और उनकी जूतियाँ होने की योग्यता भी मुझमें नहीं है। यही बात है, गाँधी जी बनने की क्षमता जिनमें है उन्हें गाँधी जी अच्छे लगते हैं और वे ही उनके पीछे चलते भी हैं। विवेकानन्द की रचना सिर्फ उन्हें पसन्द आएगी जिनमें विवेकानन्द बनने की अद्भुत शक्ति निहित है।"

कविता के मर्मज्ञ और रसिक स्वयं कवि से अधिक महान होते हैं। संगीत के पागल सुनने वाले ही स्वयं संगीतकार से अधिक संगीत का रसास्वादन करते हैं। यहाँ पूज्य नहीं, पुजारी ही श्रेष्ठ है। यहाँ सम्मान पाने वाले नहीं, सम्मान देने वाले महान हैं। स्वयं पुष्प में कुछ नहीं है, पुष्प का सौन्दर्य उसे देखने वाले की दृष्टि में है। दुनिया में कुछ नहीं है। जो कुछ भी है हमारी चाह में, हमारी दृष्टि में है। यह अद्भुत भारतीय व्याख्या अजीब-सी लग सकती है। पर हमारे पूर्वज सदा इसी पथ के यात्री रहे हैं।

उत्तम गुरु में जाति-भावना भी नहीं रहती। कितने ही मुसलमान पहलवानों के हिन्दू चेले हैं और हिन्दू संगीतकारों के मुसलमान शिष्य रहे हैं। यहाँ परख गुण की, साधना की और प्रतिभा की होती है। भक्ति और श्रद्धा की ही कीमत है, न कि जाति-सम्प्रदाय, आचार-विचार या धर्म की। मुझे पढ़ाया-लिखाया था—एक विद्वान मुसलमान ने ही। उन्होंने कभी नहीं सोचा कि यह हिन्दू है और इसे मुसलमान बनाना चाहिए। पुराने ज़माने में मौलवी लोग बड़े-बड़े रामायणी होते थे और

आज भी देहातों में भरत मियाँ, रामू मियाँ, रंजीत मियाँ आदि अधि
संख्या में दिखाई देते हैं।

हाल तक गुरु से मार खाकर लड़के जब घर रोते-रोते पहुँचते
तो माता-पिता यही कहते थे, "जो गुरु से मार खाते हैं उनका भवि
उज्जवल होगा ही।" मगर आज गुरु किसी बच्चे को पीटे तो उन
अभिभावक मुकदमा चला देगा।

आज के गुरु भी सिर्फ सेवा लेने में ही चतुर हैं, देने में नहीं
उपनिषदों में आचार्यों ने कहा, "सेवा देने की चीज है, लेने
नहीं।" सेवा लेने के अधिकारी बच्चे, रोगी, असहाय और वृद्ध है
बच्चों को परमेश्वर का ही मूर्त रूप समझ सेवा रूपी पूजा से उन
शक्ति को प्रज्वलित करने की क्षमता और सहृदयता रखने वाले ज्ञा
और तपस्वी पुरोहित आजकल के गुरु नहीं रह गए हैं। किसी
देव-मन्दिर की मूर्ति की शक्ति उतनी मात्रा तक ही सम्भव है जित
मात्रा तक उसके पुजारी की भाव-पूजा में नैवेद्य-भावना भरी रहती है
मूर्ति में स्वयं कुछ भी नहीं है। पुजारी की शक्ति ही मूर्ति में विकसि
होने लगती है। काश, भारतीय संस्कृति का यह रहस्य भारतीय सम
पाते! इसका ज्ञान न होना ही तो आज हमारे सारे दुखों का कार
है।

प्रश्न-अभ्यास

I. विचार-बोध

1. यूरोप के प्रभाव के कारण आज गुरु-शिष्य संबंध में क्या अंतर आ गया है ?
2. पुजारी की शक्ति मूर्ति में कैसे विकसित होने लगती है ?
3. विवेकानन्द और रवीन्द्रनाथ ठाकुर को अधिक महत्व बाद में क्यों मिला ?
4. निम्नलिखित पंक्तियों का आशय स्पष्ट कीजिए :
   (क) "सम्मान पाने वाले से सम्मान देने वाले महान होते हैं।" इस कथन को समझाइए।

(ख) ऐसे लोगों को प्राचीन "गुरु-शिष्य संबंध" की महिमा सुनाना गधे को गणित सिखाने जैसा व्यर्थ प्रयास ही हो सकता है।

5. प्राचीन भारत में गुरु-शिष्य सम्बन्ध बहुत उत्तम क्यों थे ? उचित उत्तर छाँटिए।
   क. गुरु शिष्यों को पुत्र जैसा मानते थे।
   ख. गुरु पेट पालने के लिए शिक्षादान करते थे।
   ग. प्राचीन शिक्षा-पद्धति बहुत कठिन थी
   घ. गुरु जाति-पाँति में विश्वास करते थे।

II. भाषा-प्रयोग

1. भाषा में कई शब्दों के स्थान पर एक शब्द का प्रयोग भी किया जा सकता है, जैसे,

लगातार काम करने वाला = क्रियाशील

नीचे दिए हुए वाक्यों/शब्दों के स्थान पर एक शब्द लिखिए :

जो शुद्ध न हो ....
जो धर्म को जानने वाला हो ....
जहाँ शिक्षा दी जाती है ....
बिना संतान का ....
समाचार पत्रों के लिए समाचार भेजने वाला ....

2. नीचे दिए हुए शब्दों के साथ नमूने के अनुसार प्रत्यय जोड़कर लिखिए :

संस्कृति + इक = सांस्कृतिक

व्यवसाय ....
अध्यात्म ....
सर्वजन ....
प्रकृति ....

3. नीचे दिए हुए वाक्यों का परिवर्तन नमूने के अनुसार कीजिए :

गुरु साक्षात् परमेश्वर है → गुरु को साक्षात् परमेश्वर समझा जाता है।

गाँधीजी साक्षात् देवता थे → ....
शर्मा जी दयालु पुरुष हैं → ....

भारत सोने की चिड़िया था → ....
सुमनलता अच्छी गायिका थी → ....

4. किसी दूसरे को प्रेरणा देकर जो काय-व्यापार कराया जाता है वह प्रेरणा क्रिया होती है। प्रेरणार्थक क्रिया दो प्रकार की होती है– प्रथम प्रेरणार्थक क्रिया और द्वितीय प्रेरणार्थक क्रिया। जैसे :

मूल क्रिया	**प्रथम प्रेरणार्थक**	**द्वितीय प्रेरणार्थक**
पढ़ना	पढ़ाना	पढ़वाना
करना	कराना	करवाना
पीना	पिलाना	पिलवाना
सुनना	सुनाना	सुनवाना
देना	दिलाना	दिलवाना
सोना	सुलाना	सुलवाना

उपर्युक्त रूपों को ध्यान से पढ़िए और दिए गए वाक्यों को उदाहरण के अनुसार बदलिए।

> **उदाहरण** : मोहन सोहन को पढ़ाता है → अध्यापक मोहन से सोहन को **पढ़वाता** है। (अध्यापक)

1. नौकरानी बच्चे को दूध पिलाती है = ...
(माँ)
2. विलियम मोहम्मद को घर भेजता है = ...
(जोसेफ)
3. ललिता बबलू को कहानी सुनाती है = ...
(दादी जी)
4. अध्यापक लड़कों को स्कूल में रोकते हैं = ...
(प्राचार्य)

II. योग्यता-विस्तार

1. भारत के प्राचीन गुरु-शिष्य के संबंधों पर अपने विचार दस पंक्तियों में लिखिए।
2. "यदि मैं शिक्षक होता ...." विषय पर कक्षा में अपनी वार्ता दो मिनट में प्रस्तुत कीजिए।

शब्दार्थ और टिप्पणी

शब्द		अर्थ
तदनुरूप	=	उसके अनुसार
निस्सन्देह	=	संदेह रहित, अवश्य, बेशक
फरक	=	अंतर, भेद, फर्क
चेष्टा	=	प्रयत्न, कोशिश
प्रज्वलित	=	अधिक चमकीला, जलता हुआ
ख्याति	=	यश
क्षितिज	=	जहाँ धरती-आकाश मिलते हुए दिखाई देते हैं
मर्मज्ञ	=	मर्म को जानने वाला, विषय वस्तु की गहराई को जानने वाला
रसास्वादन	=	रस + आस्वादन, रस का स्वाद लेना
पसीने की कमाई	=	कठिन परिश्रम का फल
ताकते रहना	=	आश्चर्य से देखते ही रह जाना, स्थिर दृष्टि से या बुरे भाव से देखना
रंग जाना	=	निमग्न होना, पूर्णतः डूब जाना,
शिक्षा-दान-क्रिया	=	पुराने ज़माने में गुरु शिष्यों से पैसे लिए बिना शिक्षा देते थे। इसी कार्य को शिक्षा-दान-क्रिया कहा गया है
शिष्य-परंपरा	=	जैसे एक पिता के पुत्र, पौत्र जैसी पीढ़ी या परम्परा होती है उसी प्रकार पुराने जमाने में गुरु के शिष्य, फिर उस शिष्य के शिष्य होते थे। इस तरह शिष्यों की परंपरा चलती थी
आध्यात्मिक अनुष्ठान	=	आत्मा के संतोष के लिए ईश्वर की आराधना का पवित्र कर्म होता है उसे आध्यात्मिक अनुष्ठान कहते हैं। पुराने ज़माने में गुरु मुफ्त में शिक्षा देना आध्यात्मिक अनुष्ठान मानते थे।

रामवृक्ष बेनीपुरी

रामवृक्ष बेनीपुरी का जन्म बिहार के मुज़फ्फरपुर जिले के बेनीपुर गाँव
सन् 1902 ई. में हुआ। बेनीपुरी के माता-पिता का देहांत बचपन मे
गया। उनका पालन-पोषण इनकी मौसी ने किया। उन्होंने साहित्य-सम्मे
प्रयाग से विशारद की परीक्षा उत्तीर्ण की। मैट्रिक करने से पहले ही वे
1920 में महात्मा गाँधी के असहयोग आंदोलन से जुड़ गए। पन्द्रह वर्ष
अवस्था से ही वे पत्र-पत्रिकाओं में लिखने लगे थे। भारतीय स्वतं
आंदोलन में भाग लेने के कारण उनको अनेक बार जेल की यातनाएँ सह
पड़ीं। सन् 1968 ई. में उनका देहांत हो गया।

रामवृक्ष बेनीपुरी बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। उन्होंने उपन्यास, नाट
कहानी, ललित निबंध, रेखाचित्र, संस्मरण आदि अनेक गद्य-विधाओं
रचनाएँ कीं। साहित्य के क्षेत्र में उनका प्रवेश पत्रकारिता के माध्यम
हुआ। उन्होंने लगभग एक दर्जन पत्र-पत्रिकाओं का संपादन किया, जिन
तरुण भारत, किसान-मित्र, बालक, युवक, कर्मवीर, हिमालय एवं नई ध
आदि उल्लेखनीय हैं।

बेनीपुरी जी एक शैलीकार हैं। इनकी भाषा-शैली ओजपूर्ण औ
अलंकारपूर्ण है। इसके कारण साहित्य में उनकी अपनी पहचान बनी है
ललित निबंधों के क्षेत्र में उन्हें विशेष ख्याति मिली। चित्रात्मक औ
चुलबुली भाषा ने उनकी भावाभिव्यक्ति को बड़ा सजीव और सरस बनाय
है।

'माटी की मूरत' और 'लाल तारा' उनके रेखाचित्रों के संग्रह हैं त
'गेहूँ और गुलाब', 'वंदे वाणी-विनायकौ' तथा 'मशाल' उनके निबंध संग्रह
हैं। 'जँजीर' और 'दीवारें' उनके संस्मरणों के संग्रह हैं तो 'पैरों में पंख
बाँधकर' यात्रा-वर्णन। इसके अतिरिक्त उन्होंने कुछ उपन्यासों एवं कहानियों
की रचना भी की है।

9

सुभान खाँ

[प्रस्तुत पाठ में सुभान खाँ के चरित्र के माध्यम से यह बताया गया है कि मनुष्यता सभी धर्मों का मूल भाव है। जो इसकी रक्षा करता है वही सच्चा धार्मिक है। सच्चाई, ईमानदारी, परिश्रम, कर्तव्य-पालन, प्रेम और विश्वास ही मानव-जीवन को सरस और सार्थक बनाते हैं। इस पाठ में बच्चे के भोले-भाले स्वभाव का बड़ा ही सूक्ष्म चित्रण किया गया है। इसमें उस स्थिति का बड़ा मार्मिक वर्णन किया गया है जब हिन्दुओं और मुसलमानों को तोड़ने की हर चेष्टा बेकार हो जाती है और वे पुनः आत्मीयता के बंधन में बँध जाते हैं।]

"क्या आपका अल्लाह पश्चिम में रहता है ? वह पूरब में क्यों नहीं रहता ?"

सुभान दादा की लंबी, सफ़ेद, चमकती, रोब बरसाती दाढ़ी में अपनी नन्हीं उँगलियों को घुमाते हुए मैंने पूछा। उनकी चौड़ी, उभरी पेशानी पर एक उल्लास की झलक और दाढ़ी-मूँछ की सघनता में दबे पतले अधरों पर एक मुस्कान की रेखा दौड़ गई। अपनी लम्बी बाहों की दाहिनी हथेली से मेरे सिर को सहलाते हुए उन्होंने कहा—

"नहीं बबुआ, अल्लाह तो पूरब-पश्चिम, उत्तर-दक्षिण सब ओर है।"

"तो फिर आप पश्चिम की ओर खड़े होकर ही नमाज़ क्यों पढ़ते हैं ?"

"पश्चिम ओर के मुल्क में अल्लाह के रसूल आए थे। जहाँ रसूल आए थे, वहाँ हमारे तीरथ हैं। हम उन्हीं तीरथों की ओर मुँह करके

अल्लाह की याद करते हैं।"

"वे तीरथ यहाँ से कितनी दूर होंगे ?"

"जहाँ सूरज देवता डूबते हैं।"

"आप उन तीरथों में गए हैं सुभान दादा ?"

सुभान दादा की बड़ी-बड़ी आँखों में आँसू डबडबा आए, समूचा चेहरा लाल हो उठा। भाव-विभोर हो गद्गद कंठ से बो

"वहाँ जाने में बहुत खर्च पड़ता है बबुआ। मैं गरीब अ ठहरा ना! इस बुढ़ापे में भी इतनी मेहनत-मसक्कत कर रहा हूँ कहीं से कुछ पैसे बचा पाऊँ और उस पाक जगह की जियारत आऊँ।"

उनकी आँखों को देखकर मेरा बचपन का दिल भी भावना ओत-प्रोत हो गया। मैंने उनसे कहा—

"मेरे मामाजी से कुछ कर्ज क्यों नहीं ले लेते दादा ?"

"कर्ज के पैसे से तीरथ करने में सबाव नहीं मिलता बबु अल्लाह ने चाहा तो एक दो साल में इतने जमा हो जाएँगे कि तरह वहाँ जा सकूँ।"

"वहाँ से मेरे लिए भी कुछ सौगात लाइएगा ना ? लाइएगा ?"

"वहाँ से लोग खजूर और छुहारे लाते हैं।"

"हाँ-हाँ, मेरे लिए छुहारे ही लाइएगा, लेकिन एक दर्जन से क नहीं लूँगा, हूँ।"

सुभान दादा की सफेद दाढ़ी-मूँछ के बीच उनके सफेद दाँत चम रहे थे। कुछ देर तक मुझे दुलारते रहे । फिर कुछ रुक कर बो "अच्छा जाइए, देखिए, मैं जरा काम पूरा कर लूँ। मज़दूरी-भर पू काम नहीं करने से अल्लाह नाराज़ हो जाएँगे।"

"क्या आपके अल्लाह बहुत गुस्सेवर हैं ?" मैं तुनक कर बोला

आज सुभान दादा बड़े जोरों से हँस पड़े, फिर एक बार मेरे सि पर हथेली फेरी और बोले, "बच्चों से वह बहुत खुश रहते हैं बबुआ वह तुम्हारी उम्र दराज़ करें।" कहकर मुझे अपने कंधे पर ले लिय

मुझ लिए हुए दीवार के नज़दीक आए, वहाँ उतार दिया और झट अपनी कन्नी और बसूली से दीवार पर काम करने लगे।

सुभान खाँ एक अच्छे राज समझे जाते हैं। जब-जब घर की दीवारों पर कुछ मरम्मत की ज़रूरत होती है, उन्हें बुला लिया जाता है। आते हैं, पाँच-सात रोज़ यहीं रहते हैं, काम खत्म कर चले जाते हैं।

लम्बा, चौड़ा, तगड़ा है बदन इनका। पेशानी चौड़ी, भौंहें बड़ी, सघन और उभरी। आँखों के कोने में कुछ लाली और पुतलियों में कुछ नीलेपन की झलक। नाक असाधारण ढंग से नुकीली। दाढ़ी सघन, इतनी लम्बी कि छाती तक पहुँच जाए— वह छाती जो बुढ़ापे में भी फैली-फूली हुई। सिर पर हमेशा ही एक दुपलिया टोपी पहने और बदन में नीम आस्तीन, कमर में कच्छेवाली धोती, पैर में चमरौधा जूता। चेहरे से नूर टपकता, मुँह से शहद झड़ता। भलेमानसों के बोलने-चालने, बैठने-उठने के कायदे की पूरी पाबंदी करते वह।

किन्तु बचपन में मुझे सबसे अधिक भाती उनकी वह सफेद चमकती हुई दाढ़ी। नमाज़ के वक्त कमर में धारीदार लुंगी और शरीर में सादा कुर्ता पहन, घुटने टेक, दोनों हाथ छाती से जरा ऊपर उठा, आधी आँखें मूंद कर जब वह कुछ मंत्र-सा पढ़ने लगते, मैं विस्मय-विमुग्ध होकर उन्हें देखता रह जाता।

मुझे ऐसा मालूम होता, सचमुच उनके अल्लाह वहाँ आ गए हैं, दादा झपकती आँखों से उन्हें देख रहे हैं और ये होंठों की बातें उन्हीं से हो रही हैं।

एक दिन बचपन के आवेश में मैंने पूछ ही लिया, "सुभान दादा, आपने कभी अल्लाह को देखा है ?"

"यह क्या कह रहे हो बबुआ! इन्सान इन आँखों से अल्लाह को देख नहीं सकता।"

"मुझे धोखा मत दीजिए दादा। मैं जब देखता हूँ, आप रोज़ आधी आँखों से उन्हें देखते हैं, उनसे बुदबुदा कर बातें करते हैं।

हाँ-हाँ, मुझे चकमा दे रहे हैं आप ?''

''मैं उनसे बातें करूँगा, मेरी ऐसी तकदीर कहाँ! सिर्फ रसू
उनसे बातें होती थीं बबुआ। यह बातें कुरान में लिखी हैं।''

''क्या उनके भी दाढ़ी थी ?''

''हाँ, हाँ, थी बड़ी खूबसूरत, लम्बी, सुनहली। अब भी
दाढ़ी के कुछ बाल मक्का में रखे हैं। हम अपने तीरथ में उन
के भी दर्शन करते हैं।''

''बड़ा होने पर मैं भी दाढ़ी रखूँगा; दादा, लम्बी दाढ़ी।''
दादा ने मुझे उठाकर गोद में ले लिया, फिर कंधे पर चढ़ा
इधर-उधर घुमाया। तरह-तरह की बातें सुनाईं, कहानियाँ कहीं।
मन बहलाकर फिर अपने काम में लग गए। मुझे मालूम होता
काम और अल्लाह— ये ही दो चीज़ें संसार में उनके लिए प्यारी
काम करते हुए अल्लाह को नहीं भूलते थे और अल्लाह से फु
पाकर फिर झट काम में जुट जाना अपना पवित्र कर्त्तव्य समझते
काम और अल्लाह का यह सामंजस्य उनके दिल में प्रेम की
मंदाकिनी बहाता रहता था, जिसमें मेरे जैसे बच्चे भी बड़े मज़े
डुबकियाँ लगा सकते थे, चुभकियाँ ले सकते थे।

नानी ने कहा— ''सबेरे नहा-खा लो, आज तुम्हें हुसैन साहब
पैका में जाना होगा। सुभान खाँ आते ही होंगे।''

बहुत सारे देवताओं की मनौती के बाद माँ ने मुझे प्राप्त कि
था, उनमें एक हुसैन साहब भी थे। नौ साल की उम्र तक, जब त
जनेऊ नहीं हो गया था, मुहर्रम के दिन मुसलमान बच्चों की त
मैं भी ताजिए के चारों ओर रंगीन छड़ी लेकर कूदा हूँ और गले
गंडे पहने हैं। मुहर्रम उन दिनों मेरे लिए कितनी खुशी का दिन थ
नए कपड़े पहनता, उछलता-कूदता, नए-नए चेहरे और तरह-तरह
खेल देखता। धूम-धड़ाके में किस तरह दिन गुजर जाते ! इस मुह
के पीछे जो रोमांचकारी, हृदय को पिघला देने वाली करुण रस
भरी दर्दनाक घटना छिपी है, उन दिनों उसकी खबर भी कहाँ थी

खैर, मैं नहा-धोकर, पहन-ओढ़कर, इंतज़ार ही कर रहा था

सुभान दादा पहुँच गए, मुझे कंधे पर ले लिया और अपने गाँव ले गए।

उनका घर क्या था, बच्चों का अखाड़ा बना हुआ था। पोते-पोतियों, नाती-नातियों की भरमार थी उनके घर में। मेरी उम्र के ही बहुत बच्चे थे। रंगीन कपड़ों से सजे-धजे, मानो मेरे ही इंतज़ार में। जब पहुँचा, सुभान दादा की बूढ़ी बीबी ने मेरे गले में एक बद्धी डाल दी, कमर में घंटी बाँध दी, हाथों में दो लाल छड़ियाँ दे दीं और उन बच्चों के साथ मुझे लिए-लिए दादा करबला की ओर चले। दिन-भर उछला-कूदा, तमाशे देखे, मिठाइयाँ उड़ाईं और शाम को फिर सुभान दादा के कंधे पर घर पहुँच गया।

ईद-बकरीद को न सुभान दादा हमें भूल सकते थे, न होली-दीवाली को हम उन्हें । होली के दिन नानी अपने हाथों से पुए, खीर और गोश्त परोसकर सुभान दादा को खिलातीं। और तब मैं ही अपने हाथों से अबीर लेकर उनकी दाढ़ी मलता। एक बार जब उनकी दाढ़ी रंगीन बन गई थी, मैंने कहा– "सुभान दादा, रसूल की दाढ़ी भी तो ऐसी ही रंगी रही होगी।"

"उस पर अल्लाह ने ही रंग दे रखा था बबुआ, अल्लाह की उन पर खास मेहरबानी थी, उनका-सा नसीब हम मामूली इंसानों का कहाँ ?"

ऐसा कहकर झट आँखें मूंदकर कुछ बुदबुदाने लगे, जैसे वे ध्यान में उन्हें देख रहे हों।

मैं भी कुछ बड़ा हुआ, उधर दादा भी आखिर हज कर ही आए। अब मैं बड़ा हो गया था, लेकिन उन्हें छुहारे की बात भूली नहीं थी। जब छुट्टी में शहर के स्कूल से लौट रहा था, दादा यह अनुपम सौगात लेकर पहुँचे। इधर उनके घर की हालत अच्छी हो चली थी। दादा ने अपने पुण्य और लायक बेटों की मेहनत से काफी पैसे इकट्ठे कर लिए थे। लेकिन उनमें वही विनम्रता और सज्जनता थी। आए, पहले की ही तरह शिष्टाचार निभाया। फिर छुहारे निकाल कर मेरे हाथ पर रख दिए "बबुआ यह आपके लिए खास अरब से लाया

हूँ। याद है ना, आपने इसकी फरमाइश की थी ?" उनके
आनंदातिरेक से हिल रहे थे।

छुहारे लिए, सिर चढ़ाया। ख्वाहिश हुई आज फिर मैं बच्च
पाता और उनके कंधे पर लिपटकर उनकी सफेद दाढ़ी में, जो
सचमुच नूरानी हो चली थी, उँगलियाँ घुमाकर उन्हें "दादा" क
पुकार उठता। लेकिन न मैं अब बच्चा हो सकता था, न जवान
वह मासूमियत और पवित्रता रह गई थी। अंग्रेजी स्कूल के तत्का
वातावरण ने अजीब अस्वभाविकता हर बात में ला दी थी। पर
शायद एक चीज़ अब भी पवित्र रह गई थी। आँखों ने आँसू
छलकन से अपने को पवित्र कर चुपचाप ही उनके चरणों में श्रद्धां
चढ़ा दी।

हज से लौटने के बाद सुभान दादा का ज़्यादा वक्त नमाज़बं
में ही बीतता। दिन भर उनके हाथों में तस्वीह के दाने घूमते और उ
ज़बान अल्लाह की रट लगाए रहती। इलाके भर में उनकी बुजुर्गी
धाक थी, बड़े-बड़े झगड़ों की पंचायतों में दूर-दूर के हिंदू-मुसलम
उन्हें मुकर्रर करते। उनकी ईमानदारी की कुछ ऐसी धूम थी।

सुभान दादा का एक अरमान था, मस्ज़िद बनाने का। मेरे मा
का मंदिर उन्होंने ही बनवाया था। उन दिनों वह साधारण राज
लेकिन तो भी कहा करते— "अल्लाह ने चाहा तो मैं भी एक मस्ज़ि
ज़रूर बनवाऊँगा।"

अल्लाह ने चाहा और ऐसा दिन आया। उनकी मस्जिद भी तैय
हुई।

गाँव के ही लायक एक छोटी-सी मस्ज़िद, लेकिन बड़ी ही खूबसूरत
दादा ने अपनी जिंदगी-भर अर्जित कला इसमें खर्च कर दी थी
हाथ में इतनी ताकत नहीं रह गई थी कि अब कन्नी या बसूल
पकड़ें, लेकिन दिन-भर बैठे-बैठे एक-एक ईंट की जड़ाई का ध्या
रखते और उनके भीतर-भीतर जो बेल-बूटे काढ़े गए थे, उनके सा
नक्शे उन्होंने ही खींचे थे और उनमें से एक-एक का काढ़ा जा
उनकी ही बारीक निगरानी में हुआ।

मेरे मामाजी के बगीचे में शीशम, सखुए, कटहल आदि इमारतों में काम आने वाले पेड़ों की भरमार थी। मस्ज़िद की सारी लकड़ी हमारे बगीचे से गई थी।

जिस दिन मस्ज़िद तैयार हुई, सुभान दादा ने इलाके भर के प्रतिष्ठित लोगों को न्यौता दिया था। जुमे का दिन था। जितने मुसलमान थे, सबने उसमें नमाज़ पढ़ी थी। जितने हिंदू आए थे, उनके सत्कार के लिए भी अच्छा प्रबंध किया गया था। शरबत-पानी का इंतजाम था, पान-इलायची का प्रबंध भी था। अभी तक लोग मस्ज़िद-उद्घाटन के दिन दादा की मेहमानदारी भूले नहीं हैं।

ज़माना बदला। मैं अब शहर में ही ज्यादातर रहता। और शहर आए दिन हिन्दू-मुस्लिम दंगों के अखाड़े बन जाते थे। हाँ, आए दिन देखिएगा एक ही सड़क पर हिन्दू मुसलमान चल रहे हैं, एक दुकान पर सौदे खरीद रहे हैं, एक ही सवारी पर जानू-बजानू आ-जा रहे हैं, एक ही स्कूल में पढ़ रहे हैं, एक ही दफ़्तर में काम कर रहे हैं कि अचानक सबके सिर पर शैतान सवार हो गया। हल्ला, भगदड़, मारपीट, खून-खराबा, आगजनी--सारी खुराफ़ातों की छूट। न घर महफूज, न शरीर, न इज्ज़त। प्रेम, भाईचारा और सहृदयता के स्थान पर घृणा, विरोध और नृशंस हत्या का नग्न-नृत्य।

शहरों की यह बीमारी धीरे-धीरे देहात में घुसने लगी। गाय और बाजे के नाम पर तकरारें होनी लगीं। जो ज़िंदगी-भर कसाई खानों के लिए अपनी गाएँ बेचते रहे, वे ही एक दिन किसी एक गाय के कटने का नाम सुनकर ही कितने इंसानों के गले काटने को तैयार होने लगे। जिनके शादी-ब्याह पर्व-त्यौहार बिना बाजे के नहीं होते, जो मुहर्रम की गमी में बाजे-गाजे की धूम किए रहते, अब वे ही अपनी मस्ज़िद के सामने से गुजरते हुए एक मिनट के बाजे पर खून की नदियाँ बहाने को उतारू हो जाते।

कुछ पंडितों की बन आई, कुछ मुल्लाओं की चलती बनी। संगठन और तंजीम के नाम पर फूट और कलह के बीज बोए जाने लगे। लाठियाँ उछलीं, छुरे निकले, खोपड़ियाँ टूटीं, अंतड़ियाँ बाहर आईं।

कितने नौज़वान मरे, कितने घर फुँके। बाकी बच गए खेत खलिह
वे अंग्रेजी अदालत के खर्चे में फुँक गए। खबर फैली—इस
सुभान दादा के गाँव के मुसलमान भी कुर्बानी करेंगे। इलाके
मुसलमान कम थे, लेकिन उनके जोश का क्या कहना ! इधर हिं
की जितनी गाय पर ममता न थी, उससे ज्यादा अपनी जायदाद
घमंड था। तनातनी का बाज़ार गर्म। खबर यह भी फैली कि सु
दादा की मस्ज़िद में ही कुर्बानी होगी।

"ऐं ! सुभान दादा की मस्जिद में कुर्बानी ? नहीं, ऐसा नहीं
सकता।"

"अगर हुई, तो क्या होगा ? हमारी नाक कट जाएगी। लोग
कहेंगे, इतने हिंदुओं के रहते गौ-माता के गले पर छुरी चली ?

"छुरी से गौ-माता को बचाना है तो गौरा-गौरी के कसाईखाने
हम धावा करें। और सचमुच ज़ोश है, तो चलिए मुजफ्फरपुर; अं
फौज की छावनी में। जहाँ मोटी-ताजी बछियाँ काटी जाती हैं।"

"लेकिन वे तो हमारी आँखों से दूर हैं। देखते हुए मक्खी
निगली जाएगी ?"

"माफ कीजिएगा, दूर-नज़दीक की बात नहीं। बात है हिम्मत
ताकत की। छावनी में आप नहीं जाते हैं, इसलिए कि वहाँ सीधे
के मुँह में पड़ना होगा। यहाँ मुसलमान एक मुट्ठी हैं, इसलिए
टूटने को उतावले हैं।"

"आप सुभान खाँ का पक्ष ले रहे हैं, दोस्ती निभाते हैं। धर्म
बढ़कर दोस्ती नहीं।"

कुछ नौज़वानों को मेरे मामाजी की बात ऐसी लगी कि सख्त-सु
कहते वहाँ से उठकर चल दिए, लेकिन कितना भी गुस्सा किया ज
चीखा-चिल्लाया जाए—यह बात थी कि मामा की बिना रजामंदी
किसी बड़ी घटना के लिए कोई पैर उठाने की हिम्मत नहीं कर सक
था। उधर सुभान दादा के दरवाजे पर भी मुसलमानों की भीड़ है।
जाने दादा में कहाँ का जोश आ गया है। वह कड़ककर कह रहे हैं

"गाय की कुर्बानी नहीं होगी। ये फालतू बातें सुनने को मैं तैय

नहीं हूँ। तुम लोग हमारी आँखों के सामने से हट जाओ।"

"क्यों नहीं होगी ? क्या हम अपने मज़हब के नारे छोड़ देंगे ?

"मैं कहता हूँ यह मज़हब नहीं है। मैं हज से हो आया हूँ, कुरान मैंने पढ़ी है। गाय की कुर्बानी लाजिमी नहीं है। अरब में लोग दुम्मे और ऊँट की कुर्बानी करते हैं।"

"लेकिन हम गाय की कुर्बानी करें तो वे रोकने वाले कौन होते हैं ?

"हमारे मज़हब में वे दस्तांजी क्यों करेंगे ?"

"उनकी बात उनसे पूछो। मैं मुसलमान हूँ, कभी अल्लाह को नहीं भूला हूँ।

मैं मुसलमान की हैसियत से कहता हूँ, मैं गाय की कुर्बानी नहीं होने दूँगा।"

दादा की समूची दाढ़ी हिल रही थी। गुस्से से चेहरा लाल था। होंठ फड़क रहे थे, शरीर तक हिल रहा था। उनकी यह हालत देख सभी चुप रहे। लेकिन एक नौजवान बोल उठा—"आप बूढ़े हैं, आप अलग बैठिए, हम काफिरों को समझ लेंगे।"

"कूल्लू का बेटा.......ज़बान सँभाल कर बोल, तू इन्हें काफिर कह रहा है ? और मेरे बुढ़ापे पे मत जा। मैं मस्जिद में चल रहा हूँ। पहले मेरी कुर्बानी हो लेगी, तब गाय की कुर्बानी हो सकेगी।"

सुभान दादा वहाँ उसी तनातनी की हालत में मस्ज़िद में आए। नमाज़ पढ़ी फिर तस्बीह लेकर मस्ज़िद के दरवाजे की चौखट पर—"मेरी लाश पर ही कोई भीतर घुस सकता है"—कहकर बैठ गए। उनकी आँखें मुँदी हैं, किन्तु आँसुओं की लड़ी उनके गाल से होती, उनकी दाढ़ी को भिगोती अजस्र रूप में गिरती जा रही है। हाथ में तस्बीह के दाने हिल रहे हैं और होठों पर जरा-जरा जुंबिश है—नहीं तो उनका समूचा शरीर संगमरमर की मूर्ति-सा लग रहा है—निश्चल, निस्पंद। धीरे-धीरे मस्ज़िद के नजदीक लोग इकट्ठा होने लगे।

पहले मुसलमान, फिर हिंदू भी। अब गाय की कुर्बानी का सवाल दादा के आँसुओं की धारा में धँस कर न जाने कहाँ चला गया था।

वह साक्षात् देवदूत-से दीख पड़ते थे। देवदूत—जिसके रोम-रोम से
और भाईचारे का संदेश निकलकर वायुमंडल को व्याप्त कर रहा

प्रश्न-अभ्यास

I. विचार-बोध

1. सुभान खाँ कर्ज़ के पैसे से तीरथ क्यों नहीं करना चाहते थे?
2. लेखक ने सुभान खाँ के रूप का जो वर्णन किया है, उसे शब्दों में लिखिए।
3. सुभान दादा नमाज़ किस तरह पढ़ते थे और लेखक पर उसका प्रभाव पड़ता था ?
4. "मजदूरी-भर पूरा काम नहीं करने से अल्लाह नाराज़ हो जाएंगे" इस कथन का आशय समझाइए।
5. अपने बचपन की किन-किन बातों से लेखक ने हिन्दू-मुसलमान ...ता का वर्णन किया है ?
6. सुभान दादा से सौगात लेते समय लेखक के मन में क्या भाव आए
7. सुभान खाँ ने मस्जिद कैसे बनाई ?
8. हिन्दू-मुसलमानों में दंगे की संभावना को सुभान खाँ ने कैसे रोका
9. रेखांकित अंशों का भाव स्पष्ट कीजिए—
   - अ. उनकी आँखों को देखकर मेरा बचपन का दिल भी भावना ओतप्रोत हो गया।
   - आ. चेहरे से नूर टपकता, मुँह से शहद झरता।
   - इ. अचानक सबके सिर पर शैतान सवार हो गया।

II. भाषा-प्रयोग

1. उदाहरण के अनुसार वाक्य बदलिए—

> **उदाहरण :** नौकर ने सात बजे दरवाजा **खोला**।→सात बजे दरवाजा **खुल गया।**

(1) जेबकतरे ने रामू की जेब काटी→..............................

(2) किसान ने खेत जोता→..............................

(3) डॉक्टर ने शीला का कान छेदा→.................................

(4) सीता ने माला गूँथी→...

2. वाक्य में विशेषण का कार्य करने वाले दो या दो से अधिक पदों के समूह को पदबंध कहते हैं।

उदाहरण : इस मुहर्रम के पीछे **हृदय को पिघला देने वाली** घटना छिपी है।

पाठ से इसी प्रकार के तीन विशेषण पदबंध छाँटिए!

3. निम्नलिखित शब्दों के हिन्दी पर्याय दीजिए--

अरमान, रज़ामंदी, तसबीह, मुल्क, दिल, कर्ज, खुश, आगजनी।

4. उदाहरण के अनुसार वाक्य बदलिए--

उदाहरणः	मोहन लखनऊ जाएगा। **शर्त यह है** कि टिकट मिले।
	मोहन लखनऊ जाएगा, **बशर्ते** कि टिकट मिले।

1. पिताजी मुझे घड़ी देंगे। शर्त यह है कि मैं परीक्षा में सफल हो जाऊँ।
2. शीला नाचेगी। शर्त यह है कि राहुल गाए।
3. फसल अच्छी होगी। शर्त यह है कि वर्षा हो।

III. योग्यता-विस्तार

1. "सभी धर्म मानवता के विकास के साधन होते हैं"-- इस विषय पर अपनी कक्षा में चर्चा कीजिए।
2. नीचे दिए हुए पदों और पदबंधों का प्रयोग करते हुए एक भिखारी का रूप-वर्णन कीजिए :

झुकी कमर, पसलियों से लगा पेट, उदास, बढ़ी हुई दाढ़ी, उलझे मैले बाल, फटी धोती, लाठी, कटोरा।

शब्दार्थ और टिप्पणी

विमुग्ध	=	मोहित
आवेश	=	जोश
मंदाकिनी	=	एक नदी, गंगा की स्वर्ग से बहने वाली धारा
आनंदातिरेक	=	बहुत खुशी
प्रतिष्ठा	=	आदर, स्थापना करना
उद्घाटन	=	खोलना, प्रकट करना

अनुपम	=	अनोखा
गंडा	=	गाँठ लगा पवित्र धागा जो ताबीज़ की तरह पहना जाता है।
श्रद्धांजलि	=	श्रद्धा का भाव प्रकट करना
तीरथ	=	तीर्थ, पवित्र स्थान
अर्जित	=	प्राप्त
कुरान	=	मुसलमानों का पवित्र धार्मिक ग्रंथ
खुराफात	=	झगड़ा खड़ा करने वाली बात, शैतानी
हज	=	मक्का नामक तीर्थ स्थान की यात्रा
नमाज-बंदगी	=	पूजा-पाठ
मुकर्रर	=	निश्चित, नियत
ख्वाहिश	=	इच्छा
जानू-ब-जानू	=	सटकर बैठना, अगल-बगल बैठना
नूरानी	=	प्रकाशमान
मासूमियत	=	भोलापन
तसबीह	=	जप की माला
चकमा देना	=	धोखा देना
धाक जमाना	=	रौब जमाना
शैतान सवार होना	=	दिमाग खराब होना
सफुआ	=	एक वृक्ष-विशेष जिसकी लकड़ी इमारत बनाने में काम आती है
रसूल	=	पैगम्बर
दस्तन्दाजी	=	दखल देना
राज	=	मिस्त्री, मकान बनाने वाला कारीगर
पैका	=	ताजियों का जुलूस
नीमआस्तीन	=	आधी बाँहों वाला वस्त्र

टिप्पणी

जनेऊ	:	हिन्दुओं के सोलह संस्कारों में से एक संस्कार जो ब्रह्मचर्य जीवन में प्रवेश करने से पहले किया जाता है।
ताजिया	:	मुर्हरम क्रे त्यौहार पर इमाम हसन और इमाम हुसैन के मकबरों की आकृति का बाँस और रंगीन कागज़ से बनाया गया ढाँचा
कन्नी और बसूली	:	वे औजार जिनकी सहायता से राज मकान आदि बनाता है।

जवाहरलाल नेहरू

आधुनिक भारत के निर्माताओं में पंडित जवाहरलाल नेहरू का प्रमुख स्थान है। उनका जन्म 14 नवम्बर, सन् 1889 ई. को इलाहाबाद के प्रतिष्ठित परिवार में हुआ था। उनके पिता पंडित मोतीलाल नेहरू प्रसिद्ध वकील थे। उनकी प्रारंभिक शिक्षा घर पर और उच्च शिक्षा इंग्लैंड में सम्पन्न हुई। अंग्रेज़ी शिक्षा का उन पर बहुत प्रभाव था। उन्होंने अपना सुखी जीवन छोड़कर देश के हित के लिए त्याग और बलिदान का जीवन बिताया। महात्मा गाँधी ने उन्हें अपना राजनैतिक उत्तराधिकारी माना। वे बच्चों के चाचा नेहरू तो सदा बने रहे। नेहरू जी का स्वर्गवास 27 मई, सन् 1964 में हुआ।

नेहरूजी बड़े उत्साही, कर्मठ और साहसी व्यक्ति थे। वे अहिंसा और शांति के उपासक तथा मानवतावादी थे। उन्होंने जीवन-भर अन्याय, दासता और दमन का विरोध किया। स्वतंत्र भारत के प्रथम प्रधानमंत्री के रूप में देश के नव-निर्माण और विकास के लिए बड़ी-बड़ी योजनाएँ उन्होंने कार्यान्वित कीं। देश के पिछड़ेपन और गरीबी को दूर करने के लिए उन्होंने अथक परिश्रम किया।

नेहरूजी एक महान जननेता होने के साथ-साथ उच्चकोटि के लेखक भी थे। उन्होंने प्रायः अंग्रेज़ी भाषा में ही रचनाएँ की हैं। उनकी कृतियों का अनुवाद देश-विदेश की अनेक भाषाओं में हुआ है। हिन्दी में भी उनकी सभी पुस्तकों का अनुवाद मिलता है। उनके प्रमुख ग्रन्थों के नाम हैं— विश्व इतिहास की झलक, मेरी कहानी, भारत की खोज, पिता के पत्र पुत्री के नाम आदि।

10

मेरी अंतिम अभिलाषा

[पं. जवाहरलाल नेहरू ने मरने के पहले अपनी वसीयत लिखी थी जिसमें देश के प्रति उनका प्रेम दिखाई देता है। वे चाहते थे कि मरने के बाद उनका दाह-संस्कार कर दिया जाए और उनकी भस्म का कुछ भाग प्रयाग की गंगा में प्रवाहित कर दिया जाए। भस्म का शेष भाग भारत के खेतों पर बिखेर दिया जाए, जिससे वह भारत की धूल और मिट्टी में मिलकर मातृभूमि का अभिन्न अंग बन जाए।]

भारतीय जनता से मुझे इतना प्रेम और स्नेह मिला है कि मैं चाहे जो कुछ भी क्यों न करूँ, उसके अल्पांश का भी बदला नहीं चुका सकता। और सच तो यह है कि प्रेम जैसी अमूल्य वस्तु का बदला चुकाया भी नहीं जा सकता।

लोगों ने बहुतों को सराहा है और अनेकों के प्रति श्रद्धा व्यक्त की है, परन्तु भारतीय जनता के सभी वर्गों के लोगों से मुझे इतना अधिक प्यार मिला है कि मैं उससे अभिभूत हूँ। मैं तो केवल यह आशा कर सकता हूँ कि जितने दिन मैं और जीवित रहूँ, अपने देशवासियों के और उनके प्यार के योग्य बना रहूँ।

अपने अनगिनत साथियों और सहकर्मियों के अनुग्रह का मैं और भी अधिक ऋणी हूँ। हम लोगों ने बड़े-बड़े कामों को हाथ में लिया और कंधे से कंधा मिलाकर हम उन्हें करते रहे और उन सफलताओं और विपत्तियों में साझीदार रहे जो इस प्रकार के कामों के साथ अनिवार्य रूप से लगी रहती हैं।

मेरी इच्छा है कि मरने के बाद मेरा दाह-संस्कार कर दिया जाए। यदि मै विदेश में मरूँ तो दाह-कर्म वहीं कर दिया जाए और मेरी

भस्म प्रयाग भेज दी जाए। उसकी एक मुट्ठी गंगा में प्रवाहित कर दी जाए। भस्म के अधिकांश का क्या किया जाए, यह मैं आगे बताता हूँ। भस्म का कुछ भी भाग न तो बचाया जाए और न सुरक्षित रखा जाए।

प्रयाग की गंगा में भस्म का कुछ भाग विसर्जित करने की मेरी इच्छा का मेरी दृष्टि में कोई धार्मिक महत्त्व नहीं है। बचपन से ही इलाहाबाद की गंगा और यमुना नदियों से मेरा ममत्व रहा है और ज्यों-ज्यों मैं बड़ा होता गया हूँ, यह ममत्व बढ़ता ही गया।

विभिन्न ऋतुओं में गंगा की विविध भाव-भंगिमाओं को निहारा है। उस इतिहास-कथा, उन पौराणिक गाथाओं, परंपराओं, गीतों एवं लोककथाओं की याद मुझे प्रायः हो आई है जो अनादि काल से उससे संबद्ध हैं और उसकी जलधारा का अंग बन गई हैं।

गंगा तो विशेषकर भारत की नदी है। लोगों की उस पर अपार श्रद्धा है। उसके साथ भारत की जातीय स्मृतियाँ, उसकी आशाएँ और आकांक्षाएँ तथा उसकी जय-पराजय और उसके विजय-गीत जुड़े हुए हैं। युगों पुरानी भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता की प्रतीक रही है यह गंगा— जो अनादि काल से बहती हुई, बदलती चली आ रही है, फिर भी बनी हुई है-वही गंगा की गंगा।

वह मुझे हिमालय की उन तुषार-मंडित चोटियों और गहरी उपत्यकाओं की याद दिलाती रही है, जो मुझे सदा प्रिय रही हैं। वह मुझे नीचे के उर्वर और विस्तृत मैदानों की भी याद दिलाती रही है जहाँ मेरा जीवन ढला है और जो मेरे जीवन के कार्य-क्षेत्र रहे हैं। प्रभात की किरणों में मुसकराती और नाचती हुई, शाम की घिरती आती परछाइयों के साथ श्यामल, उदास और रहस्यमयी बनी हुई, शीत ऋतु में सँकरी, मंद एवं ललित धारा वाली, वर्षा ऋतु में समुद्र का-सा विस्तार तथा कुछ-कुछ उसी की-सी विनाशशीलता की शक्ति लिए भीषण गर्जना करती हुई गंगा मेरे लिए भारत के उस अतीत का प्रतीक और स्मृति रही है जो वर्तमान तक चला आया है और भविष्य के महासागर की ओर बढ़ता जा रहा है।

यद्यपि मैंने अधिकांश पुरानी परंपराओं और रस्मों को छोड़ दिया है और मैं चाहता हूँ कि भारत उन बंधनों से अपने को मुक्त कर ले जो उसे जकड़े हुए हैं और आगे नहीं बढ़ने देते। जो लोगों में फूट डालते हैं और अधिकांश को दबाए रखते हैं तथा जो स्वतंत्र शारीरिक तथा आध्यात्मिक विकास में बाधा पहुँचाते हैं। यद्यपि मैं यह सब चाहता हूँ तथापि मैं यह नहीं चाहता कि भारत के अतीत के साथ अपना नाता तोड़ दूँ।

मुझे उस उत्तराधिकार पर गर्व है जो हमें प्राप्त हुआ है। मैं इस बात को भी भली-भाँति समझता हूँ कि मैं भी औरों की तरह उस अटूट शृंखला की एक कड़ी हूँ जो स्मृति के परे भारत के अतीत में इतिहास के उषाकाल तक चली जाती है। उस शृंखला को मैं कभी नहीं तोड़ना चाहूँगा क्योंकि मैं उसे बहुत बड़ी निधि मानता हूँ और उससे प्रेरणा ग्रहण करता हूँ। अपनी इस अभिलाषा की पूर्ति के लिए और भारत के सांस्कृतिक उत्तराधिकार के प्रति अपनी अंतिम श्रद्धांजलि अर्पित करने की इच्छा से मैं यह प्रार्थना करता हूँ कि मेरी भस्म में से मुट्ठीभर इलाहाबाद के पास गंगा में प्रवाहित कर दी जाए जिससे कि वह उस महासागर तक पहुँच जाए, जो भारत का पाद-प्रक्षालन करता है।

मैं चाहता हूँ कि मेरी भस्म का शेष भाग विमान द्वारा ऊपर से उन खेतों पर बिखेर दिया जाए जहाँ भारत के किसान कड़ी मेहनत करते हैं ताकि वह भस्म भारत की धूल और मिट्टी में मिलकर भारत का अभिन्न अंग बन जाए।

प्रश्न-अभ्यास

I. विचार-बोध

1. नेहरू जी ने भारतीय जनता के प्रति अपने क्या भाव प्रकट किए हैं?
2. नेहरू जी ने अपने आपको साथियों और सहकर्मियों का ऋणी क्यों माना है ?

3. अपने दाह-संस्कार के विषय में नेहरू जी की क्या इच्छा थी ?
4. गंगा नदी के प्रति नेहरू जी के भावों को अपने शब्दों में लिखिए।
5. भारत की पुरानी परम्पराओं और रस्मों के बारे में नेहरू जी के विचार प्रकट कीजिए।
6. नेहरू जी के मन में इलाहाबाद की गंगा और यमुना के प्रति बहुत महत्व क्यों रहा है ? सही उत्तर छाँटिए :
   क. वे धार्मिक स्वभाव के मनुष्य थे।
   ख. वे इन नदियों को बड़ी नदियाँ मानते थे।
   ग. वे बचपन से ही इन नदियों से जुड़े रहे।
   घ. वे कृषि के लिए इन्हें उपयोगी मानते थे।

II भाषा प्रयोग

1. उदाहरण के अनुसार निम्नलिखित वाक्यों को बदलिए–

> **उदाहरण** : मरने के बाद उसका दाह-संस्कार कर दिया गया।
> →मेरी इच्छा है कि मरने के बाद उसका दाह-संस्कार कर दिया जाए।

   क. हरिद्वार पहुँचने के बाद गरीबों को भोजन **दे दिया गया।**
   →मेरी अभिलाषा है कि ....
   ख. मेरा बेटा समाजसेवी बन गया।
   →मेरी आकांक्षा है कि ....
   ग. साधुओं के आने के बाद उन्हें कम्बल बाँट दिए गए।
   →मेरी कामना है कि ....
   घ. सारा देश सुख-समृद्धि से भर गया।
   →मेरी मनोकामना है कि ....

2. "क" प्रत्यय का प्रयोग "करने वाला" के अर्थ में किया जाता है और "ज" प्रत्यय "जन्म लेने वाला" या "उत्पन्न होने वाला" के अर्थ में।
नीचे इन प्रत्ययों से बने कुछ शब्द दिए जा रहे हैं–

> **उदाहरण** : लेखक → लेख + क
> जलज → जल + ज

उपर्युक्त उदाहरण के अनुसार नीचे दिए हुए शब्दों से प्रत्यय अलग कीजिए–
पंकज, पाठक, कृषक, नीरज, वारिज, वंशज।

3. कुछ शब्दों के दो या उससे अधिक अर्थ होते हैं, जैसे–

> **उदाहरण** : कर → 1. टैक्स
>
> 2. हाथ
>
> 1. व्यापारी अपनी आमदनी पर कर देता है।
> 2. भक्त ने प्रसाद के लिए कर बढ़ाए।

उपर्युक्त उदाहरण के आधार पर निम्नलिखित शब्दों के दो अर्थ लिखकर वाक्यों में प्रयोग कीजिए–

पक्ष, कल, भाग, जग, आम।

4. निम्नलिखित क्रिया-प्रयोगों को देखिए। ये कर्मवाच्य के वाक्य हैं।
   1. दाह-संस्कार कर दिया जाए।
   2. मेरी भस्म प्रयाग भेज दी जाए।
   3. अस्थियाँ गंगा में प्रवाहित कर दी जाएँ।
   4. भस्म का कुछ भी भाग न तो बचाया जाए और न सुरक्षित रखा जाए।

   अपने पाठ से इसी प्रकार के कुछ प्रयोग और चुनिए।

III. योग्यता-विस्तार

1. नीचे लिखे गद्यांश को ध्यान से पढ़िए–

   शास्त्री जी की विजय का सबसे बड़ा रहस्य यह था कि वे सदा जनता को अपने साथ लेकर चले । उन्होंने "जय जवान" और "जय किसान" का नारा लगाया; जिसका परिणाम यह हुआ कि जहाँ एक ओर जवानों ने राष्ट्र की रक्षा के लिए अपने प्राण हथेली पर ले लिए, वहाँ किसानों ने अपने परिश्रम द्वारा अधिक-से-अधिक अन्न उपजाने का प्रण किया। इससे सारा राष्ट्र एक फ़ौलादी दीवार की तरह कष्ट का सामना करता दिखाई दिया। प्रधानमंत्री के रूप में यह शास्त्री जी की बहुत बड़ी उपलब्धि थी– इतनी बड़ी कि "शांति के पुजारी" और "युद्ध के विजेता" के रूप में उनका नाम राष्ट्र के इतिहास में सदा स्वर्णाक्षरों में लिखा जाएगा।

   (क) उपर्युक्त गद्यांश का सारांश लगभग 40 शब्दों में लिखिए।

   (ख) इस गद्यांश के लिए एक उपयुक्त शीर्षक दीजिए।

शब्दार्थ और टिप्पणी

अल्पांश = (अल्प + अंश) थोड़ा या भाग, कम अंश

सराहा = प्रशंसा की

दाह-संस्कार	=	मृत शरीर को चिता में जलाना
अभिभूत	=	प्रभावित, रोमांचित
विसर्जित	=	छोड़ना, प्रवाहित करना
अनुग्रह	=	कृपा
भाव-भंगिमाएँ	=	भाव चेष्टाएँ
तुषार-मंडित	=	बर्फ से ढकी
उपत्यका	=	घाटी
उर्वर	=	उपजाऊ
आशंका	=	भय
रहस्यमय	=	छिपी, गूढ़
आध्यात्मिक	=	आत्मा और परमात्मा से संबंधित
अतीत	=	भूतकाल
प्रतीक	=	चिह्न, प्रतिनिधि, सूचक
पाद-प्रक्षालन	=	पैर धोना
सहकर्मी	=	साथ-साथ काम करने वाले
उत्तराधिकार	=	(उत्तर + अधिकार) पूर्वजों से प्राप्त अधिकार
उषाकाल	=	प्रभात, प्रारम्भ
निधि	=	खजाना, मूल्यवान वस्तु
भस्म विसर्जित करना	=	मरने के बाद शरीर की राख नदी में प्रवाहित करना
भविष्य का महासागर	=	आगे आने वाला अनंत समय
फूट डालना	=	भेद या विद्रोह पैदा करना
नाता तोड़ना	=	सम्बन्ध तोड़ लेना
कंधे से कंधा मिलाकर काम करना	=	सबके साथ मिलकर काम करना।

उदयशंकर भट्ट

उदयश॰ भट्ट का जन्म सन् 1897 ई. में उत्तर प्रदेश के बुलन्दश ज़िले में हुआ था। उनके पूर्वज गुजरात से आकर यहाँ बस गए थे। उन घर का वातावरण संस्कृतमय था। वे बचपन से ही संस्कृत के छंदों रचना करने लगे। शिक्षाकाल में ही वे हिन्दी में कविताएँ, लेख आ लिखने लगे थे। उन्होंने स्वाधीनता-आन्दोलन में भी भाग लिया। स्वतंत्र के बाद वे आकाशवाणी के परामर्शदाता और निदेशक रहे। जीविकोपार्ज के लिए उन्होंने सबसे पहले लाला लाजपतराय के नेशनल कॉलेज, लाहै में अध्यापन कार्य किया। बाद में लाहौर के ही खालसा कॉलेज, सनात धर्म कॉलेज आदि में भी अध्यापन किया। इसी समय उनमें नाटक लिख की रुचि विकसित हुई। 28 फरवरी सन् 1966 ई. में उनका निधन हुअ

भट्टजी बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। उन्होंने बोलचाल की सर भाषा का प्रयोग किया है। साथ ही क्षेत्रीय शब्दावली का भी खुलकर प्रयो किया है। उन्होंने नाटककार के रूप में ख्याति प्राप्त की। अपने एकांकि में भट्टजी ने समाज में प्रचलित जनजीवन की समस्याओं को प्रस्तुत कि है। उन्होंने कई पौराणिक तथा ऐतिहासिक नाटक भी लिखे।

इनकी प्रमुख रचनाएँ—

तक्षशिला, युगदीप, अमृत और विष, विक्रमादित्य, मुक्तिपथ, शकविज स्त्री का हृदय, आ. का आदमी, कालिदास, मत्स्य-ंधा, वह जो मैंने देख एक पंछी आदि।

11

बीमार का इलाज

[इस एकांकी में एक मनोरंजक घटना का वर्णन किया गया है। घर में आया मेहमान बीमार पड़ जाता है। घर वाले अपनी रुचि और सलाह के अनुसार अलग-अलग तरह के इलाज करवाते हैं। एक ओर मेहमान को ऐलोपैथिक डॉक्टर की दवाई लेनी पड़ती है तो दूसरी ओर वैद्यजी की। एक ओर मंदिर के पुजारी उस पर पवित्र जल छिड़कने आते हैं तो दूसरी ओर होम्योपैथिक डॉक्टर उसे देखने। नौबत यहाँ तक आ जाती है कि उसके इलाज को लेकर घर के स्वामी और उसकी पत्नी का आपस में झगड़ा हो जाता है। इन सबके बीच बीमार की दयनीय स्थिति देखते ही बनती है। इस प्रसंग से हमारा मनोरंजन तो होता ही है, साथ ही लोगों की विचित्र प्रवृत्तियों की ओर व्यंग्यपूर्ण संकेत भी मिलते हैं।]

पात्र-परिचय

चंद्रकांत : आगरा का एक रईस, जो अंग्रेज़ी सभ्यता व रहन-सहन का प्रेमी है। एकदम भारी-भरकम, उम्र 45 वर्ष।

कांति : चंद्रकांत का बड़ा पुत्र, उम्र लगभग 21-22 वर्ष।

विनोद : कांति का समवयस्क मित्र।

शांति : कांति का छोटा भाई।

सरस्वती : कांति की माँ—अपने पति से सर्वथा भिन्न दुबली-पतली, पुराने विचारों की।

प्रतिमा : कांति की बहन—एकदम मोटी, उम्र 24 वर्ष।

डॉ. गुप्ता, डॉ नानकचंद, वैद्य हरिचन्द, बूढ़ा नौकर सुखिया, पंडित, ओझा, पुजारी इत्यादि।

(आगरा में कांति के पिता मि. चंद्रकांत की कोठी का एक कमरा
कमरे की सजावट एक संपन्न परिवार के अनुरूप है। सोफ़ा-सैट
पलंग, कुर्सियाँ, तिपाई इत्यादि सभी वस्तुएँ मौजूद हैं, पर नौकरों
निर्भर रहने तथा रूढ़िवादी गृहस्वामिनी के कारण स्वच्छता और सलीक़े
का अभाव है। दरी पर बिछी हुई चादर काफ़ी मैली है। जिस समय
का यह दृश्य दिखाया जा रहा है उस समय सवेरे के आठ बजे हैं।
कांति का मित्र विनोद बिस्तर पर लेटा है। उसे अचानक रात में ज्वर
हो गया, लगभग 104 डिग्री। कड़ी काठी होने के कारण वह लापरवाही
से कभी उठकर बैठ जाता है और कभी उठकर टहलने लगता है। वह
अपने भीतर से यह विचार निकाल देना चाहता है कि उसे ज्वर है।
फिर भी ज्वर की तेज़ी उसे बेचैन कर देती है और वह लेट जाता
है। कुछ देर बाद कांति नाइट ड्रेस में कंधे पर तौलिया डाले, चप्पल
फटफटाता, सीटी बजाता, बाएँ दरवाजे से कमरे में आता है।)

कांति— हलो, विनोद ! अमाँ, अभी तक चारपाई से चिपटे हो।
आठ बज रहे हैं। क्या भूल गए आज गाँव जाना है ?
तो स्वयं देर से उठा, वर्ना मुझे अब तक तैयार हो जाना
चाहिए था। लेकिन तुमने तो कुंभकरण के चाचा को भी
मात कर दिया, यार ! (पास जाकर) क्या बात है ? ठीक
तो है ?

विनोद— रात न जाने क्यों बुखार हो गया ? (हाथ फैलाकर)
देखो।

कांति— (देह छूकर) ओह ! सारी देह अंगारे की तरह दहक रही
है।

विनोद— कमबख्त बुखार कैसे बेमौके आ धमका।

कांति— यार, इस बुखार ने तो सारा मज़ा किरकिरा कर दिया।
इलाहाबाद से मैं तुम्हें कितने आग्रह से छुट्टियाँ बिताने
के लिए यहाँ आगरा लाया था। सोचा था, कुछ दिन यहाँ
घर में आनंद-मौज करेंगे और फिर खूब गाँव की सैर
करेंगे।

विनोद— मालूम होता है, मेरे भाग्य में गाँव की सैर नहीं लिखी है। ये छुट्टियाँ बेकार ही गईं।

कांति— गाँव का रास्ता बड़ा ऊबड़-खाबड़ है। इस दशा में तुम्हारा गाँव जाना असंभव है। सोचता हूँ मैं भी न जाऊँ। पर जाए बिना काम भी तो नहीं चलेगा। कहो तो मैं अकेला ही हो आऊँ। — इफ़ यू डोंट माइंड!.

विनोद— नहीं-नहीं, तुम हो आओ। उन्होंने आग्रह करके बुलाया है, हो आओ। मैं ठीक हो जाऊँगा, कोई बात नहीं।

कांति— तुम्हें कोई तकलीफ़ न होगी। डॉक्टर आ जाएगा। माता-पिता सभी तो हैं। मैं शाम को ही लौटने का यत्न करूँगा।

विनोद— नहीं-नहीं, मामूली बुखार है, ठीक हो जाएगा। जाओ।
(कांति के पिता चंद्रकांत का प्रवेश)

चंद्रकांत— (दूर से) किसको बुखार है, बेटा कांति ? अरे, इतनी देर हो गई, तुम अभी तक गाँव नही गए ? धूप हो जाएगी। धूप, धूल और धुआँ— ये तीन न सही, दो आदमी के प्राण निकालने को काफ़ी हैं। उस पर घोड़े की सवारी—न कूदते बने, न सीधे बैठते। बुखार किसे हो गया, बेटा ?

कांति— बाबूजी, विनोद को रात बुखार हो गया। देह तवे की तरह गरम है। डॉक्टर को बुलाना है। ऐसे में इसका जाना . . . .

चंद्रकांत— हैं-हैं, विनोद कैसे जा सकता है और फीवर, जंगल में आग की तरह उद्दंड ! अभी डॉक्टर को बुलाकर दिखा देना होगा। मैंने निश्चय कर लिया है— डॉक्टर भटनागर इस घर में कदम नहीं रख सकता। उसने प्रतिमा का केस खराब कर दिया था। बुखार उससे उतरता ही न था। डॉक्टर गुप्ता ने आते ही उसका बुखार उतार दिया। अब तो गुप्ता ही मेरे फ़ैमिली डाक्टर हैं। गुप्ता को बुलाओ। सुखिया, ओ सुखिया, जा, जा, डॉक्टर गुप्ता को तो बुला ला!

कांति— डॉ. भटनागर में मेरा "फ़ेथ" कभी नहीं रहा, बाबू
डॉ. नानकचंद को दिखाना ही ठीक है। न जाने उ
हाथ में कैसा जादू है। मेरा तो दिन-पर-दिन "होमियोपै
में विश्वास बढ़ता जा रहा है।

चंद्रकांत— (कमरे में टहलते हुए) मेरे बच्चे, तुम पढ़-लिखक
नासमझ ही रहे। बिना अनुभव के समझदार और
में अंतर ही क्या है। अरे, होमियोपैथी भी कोई इ
है। गाँठ बाँध लो— "कड़वी भेषज बिन पिये, मि
तन को ताप।" ये बाल धूप में सफ़ेद नहीं हुए
कहते क्यों नहीं, विनोद बेटा ?

विनोद— जी, (करवट बदल लेता है)।

चंद्रकांत— ये वैद हकीम क्या जानें— हरड़, बहेड़ा
शरबत-शोरबे के पंडित।

कांति— मैं चाहता हूँ आप इस मामले में ......

चंद्रकांत— नहीं, यह नहीं हो सकेगा। मैं जानता हूँ विनोद
भला इसी में है।

कांति— (विनोद से) तुम घबराना मत। मैं डॉक्टर नानकचंद
बुलाकर लाऊँगा। मेरा ख्याल है, शाम तक बुखार उ
जाएगा। अच्छा विनोद, देर हो रही है, चलूँ।

विनोद— हाँ-हाँ, तुम जाओ। मैंने बुखार की कभी परवाह
की है, कांति। उतर जाएगा अपने आप। शाम
लौटने की कोशिश करना।

कांति— अवश्य, अवश्य, तुम्हारे बिना मेरा मन क्या लगेगा
लेकिन जाना ज़रूरी है। अच्छा, विश यू स्पीडी रिकवरी
(सीटी बजाता चला जाता है।)

विनोद— नमस्कार (करवट बदल कर लेट जाता है)

(कांति की माँ सरस्वती का प्रवेश)

सरस्वती— (कमरे में घुसते ही) विनोद क्या बात है ? उठो, चा
तैयार है। कुछ खाओ-पियो। (पास जाकर) क्या बात

खैर तो है ? कुछ तबितय खराब है क्या ? (पलंग के पास जाकर विनोद को छूकर) हाय-हाय, देखो तो कितना बुखार है ? मुँह इंगुर-सा लाल हो रिया है बेचारे का —घबराओ मत, बेटा, मैं अभी वैद हरिचंद को बुलाती हूँ। वे काफ़ी काबिल वैद हैं। अरे शांति, ओ शांति ! (शांति आता है) देख तो बेटा, जा, हरिचंद वैद को बुला ला।

विनोद— माताजी, बाबूजी ने डॉक्टर गुप्ता को बुलाया है। शायद कांति ने डॉक्टर नानकचंद के लिए कहा है।

सरस्वती— लो और सुनो। इनके मारे भी मेरा नाक में दम है। उस मरे डॉक्टर को कुछ न आवे है न जावे है। न जाने क्यों डॉक्टर गुप्ता के पीछे पड़ रहे हैंगे। क्या नाम है मरे उस भटनागर का ? इन दोनों ने तो प्रतिमा को मार ही डाला था। वह तो कहो, भला हो इन बैद्य जी का। बचा लिया। जा, बेटा शांति, जा तो सही जल्दी!

शांति— जाऊँ हूँ माँ (चला जाता है) !

सरस्वती— अरी प्रतिमा, ओ प्रतिमा !

प्रतिमा— (दूर से ही) हाँ, माँ, क्या है ?

सरस्वती— देख, जा मंदिर में पंडित जी पूजा कर रहे हैं उनसे कहियो, जरा इधर होते जाएँ और देख, उनसे कहियों, मार्जन का जल लेते आवें, विनोद भैया बीमार हैं।

विनोद— (उत्सुकता से करवट बदलकर) पंडित जी का क्या होगा माँ ?

सरस्वती— बेटा, अपने वो पंडित जी रोज़ पूजा करने आवे हैं। ज़रा मार्जन कर देंगे। सारी अला-बला दूर हो जाएगी। अरी मिसरानी, ओ मिसरानी ! (दूर से आवाज़ आयी, बहू जी !) अरी देख, थोड़ा दूध तो गरम कर लाइयो।

विनोद— दूध तो मैं नहीं पियूँगा माता जी !

सरस्वती— (चिल्लाकर) अच्छा, रहने दे। (विनोद से) क्या हर्ज़ है,

थोड़ी देर बाद सही। (जैसे ही जाने लगती है वैसे मार्जन का जल-दूर्वा लेकर पंडित जी कमरे में आ हैं।) देखो पंडित जी, तुम्हारी पूजा से प्रतिमा जी थी। याद है ना ? ये मेरे कांति का मित्र है, जरा पढ़कर मार्जन कर दो।

पंडित जी— क्यों नहीं, बहूजी, मंत्र का बड़ा प्रभाव है। पु समयों में दवा-दारू कौन करै था। बस, मंत्राभि जल से मार्जन करा कि बीमारी गई।

सरस्वती— सच कहो हो पंडित जी, जरा कर तो दो मार्जन। मैंने अपने उन बैद जी को भी बुलाया है। शांति है बुलाने।

पंडित जी— तभी, तभी मैं भी कहूँ आज शांति बाबू नहीं दिख दिखे। ठीक है, एक शत्रु पर जब दो पिल पड़ें तो कैसे बचकर जाएगा ?

सरस्वती— हाँ, और क्या, पर आजकल के ये पढ़े-लिखे कुछ म तब ना ? तुम्हारे उन्ही को देख लो, कुछ दिनों डॉक्टरों के चक्कर में पड़े हैं।

पंडित जी— जमाना बड़ा खराब है, बहू जी ! देवता, ब्राह्मण गौ पर तो जैसे श्रद्धा ही न रही।

सरस्वती— अच्छा पंडित जी, मार्जन कर दो, मैं अभी आई। (जा है)

(पंडित मंत्र पढ़कर विनोद के ऊपर बार-बार जल छिड़कता है। उसी समय डॉक्टर को लेकर चंद्रकांत प्रवेश करते हैं।)

चंद्रकांत— हैं-हैं ! अरे, यह क्या हो रहा है ? (पास जाकर) करो, ब्राह्मण देवता बस करो ! (जोर से) अरे, क्या समझते हो इसे भूत है ? रहने दो। न जाने औरतों को कब बुद्धि आएगी। अरे, डॉक्टर गुप्ता, इधर बैठिए न !

पंडित जी— बस थोड़ा मार्जन रह गया है, बाबू जी। (मार्जन करता

डॉक्टर गुप्ता— महाराज, क्यों मारना चाहते हो बीमार को। निमोनिया हो जाएगा, निमोनिया। (पंडित डॉक्टर के कहने पर भी मार्जन किये ही जाता है) अटर न्यूसेन्स, मिस्टर चंद्रकांत।

चंद्रकांत— (कड़ककर) बस रहने दो। सुनते नहीं डॉक्टर गुप्ता क्या कह रहे हैं ? निमोनिया हो जाएगा।

पंडित जी— जैसी आपकी इच्छा। मेरा तो विचार है विनोद बाबू, कि इतने से ही बुखार उतर गया होगा। (चला जाता है)

डॉक्टर गुप्ता— मंत्रों से बीमारी अच्छी हो जाती तो हम क्या भाड़-झोंकने को इतना पढ़ते ! न जाने देश का ये अज्ञान कब दूर होगा ! (खाट के पास खड़े होकर विनोद को देखता है।) (थर्मामीटर देखकर) 104 डिग्री ! कोई बात नहीं, ठीक हो जाएगा। दवा लिखे देता हूँ, डिस्पेंसरी से मँगा लीजिएगा। दो-दो घंटे के बाद। पीने को केवल दूध। यू विल बी ऑल राइट विदन टू ऑर थ्री डेज़। बेचैनी मालूम हो, बुखार न उतरे तो बरफ़ रखिएगा सिर पर।

चंद्रकांत— ठीक है। (विनोद से) घबराने की कोई बात नहीं। ठीक हो जाओगे। मामूली बुखार है। मैं अभी दवा लाता हूँ। (एक तरफ़ से दोनों चले जाते हैं, दूसरी तरफ से सरस्वती आती है।)

सरस्वती— क्या हुआ, पंडित जी चले गए ? मार्जन कर गए ? (विनोद चुपचाप पड़ा रहता है)

सरस्वती— (देह छूकर) अब तो बुखार कम है। देखा मंत्र का प्रभाव, मार्जन करते ही फ़र्क पड़ गया।

(वैद्य हरिचन्द शांति के साथ आते हैं)

सरस्वती— लो, वैद जी आ गए। आओ, वैद जी।

हरिचंद— क्या बात है, बहू जी ? सबेरे ही शांति जा पहुँचा तो मैं डर गया। मैं तो चाहता हूँ कि अपनी जान-पहचान

के लोग सदा प्रसन्न रहें। हाँ, क्या बात है ? (सं
से पूछता है।)

सरस्वती— ये कांति के साथ पढ़े हैं वैद जी। छुट्टियों में उसी
संग सैर को आया, सो बेचारा बीमार पड़ गया !
देखो तो (जैसे ही वैद नाड़ी देखने को बढ़ता है वि
बोल उठता है।)

विनोद— डॉक्टर गुप्ता भी देख गए हैं, माता जी।

हरिचन्द— फिर मेरी क्या आवश्यकता है, मेरा काम ही क्या है
(एकदम दूर जा खड़ा होता है)
मैं ऐसे रोगियों का इलाज नहीं करता। उसी डॉक्टर
इलाज करो।

सरस्वती— वैद जी, उनकी भली चलाई। आने दो डॉक्टर गु
को। इलाज तो तुम जानो, तुम्हारा ही होगा। मैं
कांति के मित्र को और बीमार होने दूँगी ? नहीं, तु
ही इलाज करना होगा। उन मरों ने प्रतिमा को तो
ही दिया था। तुम्हीं ने तो बचाया।

हरिचन्द— (पास जाकर विनोद को देखते हुए) हाँ, सोच लो।
उन लोगों में से नहीं हूँ जो दवा देने के लिए भा
फिरें। मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि बाबू चंद्र
डॉक्टरों के चक्कर में पड़ गए हैं, जो अंग्रेज़ी दवा
देकर लोगों को मार देते हैं। (विनोद को देखकर)
खराब है। काढ़ा देना होगा। एक गोली दूँगा, काढ़े
साथ दे देना। बुखार पचेगा और ठीक हो जाएगा।

सरस्वती— (उछलकर) मैं कह नहीं रही थी, कब्जी से बुखार
कहो, विनोद क्या कहा था ? घोड़ी नहीं चढ़े तो
बारात भी नहीं देखी ? बहुत सी बीमारी का इलाज
मैं खुद ही कर लूँ हूँगी।

हरिचन्द— बीमारी पहचानने में कर तो ले कोई मेरा मुकाब
बड़े-बड़े सिविल सर्जन बुलाते हैं मुझे। अच्छा, च

काढ़ा और गोली भेज दूँगा। पहले बुखार पचेगा फिर उतरेगा।

(सरस्वती वैद्य के साथ एक द्वार से निकल जाती है। दूसरे से चंद्रकांत सुखिया के साथ दवा लेकर आते हैं।)

चंद्रकांत— लो, बेटा विनोद, एक खुराक पी लो। अभी ठीक हो जाओगे। (विनोद को उठाकर दवा पिलाता है।)

विनोद— अभी वैद्य हरिचन्द भी देखने आए थे।

चंद्रकांत— (चौंककर) आए थे ? वह मूर्ख वैद्य ! वह क्या जाने इलाज करना। वैद्य जी की दवा तो नहीं पी ? अच्छा, दो-दो घंटे बाद यह दवा लेते रहना।

(चंद्रकांत चला जाता है)

सुखिया— बाबू, मैं तो झाड़-फूँक में विश्वास करता हूँ। हाथ फेरते ही बुखार उतर जावेगा। यह ओझा से पानी लाया हूँ। दो घंटे में बुखार क्या उसका नाम भी नहीं रहेगा।

विनोद— अरे, कहीं बुखार भी झाड़-फूँक से गया है ! सुखिया, मैं तो गाँव का ही रहने वाला हूँ, मैंने तो कहीं नहीं देखा कि बुखार झाड़-फूँक से उतरता है। ज़रा पानी तो दो।

सुखिया— (दरी पर बैठकर तम्बाकू खाता हुआ) शर्त बद लो, शर्त ! और वह ओझा तो बैदगी भी जाने है। हमारे यहाँ तो कोई भी और कहीं नहीं जाए हैगा। (पानी देता है)

विनोद— (पानी पीकर) नहीं सुखिया, ओझा की कोई आवश्यकता नहीं है। कांति गया क्या ?

सुखिया— गए होंगे। घोड़ी तो दो दिन से खड़ी थी। अब तो पहुँचने वाले होंगे (इसी समय सरस्वती कटोरे में काढ़ा और दूसरे हाथ में दवा की गोली लेकर आती है)

सरस्वती— लो, बेटा विनोद, जरा जी को कड़ा करके पी तो लो। ऊपर से यह गोली खा लो।

विनोद— दवा तो अभी मैं पी चुका हूँ माताजी। बाबू जी पिला गए हैं।

सरस्वती— क्या कहा, दवा दे गए हैं ? कोई हर्ज़ नहीं, फ़ा
तुम्हें इसी दवा से होगा। यह काढ़ा ऐसा-वैसा नहीं
(कटोरा देती है। विनोद चुपचाप काढ़ा पीने लगता
इसी समय चंद्रकांत लौट आते हैं।)

चंद्रकांत— (विनोद को दवा पीते देखकर) यह क्या हो रहा
विनोद ?

सरस्वती— दवा दे रही हूँ और क्या ?

चंद्रकांत— तुम पागल हो गई हो ? विनोद डॉक्टर गुप्ता की
पी चुका है।

सरस्वती— सुनो, मैं यह नहीं मानती। मैं डॉक्टर की दवा
डॉक्टर दोनों को व्यर्थ समझती हूँ।

चंद्रकांत— तुम मूर्ख हो, कहीं डॉक्टर मूर्ख होता है ? मूर्ख हैं
वैद्य जो कुछ नहीं जानते। प्रतिमा को तो डॉ
गुप्ता से लाभ हुआ था।

सरस्वती— बिल्कुल गलत। दवा तो मैं देती हूँ।

चंद्रकांत— विनोद, दवा मत पियो, हरगिज़ न पियो। वैद्यों की द
पीना मृत्यु को बुलाना है।

सरस्वती— बेटा, यह काढ़ा पीना बहुत आवश्यक है। इसे बि
पिये तुम्हें लाभ ही न होगा। इन्हें कहने दो। ये ऐसे
कहते रहते हैं।

चंद्रकांत— (कटोरा विनोद के हाथ से लेकर) इसे रहने दो।
जाने संसार से मूर्खता कब जाएगी ? लो, इसे पियो

सरस्वती— नहीं, यह नहीं हो सके हैगा। पराया लड़का है बेचा
कांति के साथ सैर को आया है। डॉक्टरों के चक्कर
पड़ा और बस। रहने दो, क्या मैं इस घर की कोई
नहीं हूँ।

चंद्रकांत— मेरा कहा मानो और विनोद को डॉक्टरों की दवा पी
दो। अच्छा हो जाएगा— जल्दी अच्छा हो जाएगा।

सरस्वती— देखो जी, तुम क्या नाम है मुझे ही सदा दबाते हो। इ

घर में कोई मेरी भी सुने हैगा ? (काढ़ा गोली ज़मीन पर रखकर रोने लगती है। आँखों से आँसू पोंछती हुई) जैसे मैं इस घर की कोई भी नहीं हूँगी। (रोती है)

चंद्रकांत— (हैरान रहकर) अरी ओ भागवान, मैंने तुझे गाली कब दी! मैंने तो यही कहा कि डॉक्टर की दवा से विनोद अच्छा हो जाएगा। इसमें रोने की क्या बात है ?

सरस्वती— (रोते हुए) बैद हरिचन्द ने ज़हर तो नहीं दिया है, काढ़ा और गोली ही तो दी है। विनोद पियेगा तो काढ़ा ही, डाक्टर की दवा हरगिज़ न पियेगा।

चंद्रकांत— मैं कहता हूँ विनोद डॉक्टर की दवा पियेगा।

सरस्वती— मैं कहती हूँ विनोद बैद की दवा पियेगा।

चंद्रकांत— तुम्हें कोई कहाँ तक समझाए। मैंने दुनिया देखी है। मैं जानता हूँ आजकल किसकी दवा से फ़ायदा होता है। देखो, ज़िद न करो।

सरस्वती— (अड़ती हुई) देखो मेरी सुनो, घर के मामले में तुम्हें बोलने का कोई अधिकार नहीं है। विनोद अगर दवा पियेगा तो बैद की।

चंद्रकांत— नहीं-नहीं, हरगिज़ नहीं। विनोद दवा पियेगा तो डॉक्टर की, नहीं तो कोई दवा न पिएगा।

विनोद— इससे तो अच्छा यह है कि मैं कोई दवा न पियूँ।

सरस्वती— यह कैसे हो सके हैगा भैया, मैं मर जाऊँ। इससे तो अच्छा है भगवान मुझे उठा ले। अब इस घर में मेरी कोई ज़रूरत नहीं है।

चंद्रकांत— (लाचारी से) अच्छा भाई, काढ़ा पी लो, मुझे क्या ! अजब परेशानी में जान है। तुम लोग कभी कोई नई बात नहीं सीखोगी। अच्छा चलो, विनोद के ऊपर ही फ़ैसला रहा। क्यों, विनोद ?

विनोद— (दोनों को हाथ जोड़कर) यदि आप मुझे मेरे हाल पर छोड़ दें तो मैं शाम तक ठीक हो जाऊँगा।

दोनों— (चिल्लाकर) यह कैसे हो सकता है ? दवा तो तुम जा पीनी ही पड़ेगी।

कांति— (प्रवेशकर) आइए, डॉक्टर साहब, मैंने कहा ... (पिता को देखकर) विनोद को जरा डॉक्टर नानकचंद भी दिखा दूँ। (विनोद उठकर जाने लगता है) अरे, विनो तुम तो जा रहे हो ! क्या बात है ? सुनो, देखो, डॉक्ट साहब आए हैं। विनोद !

विनोद— मेरा बुखार घूमने से उतरता है, कांति। मैं घूमने जा र हूँ। (जाता है)

डॉक्टर— ही इज़ सफ़रिंग परहैप्स फ्रॉम किंग्स डिजीज़—इनको मं में घूमने की बीमारी मालूम होती है।

कांति— (चिल्लाकर) बेचारा विनोद ! मैं जाता हूँ। शायद व अपने आपे में नहीं है।

चंद्रकांत— लेकिन डॉक्टर ने तो बुखार की दवा दी है।

सरस्वती— और बैदजी ने अपच का काढ़ा।

सुखिया— फ़ायदा तो मेरे लाये पानी से हुआ है। मैं ओझा फुँकवाकर पानी लाया था।

डॉक्टर— मिस्टर कांति, मुझे इस घर में सभी बीमार मालूम हो हैं, चलो।

सब— (चिल्लाकर) ओ डॉक्टर !

(परदा गिरता है।)

प्रश्न-अभ्यास

I. विचार-बोध

1. आगरा पहुँचने पर विनोद का मज़ा किरकिरा क्यों हो गया ?
2. विनोद के इलाज के लिए कांति का क्या सुझाव था ?
3. विनोद के लिए सुखिया किस प्रकार के इलाज के पक्ष में था ?

4. परिवार के सदस्यों में किस बात को लेकर झगड़ा था ?
5. इस झगड़े का विनोद पर क्या प्रभाव पड़ा ?
6. "मुझे इस घर में सभी बीमार मालूम होते हैं।" डॉक्टर के इस कथन का आशय समझाइए।

II. भाषा-प्रयोग

1. नीचे मिलते-जुलते रूप वाले किन्तु भिन्न अर्थ वाले दो शब्द दिए जा रहे हैं—

अनल - आग	अनिल - वायु

निम्नलिखित शब्दों के अर्थ उपर्युक्त नमूने के अनुसार लिखिए—

कान्ति . . . . क्रान्ति . . . . .
योग . . .. . . योग्य . . . . . .
स्वस्थ . . . . . स्वास्थ्य . . . . .
बाग . . . . . बाघ . . . . .

2. विस्मय, शोक, सम्बोधन आदि को प्रकट करने के लिए विस्मयादि-बोधक चिह्न (!) का प्रयोग किया जाता है—

उदाहरण : 1. विनोद ! अमाँ, अभी तक चारपाई से चिपटे हो।
2. और फीवर जंगल में आग की तरह उद्दण्ड।

पाठ में इसी प्रकार के अन्य रूपों को छाँटिए।

3. किसी भी स्थिति पर बल देने के लिए "ही" अथवा "भी" का प्रयोग किया जाता है—

उदाहरण : 1. बुखार उससे उतरता ही नहीं था।
2. उस बेचारे का कुसूर भी नहीं था।

यहाँ "ही" और "भी" "बिल्कुल" या "पूरी तरह" के अर्थ में आए हैं। इस पाठ में आए इसी तरह के चार वाक्य छाँटिए।

4. उदाहरण के अनुसार वाक्य बदलिए—

उदाहरण : यदि तुम दवा नहीं पियोगे तो तुम्हें लाभ नहीं होगा।
→दवा पिए बिना तुम्हें लाभ नहीं होगा।

1. यदि आप स्टेशन नहीं जाएँगे तो मोहन नहीं मिलेगा
→..

2. यदि तुम दूध नहीं पियोगे तो तुम्हें शक्ति प्राप्त नहीं होगी

→...

3. यदिं मैं बिस्तर पर नहीं लेटूँगा तो मुझे नींद नहीं आएगी

→...

4. यदि शशि नहीं सोएगी तो उसे आराम नहीं मिलेगा

→...

III. योग्यता-विस्तार

1. अपने सहपाठियों की सहायता से इस एकांकी का अभिनय कीजिए।
2. इस एकांकी का कथासार अपने शब्दों में लिखिए।

शब्दार्थ और टिप्पंणियाँ

उद्दण्ड = शरारती, जो किसी के वश में न आए
भेषज = औषधि, दवा
ताप = बुखार, गर्मी
हरड़ और बहेड़ा = आयुर्वेद की दो वन-औषधियाँ
ईंगुर = सिन्दूर
काबिल = योग्य
मार्जन = मंत्र से पवित्र जल छिड़कना
अला-बला = भूत-प्रेत का बुरा प्रभाव
दूर्वा = दूब घास
मंत्र अभिषिक्त = मंत्र से पवित्र किया हुआ
बाल धूप में सफ़ेद न होना = अनुभव से प्रौढ़ता प्राप्त करना
नाक में दम होना = परेशान होना
भाड़ झोंकना = व्यर्थ का प्रयास करना
चक्कर में पड़ना = भुलावे में आना
घोड़ी नहीं चढ़े तो क्या बरात भी नहीं देखी (कहावत) = किसी काम को स्वयं न करने पर भी उसकी जानकारी होना

जैनेन्द्र कुमार

हिन्दी कथा-साहित्य में प्रेमचंद के बाद जैनेन्द्र कुमार का महत्वपूर्ण स्थान है। इनका जन्म सन् 1905 ई. में अलीगढ़ ज़िले के कौड़ियागंज कस्बे में हुआ था। जैनेन्द्र कुमार की स्कूली शिक्षा हस्तिनापुर के जैन गुरुकुल में हुई। वे उच्च शिक्षा के लिए काशी हिन्दू विश्वविद्यालय गए लेकिन सन् 1921 में महात्मा गांधी के असहयोग आन्दोलन से प्रभावित होकर उन्होंने अपनी शिक्षा अधूरी छोड़ दी और आन्दोलन में शामिल हो गए। जैनेन्द्र के चिंतन और साहित्य पर गांधीजी के सिद्धांतों का बहुत प्रभाव पड़ा। उन्हें साहित्य अकादमी पुरस्कार, तथा उत्तर प्रदेश सरकार का "भारत-भारती" पुरस्कार मिले तथा भारत सरकार ने उन्हें 'पद्म भूषण' की उपाधि से भी सम्मानित किया। जैनेन्द्र का निधन सन् 1990 में हुआ।

जैनेन्द्र कुमार की कहानियों में मानव-मन का सूक्ष्म चित्रण मिलता है। उन्हें हिन्दी में मनोवैज्ञानिक कहानियों के आरम्भ का श्रेय प्राप्त है। जैनेन्द्र जी की कहानियाँ सोद्देश्य होती हैं जिनमें प्रायः छोटे-छोटे संवादों, सूक्तियों और व्यंजनापूर्ण वाक्यों द्वारा चरित्रों और कथावस्तु को उभारा जाता है। इनकी भाषा बड़ी सटीक और सजीव होती है।

जैनेन्द्र जी की कहानियों के अनेक संग्रह प्रकाशित हुए हैं, जिनमें प्रमुख हैं— वातायन, एक रात, दो चिड़ियाँ, फाँसी, नीलम देश की राजकन्या, ध्रुवयात्रा आदि। इनके अतिरिक्त उनके प्रमुख उपन्यास हैं—परख, अनामस्वामी, त्यागपत्र, सुनीता, कल्याणी, जयवर्द्धन, मुक्तिबोध आदि।

12

अपना-अपना भाग्य

[इस कहानी में लेखक ने बड़े ही मार्मिक ढंग से एक ऐसे गरीब बच्चे का चित्रण किया है जो नैनीताल की भयंकर सर्दी में भूख और ठंड से ठिठुर कर मर जाता है। कहानी के माध्यम से लेखक ने बड़े व्यंग्यपूर्ण ढंग से यह बताना चाहा है कि समाज में जो लोग सुख-सुविधाओं से संपन्न हैं वे समय पर तो ऐसे बच्चों की सहायता नहीं करते, बाद में उनके करुण अंत पर यह सोचकर अपने को तसल्ली देते हैं कि उनका भाग्य ही ऐसा था।]

बहुत कुछ निरुद्देश्य घूम चुकने पर हम सड़क के किनारे बेंच पर बैठ गए। नैनीताल की संध्या धीरे-धीरे उतर रही थी। रुई के रेशे-से भाप के बादल हमारे सिरों को छू-छूकर बेटोक घूम रहे थे। हल्के प्रकाश और अँधियारी से रँग कर कभी वे पीले दीखते, कभी सफ़ेद और फिर जरा अरुण पड़ जाते, जैसे हमारे साथ खेलना चाह रहे हों।

पाँच, दस, पन्द्रह मिनट हो गए। मित्र के उठने का कोई इरादा न मालूम हुआ। मैंने झुँझला कर कहा— "चलिए भी . . . ."

"अरे, ज़रा बैठो . . . ."

हाथ पकड़कर ज़रा बैठने के लिए जब ज़ोर से बैठा लिया गया, तो और चारा न रहा। सनक से छुटकारा पाना आसान न था और ज़रा बैठना भी 'ज़रा' न था।

चुपचाप बैठे तंग हो रहा था, कुढ़ रहा था कि मित्र अचानक बोले— "देखो वह क्या है ?"

मैंने देखा कि कुहरे की सफ़ेदी में कुछ ही हाथ दूर से एक

काली-सी मूर्ति हमारी तरफ़ आ रही थी। मैंने कहा– "होगा कोई।"

तीन गज़ की दूरी से दीख पड़ा, एक लड़का, सिर के बड़े-बड़े बाल खुजलाता चला आ रहा था। नंगे पैर, नंगे सिर, एक मैली-सी कमीज़ लटकाए है।

पैर उसके न जाने कहाँ पड़ रहे थे, और वह न जाने कहाँ जा रहा था, कहाँ जाना चाहता था, न दायाँ था न बायाँ था। पास की चुंगी की लालटेन के छोटे-से प्रकाश-वृत्त में देखा– कोई दस-बारह बरस का होगा। गोरे रंग का है, पर मैल से काला पड़ गया है, आँखें अच्छी, बड़ी पर सूनी हैं। माथा जैसे अभी से झुर्रियाँ खा गया है। वह हमें न देख पाया, वह जैसे कुछ भी न देख रहा था। न नीचे की धरती, न ऊपर चारों ओर फैला हुआ कुहरा, न सामने का तालाब, और न एकाकी दुनिया। वह बस अपने निकट वर्तमान को देख रहा था।

मित्र ने आवाज़ दी– "ए !"

उसने अपनी सूनी आँखें फाड़ दीं।

"दुनिया सो गई है, तू ही क्यों घूम रहा है ?"

बालक मूक, फिर बोलता हुआ-सा चेहरा लेकर खड़ा रहा।

"कहाँ सोएगा ?"

"यहीं-कहीं।"

"कल कहाँ सोया था ?"

"दुकान पर।"

"आज वहाँ क्यों नहीं ?"

"नौकरी से हटा दिया।"

"क्या नौकरी थी ?"

"सब काम, एक रुपया और जूठा खाना।"

"फिर नौकरी करेगा ?"

"हाँ।"

"बाहर चलेगा ?"

"हाँ".

"आज क्या खाना खाया?"

"कुछ नहीं।"

"अब खाना मिलेगा ?"

"नहीं मिलेगा।"

"यों ही सो जाएगा ?"

"हाँ।"

"कहाँ ?"

"यहीं-कहीं।"

"इन्हीं कपड़ों में ?"

बालक फिर आँखों से बोलकर मूक खड़ा था। आँखें मानो बोलती थीं— "यह भी कैसा मूर्ख प्रश्न है !"

"माँ-बाप हैं ?"

"हाँ। पन्द्रह कोस दूर, गाँव में।"

"तू भाग आया ?"

"हाँ।"

"क्यों ?"

"मेरे कई भाई-बहिन हैं, सो भाग आया। वहाँ काम नहीं, रोटी नहीं। बाप भूखा रहता था और माँ भूखी रहती थी, रोती थी, सो भाग आया। एक साथी और था। उसी गाँव का था, मुझसे बड़ा। दोनों साथ यहाँ आए। वह अब नहीं है।"

"कहाँ गया ?"

"मर गया।"

बस ज़रा-सी उम्र में ही उसकी मौत से पहचान हो गई— मुझे अचरज हुआ, पूछा— "मर गया ?"

"हाँ, साहब ने मारा था, मर गया।"

"अच्छा, हमारे साथ चल।"

वह साथ चल दिया। लौटकर हम वकील दोस्त के होटल पहुँचे।

"वकील साहब !"

वकील साहब होटल के कमरे से उतरकर आए। काश्मीरी दुशाला

लपेटे थे, मोजे चढ़े पैरों में चप्पलें थीं। स्वर में हल्की झुँझलाहट थी, कुछ लापरवाही थी।

"ओ हो फिर आप ! कहिए।"

"आपको नौकर की ज़रूरत थी न, देखिए यह लड़का है।"

"कहाँ से लाए ? इसे आप जानते हैं ?"

"जानता हूँ यह बेईमान नहीं हो सकता।"

"अजी, ये पहाड़ी बड़े शैतान होते हैं। बच्चे-बच्चे में गुण छिपे रहते हैं— आप भी क्या अजीब हैं, उठा लाए कहीं से— लो जी यह नौकर लो।"

"मानिए तो, यह लड़का अच्छा निकलेगा।"

"आप भी . . . . . जी बस खूब हैं। ऐसे ऐरे-गैरे को नौकर बना लिया जाए और अगले दिन वह न जाने क्या-क्या लेकर चम्पत हो जाए।"

"आप मानते ही नहीं, मैं क्या करूँ।"

"मानें क्या ख़ाक। आप भी . . . . . जी अच्छा मज़ाक करते हैं। अच्छा, अब हम सोने को जाते हैं।"

और वह चार रुपया रोज़ के किराए वाले कमरे में सजी मसहरी पर सोने झटपट चले गए।

बालक कुछ ठहरा। मैं असमंजस में रहा। तब वह प्रेत गति से एक ओर बढ़ा और कुहरे में मिल गया। हम भी होटल की ओर बढ़े। हवा तीखी थी—हमारे कोटों को पार कर बदन में तीर-सी लगती थी।

सिकुड़ते हुए मित्र ने कहा—"भयानक शीत है। उसके पास कम—बहुत कम कपड़े . . . . . ।"

"यह संसार है यार !" मैंने स्वार्थ की फ़िलासफ़ी सुनाई—"चलो, पहले बिस्तर में गरम हो लो, फिर किसी और की चिन्ता करना।"

उदास होकर मित्र ने कहा— "स्वार्थ ! जो कहो, लाचारी कहो, निठुराई कहो—या बेहयाई।"

दूसरे दिन नैनीताल स्वर्ग के किसी काले गुलाम पशु के दुलार का वह बेटा– वह बालक, निश्चित समय पर हमारे होटल-डि-पब में नहीं आया। हम अपनी नैनीताल-सैर खुशी-खुशी खत्म कर चलने को हुए। उस लड़के की आस लगाए बैठे रहने की ज़रूरत हमने न समझी।

मोटर में सवार होते ही यह समाचार मिला– "पिछली रात, एक पहाड़ी बालक, सड़क के किनारे– पेड़ के नीचे ठिठुर कर मर गया।" मरने के लिए उसे वही जगह, वही दस बरस की उम्र और वही काले चिथड़ों की कमीज़ मिली। आदमियों की दुनिया ने बस यही उपहार उसके पास छोड़ा था।

पर बतलाने वालों ने बताया कि गरीब के मुँह पर, छाती, मुट्ठियों और पैरों पर, बरफ़ की हल्की-सी चादर चिपक गई थी, मानो दुनिया की बेहयाई ढँकने के लिए प्रकृति ने शव के लिए सफ़ेद और ठंडे कफ़न का प्रबंध कर दिया था।

सब सुना और सोचा– अपना-अपना भाग्य !

प्रश्न-अभ्यास

I. विचार-बोध

(1) नैनीताल में लेखक और उसके मित्र ने क्या देखा ?

(2) लड़के को देखकर लेखक को उसकी गरीबी का पता कैसे चला ?

(3) होटल लौटकर लेखक की अपने मित्र से क्या बात हुई ?

(4) लेखक को लड़के की मृत्यु का समाचार कैसे मिला ?

(5) इस कहानी का शीर्षक "अपना-अपना भाग्य" क्यों रखा गया है ?

(6) "आदमियों की दुनिया" ने लड़के के पास क्या उपहार छोड़ा था ?

(7) वकील साहब ने लड़के को नौकरी क्यों नहीं दी ? सही उत्तर छाँटिए :

(क) उन्हें नौकर की ज़रूरत नहीं थी।

(ख) लड़का घरेलू काम नहीं जानता था।

(ग) लड़का अधिक वेतन माँग रहा था।

(घ) वे एक अज़नबी लड़के को नौकर नहीं रखना चाहते थे।

(8) निम्नलिखित कथनों का आशय समझाइए–

(क) बस, ज़रा-सी उम्र में ही उसकी मौत से पहचान हो गई।

(ख) मानो दुनिया की बेहयाई ढँकने के लिए प्रकृति ने शव के लिए सफ़ेद और ठंडे कफ़न का प्रबंध कर दिया था।

II. भाषा-प्रयोग

(1) नैनीताल की संध्या धीरे-धीरे उतर रही थी। उक्त वाक्यों में "धीरे-धीरे" क्रिया-विशेषण है जो "उतरना" क्रिया की विशेषता बता रहा है। इसी प्रकार के पाँच क्रिया-विशेषण पाठ से छाँटिए।

(2) "क" स्तंभ में दिए गए शब्दों के समानार्थी शब्द "ख" स्तंभ से छाँटिए :

क	ख
धरती	संसार
दुनिया	उजाला
मित्र	पृथ्वी
बादल	शाम
प्रकाश	मेघ
संध्या	दोस्त
तीर	भेंट
उपहार	बाण

(3) "**रूई के रेशे-से भाप के बादल** हमारे सिरों को छू-छूकर बेरोकटोक घूम रहे थे।" इस वाक्य के रेखांकित अंश में लेखक ने भाप के बादलों की तुलना रुई से की है। अपनी पाठ्यपुस्तक से इस प्रकार के कुछ प्रयोग खोजिए।

III. योग्यता-विस्तार

1. लेखक के मित्र और लड़के के बीच हुई बातचीत को संवाद के रूप में प्रस्तुत कीजिए।
2. "अपना-अपना भाग्य" नामक कहानी के लिए कोई और शीर्षक सुझाइए।

शब्दार्थ और टिप्पणी

निरुद्देश्य = बिना किसी उद्देश्य के
अरुण = लाल रंग

प्रकाश-वृत्त	=	रोशनी का घेरा
मूक	=	चुपचाप
असमंजस	=	पशोपेश, दुविधा
आँखें फाड़ना	-	आश्चर्य से देखना
चम्पत हो जाना	=	भाग जाना
चारा न रहना	=	कोई और उपाय न होना
छुटकारा पाना	=	पीछा छुड़ाना

हजारीप्रसाद द्विवेदी

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी का जन्म सन् 1907 ई. में बलिया ज़िले के "दुबे का छपरा" गाँव में हुआ। पारिवारिक परंपरा के अनुसार इनकी शिक्षा का प्रारंभ संस्कृत-अध्ययन से हुआ। 1930 ई. में उन्होंने काशी हिंदू विश्वविद्यालय से ज्योतिषाचार्य की परीक्षा उत्तीर्ण की। उनकी साहित्यिक प्रतिभा का विशेष विकास शांति निकेतन में हुआ, जहाँ उन्हें रवीन्द्रनाथ ठाकुर की संगति का लाभ मिला। वहीं वे 1940 ई. से सन् 1950 ई. तक हिन्दी भवन के निदेशक रहे। 1949 ई. में लखनऊ विश्वविद्यालय ने उन्हें डी. लिट्. की उपाधि से सम्मानित किया। सन् 1950 ई. में वे काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में हिंदी विभाग के प्रोफ़ेसर एवं अध्यक्ष नियुक्त हुए। बाद में वे इसी पद पर पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ़ चले गए। द्विवेदी जी भारत सरकार और उत्तर प्रदेश सरकार की हिंदी विकास संबंधी अनेक योजनाओं से जुड़े रहे। 1957 ई. में उन्हें भारत सरकार ने 'पद्म भूषण' की उपाधि से अलंकृत किया। उनका निधन 19 मई सन् 1979 ई. में हुआ।

द्विवेदी जी के निबंधों में विद्वत्ता और सरसता, गंभीरता और विनोदमयता, प्राचीनता और नवीनता तथा व्यक्ति और लोक का अद्भुत समन्वय हुआ है। हिंदी के ललित निबंधकारों में वे बेजोड़ हैं। छोटे-छोटे, सहज-सरल और काव्यात्मक वाक्यों में वे बड़ी गंभीर बात कह जाते हैं। उनके निबंधों में कबीर-जैसी उन्मुक्तता, मस्ती और फक्कड़पन के दर्शन होते हैं। उनमें भारतीय संस्कृति, दर्शन, प्रकृति और लोक-जीवन एक साथ झाँकते दिखलाई पड़ते हैं। वे मज़े-मज़े में बड़ी सफ़ाई के साथ अपनी रचनाओं में किसी न किसी उत्कृष्ट मानवीय मूल्य की ओर संकेत कर जाते हैं।

द्विवेदी जी ने अनेक विधाओं में उच्चकोटि के साहित्य का सृजन किया है। वे अच्छे निबंधकार, उपन्यासकार, आलोचक तथा इतिहासकार थे। उनकी प्रमुख कृतियाँ निम्नलिखित हैं—

(i) अशोक के फूल, विचार प्रवाह, कुटज, कल्पलता (निबंध संग्रह);

(ii) बाणभट्ट की आत्मकथा, चारुचंद्र लेख, पुनर्नवा और अनामदास का पोथा (उपन्यास);

(iii) सूरदास, कबीर, साहित्य सहचर, कालिदास की लालित्य योजना (आलोचनात्मक ग्रंथ);

(iv) हिन्दी साहित्य: उद्भव और विकास, हिंदी साहित्य का आदिकाल, हिंदी साहित्य की भूमिका तथा नाथ संप्रदाय (इतिहास)।

13

क्या निराश हुआ जाए

[समाचार-पत्रों में हर रोज़ ठगी, डकैती, चोरी, तस्करी और भ्रष्टाचार के समाचारों को पढ़कर व्यक्ति निराश होने लगता है। उसे लगता है कि समाज में बुराइयाँ ही रह गई हैं, अच्छाइयाँ समाप्त हो गई हैं। किन्तु ऊपर से देखने में ही लगता है कि मानवीय मूल्यों के प्रति लोगों की आस्था हिलने लगी है। लेकिन आज भी सेवा, ईमानदारी, सच्चाई और आध्यात्मिकता के मूल्य बने हुए हैं। वह मनुष्य से प्रेम करता है, महिलाओं का सम्मान करता है, झूठ और चोरी को गलत समझता है। इस प्रकार लेखक ने यह समझाने की कोशिश की है कि हमें निराश नहीं होना चाहिए। जीवन के प्रति आशावान बने रहना चाहिए।]

मेरा मन कभी-कभी बैठ जाता है। समाचार-पत्रों में ठगी, डकैती, चोरी, तस्करी और भ्रष्टाचार के समाचार भरे रहते हैं। आरोप-प्रत्यारोप का कुछ ऐसा वातावरण बन गया है कि लगता है कि देश में कोई ईमानदार आदमी ही नहीं रह गया है। हर व्यक्ति संदेह की दृष्टि से देखा जाता रहा है। जो जितने ही ऊँचे पद पर हैं उनमें उतने ही दोष दिखाए जाते हैं।

एक बहुत बड़े आदमी ने मुझसे एक बार कहा था कि इस समय सुखी वही है जो कुछ नहीं करता हो, जो कुछ भी करेगा, उसमें लोग दोष खोजने लगेंगे। उसके सारे गुण भुला दिए जाएँगे और दोषों को बढ़ा-चढ़ाकर दिखलाया जाने लगेगा। दोष किसमें नहीं होते ? यही कारण है कि हर आदमी दोषी अधिक दीख रहा है, गुणी कम या बिलकुल ही नहीं। स्थिति अगर ऐसी है तो निश्चय ही चिन्ता का विषय है।

क्या यही भारतवर्ष है, जिसका सपना तिलक और गाँधी ने देख था ? रवीन्द्रनाथ ठाकुर और मदनमोहन मालवीय का महान संस्कृति-सभ्य भारतवर्ष किस अतीत के गह्वर में डूब गया ? आर्य और द्रविड़, हिन्दू और मुसलमान, यूरोपीय और भारतीय आदर्शों की मिलन-भूमि "मानव महा समुद्र" क्या सूख ही गया ? मेरा मन कहता है ऐसा हो नहीं सकता। हमारे महान मनीषियों के सपनों का भारत है और रहेगा।

यह सही है कि इन दिनों कुछ माहौल ऐसा बना है कि ईमानदारी से मेहनत करके जीविका चलाने वाले निरीह और भोले-भाले श्रमजीवी पिस रहे हैं और झूठ तथा फ़रेब का रोज़गार करने वाले फल-फूल रहे हैं। ईमानदारी को मूर्खता का पर्याय समझा जाने लगा है, सच्चाई केवल भीरू और बेबस लोगों के हिस्से पर ही है। ऐसी स्थिति में जीवन के महान मूल्यों के बारे में लोगों की आस्था ही हिलने लगी है। परन्तु ऊपर-ऊपर जो कुछ दिखाई दे रहा है, वह बहुत ही हाल की मनुष्य-निर्मित नीतियों की त्रुटियों की देन है। सदा मनुष्य-बुद्धि नई परिस्थितियों का सामना करने के लिए नए सामाजिक विधि-निषेधों को बनाती है, उनके ठीक साबित न होने पर उन्हें बदलती है। नियम कानून सबके लिए बनाए जाते हैं, पर सबके लिए कभी-कभी एक ही नियम सुखकर नहीं होते। सामाजिक कायदे-कानून कभी युग-युग से परीक्षित आदर्शों से टकराते हैं, इससे ऊपरी सतह आलोड़ित भी होती है, पहले भी हुआ है, आगे भी होगा। इसे देखकर हताश हो जाना ठीक नहीं है।

भारतवर्ष ने कभी भी भौतिक वस्तुओं के संग्रह को बहुत अधिक महत्त्व नहीं दिया है। उसकी दृष्टि से मनुष्य के भीतर जो महान आंतरिक तत्व स्थिर भाव से बैठा हुआ है, वही चरम और परम है। लोभ, मोह, काम, क्रोध आदि विकार मनुष्य में स्वाभाविक रूप से विद्यमान रहते हैं, पर उन्हें प्रधान शक्ति मान लेना और अपने मन तथा बुद्धि को उन्हीं के इशारों पर छोड़ देना बहुत निकृष्ट आचरण है। भारतवर्ष ने कभी भी उन्हें उचित नहीं माना, उन्हें सदा संयम के

बंधन से बाँधकर रखने का प्रयत्न किया है। परन्तु भूख की उपेक्षा नहीं की जा सकती, बीमार के लिए दवा की उपेक्षा नहीं की जा सकती, गुमराह को ठीक रास्ते पर ले जाने के उपायों की उपेक्षा नहीं की जा सकती।

हुआ यह है कि इस देश के कोटि-कोटि दरिद्र जनों की हीन अवस्था को दूर करने के लिए ऐसे अनेक कायदे-कानून बनाए गए हैं, जो कृषि, उद्योग, वाणिज्य, शिक्षा और स्वास्थ्य की स्थिति को अधिक उन्नत और सुचारु बनाने के लक्ष्य से प्रेरित हैं, परन्तु जिन लोगों को इन कार्यों में लगना है, उनका मन सब समय पवित्र नहीं होता। प्रायः ही वे लक्ष्य को भूल जाते हैं और अपनी ही सुख-सुविधा की ओर ज़्यादा ध्यान देने लगते हैं।

व्यक्ति-चित्त सब समय आदर्शों द्वारा चालित नहीं होता। जितने बड़े पैमाने पर इन क्षेत्रों में मनुष्य की उन्नति के विधान बनाए गए, उतनी ही मात्रा में लोभ, मोह जैसे विकार भी विस्तृत होते गए। लक्ष्य की बात भूल गए। आदर्शों को मज़ाक का विषय बनाया गया और संयम को दकियानूसी मान लिया गया। परिणाम जो होना था, वह हो रहा है। यह कुछ थोड़े से लोगों के बढ़ते हुए लोभ का नतीजा है, परन्तु इससे भारतवर्ष के पुराने आदर्श और भी अधिक स्पष्ट रूप से महान और उपयोगी दिखाई देने लगे हैं।

भारतवर्ष सदा कानून को धर्म के रूप में देखता आ रहा है। आज एकाएक कानून और धर्म में अंतर कर दिया गया है। धर्म को धोखा नहीं दिया जा सकता, क़ानून को दिया जा सकता है। यही कारण है कि जो लोग धर्मभीरु हैं, वे कानून की त्रुटियों से लाभ उठाने में संकोच नहीं करते।

इस बात के पर्याप्त प्रमाण खोजे जा सकते हैं कि समाज के ऊपरी वर्ग में चाहे जो भी होता रहा हो, भीतर-भीतर भारतवर्ष अब भी यह अनुभव कर रहा है कि धर्म क़ानून से बड़ी चीज़ है। अब भी सेवा, ईमानदारी, सच्चाई और आध्यात्मिकता के मूल्य बने हुए हैं। वे दब अवश्य गए हैं, लेकिन नष्ट नहीं हुए। आज भी वह मनुष्य से

प्रेम करता है, महिलाओं का सम्मान करता है; झूठ और चोरी को गलत समझता है, दूसरों को पीड़ा पहुँचाने को पाप समझता है। हर आदमी अपने व्यक्तिगत जीवन में इस बात का अनुभव करता है।

समाचार पत्रों में जो भ्रष्टाचार के प्रति इतना आक्रोश है, वह यही साबित करता है कि हम ऐसी चीज़ों को गलत समझते हैं और समाज से उन तत्वों की प्रतिष्ठा कम करना चाहते हैं जो गलत तरीके से धन या मान संग्रह करते हैं।

दोषों का पर्दाफाश करना बुरी बात नहीं है। बुराई यह मालूम होती है कि किसी के आचरण के गलत पक्ष को उद्‌घाटित करते समय उसमें रस लिया जाता है और दोषोद्‌घाटन को एकमात्र कर्तव्य मान लिया जाता है। बुराई में रस लेना बुरी बात है, अच्छाई को उतना ही रस लेकर उजागर न करना और भी बुरी बात है। सैकड़ों घटनाएँ ऐसी घटती हैं जिन्हें उजागर करने से लोकचित्त में अच्छाई के प्रति अच्छी भावना जगती है।

एक बार रेलवे स्टेशन पर टिकट लेते हुए गलती से मैंने दस के बजाय सौ रुपये का नोट दिया और मैं जल्दी-जल्दी गाड़ी में आकर बैठ गया। थोड़ी देर में टिकटबाबू उन दिनों के सैकेंड-क्लास के डिब्बे में हर आदमी का चेहरा पहचानता हुआ उपस्थित हुआ। उसने मुझे पहचान लिया और बड़ी विनम्रता के साथ मेरे हाथ में नब्बे रुपये रख दिए और बोला, "यह बहुत बड़ी गलती हो गई थी। आपने भी नहीं देखा, मैंने भी नहीं देखा।" उसके चेहरे पर विचित्र संतोष की गरिमा थी। मैं चकित रह गया।

कैसे कहूँ कि दुनिया से सच्चाई और ईमानदारी लुप्त हो गयी है! वैसी अनेक अवांछित घटनाएँ भी हुई हैं, परन्तु यह एक घटना ठगी और वंचना और अनेक घटनाओं से अधिक शक्तिशाली है।

एक बार मैं बस में यात्रा कर रहा था। मेरे साथ मेरी पत्नी और तीन बच्चे भी थे। बस में कुछ खराबी थी, रुक-रुक कर चलती थी। गंतव्य से कोई पाँच मील पहले ही एक निर्जन सुनसान स्थान में बस ने जवाब दे दिया। रात के कोई दस बजे होंगे, बस में यात्री घबरा

गए। कंडक्टर ऊपर गया और एक साइकिल लेकर चलता बना। लोगों को संदेह हो गया कि हमें धोखा दिया जा रहा है। बस में बैठे लोगों ने तरह-तरह की बातें शुरू कर दीं। किसी ने कहा—"यहाँ डकैती होती है, दो दिन पहले भी इसी तरह एक बस को लूटा गया था।" परिवार सहित अकेला मैं ही था। बच्चे पानी-पानी चिल्ला रहे थे। पानी का कहीं ठिकाना नहीं था। ऊपर से आदमियों का डर समा गया था।

कुछ नौजवानों ने ड्राइवर को पकड़ कर मारने-पीटने का हिसाब बनाया। ड्राइवर के चेहरे पर हवाइयाँ उड़ने लगीं। लोगों ने उसे पकड़ लिया, वह बड़े कातर ढंग से मेरी ओर देखने लगा और बोला, "हम लोग बस का कोई उपाय कर रहे हैं, बचाइए, ये लोग मारेंगे।" डर तो मेरे मन में भी था, पर उसकी कातर मुद्रा देखकर मैंने यात्रियों को समझाया कि मारना ठीक नहीं है। परन्तु यात्री इतने घबरा गए कि वे मेरी बात सुनने को तैयार नहीं हुए। कहने लगे, "इसकी बातों में मत आइए, धोखा दे रहा है। कंडक्टर को पहले ही डाकुओं के यहाँ भेज दिया है।"

मैं भी बहुत भयभीत था, पर ड्राइवर को किसी तरह मार-पीट से बचाया। डेढ़-दो घंटे बीत गए। मेरे बच्चे भोजन और पानी के लिए व्याकुल थे। मेरी और मेरी पत्नी की हालत बुरी थी। लोगों ने ड्राइवर को मारा तो नहीं, पर उसे बस से उतार कर एक जगह घेर कर रखा। कोई भी दुर्घटना होती तो पहले ड्राइवर को समाप्त कर देना उन्हें उचित जान पड़ा। मेरे गिड़गिड़ाने का कोई विशेष असर नहीं पड़ा। इसी समय क्या देखता हूँ कि एक खाली बस चली आ रही है और उस पर हमारा बस कंडक्टर भी बैठा हुआ है। उसने आते ही कहा, "अड्डे से नई बस लाया हूँ, इस बस पर बैठिए। वह बस चलाने लायक नहीं है।" फिर मेरे पास एक लोटे में पानी और थोड़ा दूध लेकर आया और बोला, "पंडित जी! बच्चों का रोना मुझसे देखा नहीं गया। वहीं दूध मिल गया, थोड़ा लेता आया।" यात्रियों में फिर जान आई। सबने उसे धन्यवाद दिया। ड्राइवर से माफी माँगी और बारह बजे से पहले ही सब लोग बस अड्डे पहुँच गए।

कैसे कहूँ कि मनुष्यता एकदम समाप्त हो गई ! कैसे कहूँ कि लोगों में दया-माया रह ही नहीं गई ! जीवन में न जाने कितनी ऐसी घटनाएँ हुई हैं जिन्हें मैं भूल नहीं सकता।

ठगा भी गया हूँ, धोखा भी खाया है, परन्तु बहुत कम स्थलों पर विश्वासघात नाम की चीज मिलती है। केवल उन्हीं बातों का हिसाब रखो, जिनमें धोखा खाया है तो जीवन कष्टकर हो जाएगा, परन्तु ऐसी घटनाएँ भी बहुत कम नहीं हैं जब लोगों ने अकारण सहायता की है, निराश मन को ढाँढस दिया है और हिम्मत बँधाई है। कविवर रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने अपने एक प्रार्थना गीत में भगवान से प्रार्थना की थी कि संसार में केवल नुकसान ही उठाना पड़े, धोखा ही खाना पड़े, तो ऐसे अवसरों पर भी हे प्रभु ! मुझे ऐसी शक्ति दो कि मैं तुम्हारे ऊपर संदेह न करूँ।

मनुष्य की बनाई विधियाँ गलत नतीज़े तक पहुँच रही हैं तो इन्हें बदलना होगा। वस्तुतः आए दिन इन्हें बदला ही जा रहा है। लेकिन अब भी आशा की ज्योति बुझी नहीं है। महान भारतवर्ष को पाने की संभावना बनी हुई है, बनी रहेगी।

मेरे मन ! निराश होने की ज़रूरत नहीं है।

प्रश्न-अभ्यास

I. विचार-बोध

1. "वर्तमान परिस्थितियों में हताश हो जाना ठीक नहीं है।" इस कथन की पुष्टि में लेखक ने क्या उदाहरण दिए हैं ?
2. लेखक कंडक्टर के चरित्र से क्यों प्रभावित हुआ ?
3. "उसके चेहरे पर विचित्र संतोष की गरिमा थी। मैं चकित रह गया।" उपर्युक्त पंक्तियों में संकेतित घटना को अपने शब्दों में बताइए।
4. समाज में पाई जाने वाली अच्छाइयों में से एक अच्छाई नीचे दी गई है। ऐसी ही तीन अच्छाइयाँ और बताइए–

(क) समाज महिलाओं का सम्मान करता है।
(ख)
(ग)
(घ)

5. जीवन के महान मूल्यों के बारे में लोगों की आस्था क्यों हिलने लगी है ? सही उत्तर छाँटिए :
   क. मानवीय मूल्यों के अर्थ अब बदल गए हैं।
   ख. गाँधी और तिलक का भारत अतीत में डूब गया है।
   ग. श्रमजीवी पिस रहे हैं और फ़रेब का रोज़गार करने वाले फल-फूल रहे हैं।
   घ. आज मानवीय मूल्यों का कोई महत्त्व नहीं रह गया है।

II. भाषा-प्रयोग

1. एक ही शब्द का दो बार प्रयोग "पुनरुक्ति" कहलाता है। इससे उस शब्द के भाव में अधिकता और गहराई आ जाती है।

उदाहरण— सेनापति भीतर-भीतर अपनी सेना इकट्ठी करता रहा।

उक्त उदाहरण के अनुसार निम्नलिखित पुनरुक्त शब्दों का वाक्यों में प्रयोग कीजिए—
ऊपर-ऊपर, युग-युग, जल्दी-जल्दी, पानी-पानी।

2. दिए गए उदाहरण के अनुसार निम्नलिखित वाक्य पूरे कीजिए—

उदाहरण—नहीं जानता वह क्या करेगा—	1. जाने वह क्या कर बैठे। 2. न जाने वह क्या कर बैठे। 3. कौन जाने वह क्या कर बैठे।

क. नहीं जानती वह क्या लिखेगी— 1. ....
2. ....
3. ....

ख. नहीं जानते वे क्या कहेंगे— 1. ....
2. ....
3. ....

ग. नहीं मालूम वह क्या माँगेगा— 1. ....

2. ....

3. ....

3. दिए गए उदाहरण को ध्यान से देखिए और उसके अनुसार नीचे दिए वाक्यों को बदलिए :

उदाहरण— डाकुओं ने एक बस को लूटा है→डाकुओं द्वारा एक बस लूटी गई है।

कुछ लोगों ने कानून और धर्म में अंतर कर दिया है ....

समाज ने अनेक कायदे-कानून बनाये हैं ....

4. उदाहरण के अनुसार शब्दों में से (-) हाइफन हटाकर पूरा शब्द लिखिए :

उदाहरण (क) मिलन-भूमि = मिलनभूमि

व्यक्ति-चित्त

समाचार-पत्र

मनुष्य-बुद्धि

विचार-प्रवाह

ख. कायदे-कानून = कायदे और कानून

सुख-सुविधा

मारना-पीटना

नियम-कानून

फल-फूल

III. योग्यता-विस्तार

1. प्रतिदिन आप समाचार-पत्र पढ़ते हैं। पढ़ गए समाचारों के आधार पर **'भारत की आज की हालत'** पर दस वाक्य लिखिए।
2. "बुरा जो देखन मैं चला बुरा न मिलिया कोइ"
उपर्युक्त कथन के मूल भाव को समझाते हुए इस पर कक्षा में परिचर्चा कीजिए।

शब्दार्थ और टिप्पणियाँ

श्रमजीवी = (श्रम-जीवी) मेहनत करके पेट भरने वाला मज़दूर

निकृष्ट = बेकार, सबसे बुरा, तुच्छ

दकियानूस	=	परम्परावादी, पुराणपंथी
अवांछित	=	अनचाहा
गह्वर	=	गड्ढा, गुफा, कंदरा
वंचना	=	धोखा, छल, ठगी
उद्घाटित करना	=	साफ दिखा देना, उजागर करना
गंतव्य	=	जहाँ जाना है, मंजिल, पहुँचने का स्थान
माहौल	=	वातावरण
धर्मभीरु	=	धर्म से डरने वाला
मनुष्यनिर्मित	=	मनुष्य द्वारा बनाया हुआ
विश्वासघात	=	विश्वास तोड़ना
भ्रष्टाचार	=	(भ्रष्ट + आचार) बुरा आचरण
आरोप-प्रत्यारोप	=	परस्पर दोषारोपण, एक-दूसरे पर दोष लगाना
पर्दाफाश करना	=	पोल खोलना, दोष प्रकट करना, भेद खोल देना
हवाइयाँ उड़ना	=	होश-हवास खोना
ढाँढस देना	=	हिम्मत बँधाना, सांत्वना देना
तिलक	=	सुप्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानी बाल गंगाधर तिलक, जिन्होंने हमें "स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है"—जैसा प्रसिद्ध नारा दिया।
मदनमोहन मालवीय	=	सुप्रसिद्ध राष्ट्रीय नेता जिन्होंने बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय की स्थापना की।

कविता

रहीम

रहीम का पूरा नाम अब्दुर्रहीम खानखाना था। इनका जन्म सन् 1556 ई. में लाहौर में हुआ। वे अक़बर के संरक्षक बैरम खाँ के पुत्र थे। वे अकबर के प्रधान सेनापति और मंत्री थे, साथ ही एक वीर योद्धा भी थे। वे अकबर के नवरत्नों में से एक थे। रहीम की मृत्यु सन् 1627 ई. में हुई।

रहीम बड़े लोकप्रिय कवि थे। इनके दोहे सर्वसाधारण की जिह्वा पर रहते हैं। इनके नीति के दोहे बहुत प्रचलित हैं। दैनिक जीवन से दृष्टान्त देकर कवि ने उन्हें सहज और लोकप्रिय बना दिया है। इनमें भक्ति और श्रृंगार की भी व्यंजना हुई है। रहीम हिन्दी, संस्कृत, अरबी, फ़ारसी और तुर्की आदि भाषाओं के विद्वान् थे। उन्होंने कवित्त, सवैया, सोरठा, बरवै आदि छंदों में सुन्दर रचनाएँ की हैं। अवधी और ब्रज भाषा दोनों पर उनका समान अधिकार था। उन्होंने अपने काव्य में सहज, सरल और प्रभावपूर्ण भाषा का प्रयोग किया है।

रहीम की प्रमुख रचनाएँ— रहीम सतसई, श्रृंगार सतसई, मदनाष्टक, रास पंचाध्यायी, रहीम रत्नावली, बरवै, नायिका-भेदवर्णन आदि।

14

नीति के दोहे

[रहीम के इन दोहों में प्रभु-स्मरण, सत्संगति, आत्मसम्मान, जीवन में छोटी-छोटी वस्तुओं की उपयोगिता, परोपकार, दीनबन्धुता, सच्ची मित्रता, मधुरवाणी आदि गुणों के महत्त्व को उभारा गया है। कवि ने व्यावहारिक जीवन से उदाहरण देते हुए इन गुणों की आवश्यकता बताई है।]

दुख में सुमिरन सब करैं, सुख में करै न कोय।
जो सुख में सुमिरन करैं, दुख काहे को होय।।1।।

जो रहीम उत्तम प्रकृति, का करि सकत कुसंग।
चंदन विष व्यापत नहीं लिपटे रहत भुजंग।।2।।

रहिमन पानी राखिए, बिन पानी सब सून।
पानी गए न ऊबरै, मोती, मानुष, चून।।3।।

रहिमन देखि बड़ेन को, लघु न दीजिए डारि।
जहाँ काम आवै सुई, कहा करै तरवारि।।4।।

तरुवर फल नहिं खात हैं, सरवर पियत न पान।
कहि रहीम पर-काज हित, संपति सँचहि सुजान।।5।।

जे गरीब पर हित करैं, ते रहीम बड़ लोग।
कहा सुदामा बापुरो, कृष्ण मिताई जोग।।6।।

रहिमन वे नर मर चुके, जे कहुँ माँगन जाहिं।
उनते पहले वे मुए, जिन मुख निकसत नाहिं।।7।।

कहि रहीम संपति सगे, बनत बहुत बहु रीत।
बिपति कसौटी जे कसे, ते ही साँचे मीत।।8।।

खीरा सिर तै काटिए, मलियत लोन लगाय।
रहिमन करुए मुखन को, चहियत इहै सजाय।।9।।

कदली सीप भुजंग मुख, स्वाति एक गुन तीन।
जैसी संगति बैठिए, तैसो ही फल दीन।।10।।

दोनों रहिमन एक से, जौ लौं बोलत नाहिं।
जानि परत हैं काक-पिक, ऋतु बसंत के माँहिं।।11।।

जो रहीम गति दीप की, कुल कपूत गति सोय।
बारे उजियारो लगै, बढ़ै अँधेरो होय।।12।।

प्रश्न-अभ्यास

1. सौंदर्य-बोध

(क) भाव-सौंदर्य

1. 'उत्तम प्रकृति के लोगों पर कुसंग का असर नहीं पड़ता' – यह बात रहीम ने कैसे समझाई है ?
2. निम्नलिखित परिस्थितियों और भावों के लिए रहीम के उपयुक्त दोहे बताइए–
   (क) कड़वी वाणी बोलने वालों को कड़ा दण्ड देना चाहिए।
   (ख) बड़ों से सम्पर्क बढ़ने पर छोटों को भुला नहीं देना चाहिए।
   (ग) भले-बुरे लोगों की पहचान उनकी वाणी से होती है।
   (घ) हम जिस तरह के लोगों की संगति में बैठेंगे, वैसा ही फल पाएँगे।
3. रहीम के अनुसार सच्चा मित्र कौन है ? सही उत्तर छाँटिए–
   (क) जो मुसीबत में काम आए
   (ख) जो धन से सहायता करे
   (ग) जो मुँह पर प्रशंसा करे
   (घ) जो मौके का लाभ उठाए

4. रहीम ने दीपक और कपूत को एक समान क्यों कहा है ?
5. कृष्ण और सुदामा की मैत्री के दृष्टांत से रहीम ने क्या शिक्षा दी है ?

(ख) शिल्प-सौंदर्य

1. मोती, मनुष्य और आटे के प्रसंग में रहीम ने "पानी" शब्द का प्रयोग किन-किन अर्थों में किया है ?
2. "बारे उजियारो लगै, बढ़ै, अंधेरो होय।"
   उपर्युक्त पंक्ति में "बारे" और "बढ़ै" का अर्थ-सौन्दर्य बताइए।

II. योग्यता-विस्तार

1. परोपकार के समर्थन में रहीम ने दो उदाहरण दिए हैं।
   इस सूची में कम से कम तीन उदाहरण अपनी तरफ़ से जोड़िए–
   (क) पेड़ अपने फल स्वयं नहीं खाते।
   (ख) तालाब अपना जल स्वयं नहीं पीते।
   (ग) बादल ....
   (घ) सूर्य ....
   (ङ) चाँद ....
2. निम्नलिखित विषयों पर प्रथम भाषा में उपलब्ध कविताओं का संग्रह कीजिए और किसी एक कविता का सार हिंदी में सुनाइए :
   (क) सज्जन की प्रशंसा
   (ख) सत्संग की महिमा
   (ग) परोपकार का महत्त्व

शब्दार्थ और टिप्पणी

का करि सकत	=	क्या कर सकता है ?
भुजंग	=	साँप
पानी	=	1. चमक 2. सम्मान 3. जल
सून	=	(शून्य) व्यर्थ
चून	=	(चूर्ण) आटा
सरवर	=	सरोवर, तालाब
पर-काज हित	=	दूसरे के उपकार के लिए
संचहिं	=	इकट्ठा करते हैं
हित	=	उपकार

बापुरो	=	बेचारा
मिताई जोग	=	मित्रता के योग्य
मुए	=	मर गए
लोन	=	(लवण) नमक
करुए मुखन कौं	=	कड़ुवी बात करने वालों को
इहै	=	यही
कदली	=	केला
बारे	=	1. जलाने पर 2. बचपन में
बढ़े	=	1. बुझने पर 2. बड़ा होने पर

टिप्पणी

1. "चंदन विष व्यापत नहीं, लिपटे रहत भुजंग।"
   कविता में कुछ ऐसी मान्यताएँ प्रचलित होती हैं जो सामान्य जीवन में सत्य नहीं होतीं। इन्हें 'कवि समय' या 'कवि-सत्य' कहते हैं। इसी के अनुसार यह मान्यता है कि चंदन के वृक्ष में साँप लिपटे रहते हैं।
2. "कदली सीप भुजंग मुख, स्वाति एक गुन तीन।"
   यह भी एक कवि-समय है कि स्वाति नक्षत्र में बरसा हुआ जल केले, सीप और साँप के मुँह में गिरने पर क्रमशः कपूर, मोती और विष बन जाता है।

तुलसीदास

कहा जाता है कि तुलसीदास का जन्म सन् 1532 ई. में बाँदा ज़िले के राजापुर गाँव में हुआ था। तुलसीदास के पिता का नाम आत्माराम दुबे और माता का नाम हुलसी था। वे मूल नक्षत्र में पैदा हुए थे। इस नक्षत्र में बालक का जन्म अशुभ माना जाता है। इसलिए उनके माता-पिता ने उन्हें त्याग दिया था। गुरु नरहरिदास ने उन्हें शिक्षा-दीक्षा दी और उनका विवाह रत्नावली नाम की कन्या से करवा दिया। उनके विषय में प्रसिद्ध है कि अपनी पत्नी रत्नावली के उपदेश से ही उन्हें वैराग्य हुआ और उनका मन रामभक्ति की ओर मुड़ गया। उनका जीवन काशी, अयोध्या और चित्रकूट में अधिक व्यतीत हुआ। यहाँ रहकर वे राम-भक्ति की रचनाएँ करते रहे। सन् 1623 में काशी के असी घाट पर उनकी जीवन-लीला समाप्त हुई।

तुलसीदास रचित "श्रीरामचरितमानस" की गणना विश्व के प्रसिद्ध ग्रंथों में की जाती है। इसमें श्रीराम के मर्यादा पुरुषोत्तम स्वरूप का वर्णन है। श्रीराम के चरित्र में शक्ति, शील और सौंदर्य तीनों गुणों का सामंजस्य मिलता है। परिवार, समाज और राष्ट्र के उन्नयन के लिए तुलसीदास ने रामराज्य की रूपरेखा "श्रीरामचरितमानस" में प्रस्तुत की है।

अवधी और ब्रजभाषा पर तुलसीदास को समान अधिकार था। उनके द्वारा रचित "श्रीरामचरितमानस" महाकाव्य अवधी भाषा में है। तुलसीदास जी की गीतावली, कवितावली, विनय-पत्रिका आदि रचनाएँ ब्रजभाषा में हैं। इनकी रचनाओं में दोहा, चौपाई, कवित्त, सवैया आदि छन्दों का प्रयोग मिलता है। इनके काव्य में प्रायः सभी रसों का प्रतिपादन हुआ है। अलंकारों का स्वाभाविक प्रयोग तुलसीदास के काव्य की प्रमुख विशेषता है।

तुलसीदास की प्रमुख रचनाएँ हैं—श्रीरामचरितमानस, विनयपत्रिका, कवितावली, दोहावली, गीतावली, जानकी-मंगल, पार्वती-मंगल, रामाज्ञाप्रश्न, रामलला-नहछू, बरवै-रामायण, हनुमान-बाहुक आदि।

15

केवट की चाह

[राम वन को जा रहे थे। गंगा पार करने के लिए उन्होंने केवट से नाव माँगी। केवट नाव नहीं लाया। उसने बड़ी विनम्रता से कहा—प्रभु! मैं आपको अपनी नाव पर नहीं चढ़ा पाऊँगा क्योंकि मैंने सुना है कि पत्थर की शिला आपकी चरणधूलि का स्पर्श पाकर स्त्री बन गई। मेरी नाव तो काठ की है। यह अगर स्त्री बन गई तो मेरी जीविका कैसे चलेगी ? आप चाहे जो करें। मैं जब तक आपके चरण नहीं धो लूँगा, तब तक नाव पर नहीं बिठाऊँगा।

केवट के तर्क को श्रीराम ने स्वीकार किया। केवट कठौती में गंगाजल भर लाया और उसने पूरे परिवार के साथ श्रीराम के चरण धोकर अपनी चाह पूरी की।

इस प्रसंग को तुलसीदास जी ने "कवितावली" में बड़े अनूठे ढंग से प्रस्तुत किया है। इसमें एक ओर जहाँ केवट के चातुर्य, वाचालता और उसकी भक्ति दिखलाई पड़ती है तो वहीं दूसरी ओर श्रीराम के कृपालु स्वभाव और प्रेमपूर्ण सरल व्यवहार की झलक भी मिलती है।]

एहि घाट ते थोरिक दूर अहै कटि लौं जल थाह दिखाइहौं जू।
परसे पग धूरि तरै तरनी घरनी क्यों समुझाइहौं जू।
तुलसी अवलम्बु न और कछू लरिका केहि भाँति जियाइहौं जू।
बरु मारिए मोहिं बिना पग धोए, हौं नाथ न नाव चढ़ाइहौं जू।

रावरे दोष न पायँन को, पगधूरि को भूरि प्रभाव महा है।
पाहन तें बन-बाहन काठ कौ, कोमल है जल खाय रहा है।
पावन पाँय पखारि के नाव, चढ़ाइहौं आयसु होत कहा है।
तुलसी सुनि केवट के बर बैन, हँसे प्रभु जानकी ओर हहा है।

पात भरी सहरी सकल सुत बारे-बारे
केवट की जाति कछु वेद न पढ़ाइहौं।
मेरौ सारो परिवार यही लागि राजा जू,
हौं दीन बित्तहीन कैसे दूसरी गढ़ाइहौं।
गौतम की घरनी ज्यों, तरनी तरैगी मेरी,
प्रभु सौं निषाद है के, बादु न बढ़ाइहौं।
तुलसी के ईस राम, रावरे सौं साँची कहौं
बिना पग धोए नाथ ! नाव न चढ़ाइहौं।

प्रभु रुख पायकै, बोलाइ बाल घरनि को
बंदि कै चरण, चहुँ दिशि बैठे घेरि-घेरि।
छोटो सो कठौता भरि, आनि पानि गंगा जू को,
धोइ पाँय पियत, पुनीत बारि, फेरि-फेरि।
तुलसी सराहै, ताको भाग सानुराग सुर,
बरषैं सुमन, जय-जय कहैं टेरि-टेरि।
बिबुध सनेह सानी, बानी असयानी सुनि,
हँसे राघौ, जानकी लषन तन हेरि-हेरि।

प्रश्न-अभ्यास

I. सौंदर्य-बोध

(क) भाव-सौंदर्य

1. केवट की चाह क्या थी ?
2. केवट के अनुसार राम की चरण धूलि की क्या विशेषता है ?
3. कविता के आधार पर केवट के परिवार की गरीबी का चित्रण अपने शब्दों में कीजिए।
4. चरण धोने के लिए राम की स्वीकृति पाकर केवट ने क्या किया ?
5. देवताओं ने अपनी प्रसन्नता किस प्रकार व्यक्त की ?
6. केवट और राम के स्वभाव के दो-दो गुण बताइए।

(ख) शिल्प-सौंदर्य

1. "दिखाइहौं" की तुक-तान के तीन शब्द पहले छन्द से छाँटिए।
2. अंतिम छंद में "घेरि", "फेरि" ,"टेरि" और "हेरि" शब्दों की आवृत्ति से कविता के सौंदर्य में क्या अभिवृद्धि हुई है ?

II. योग्यता-विस्तार

1. इस कविता का सस्वर पाठ कीजिए।
2. "राम केवट संवाद" नीचे दिए गए प्रारूप के अनुसार पूरा कीजिए—

राम-केवट-संवाद

राम : केवट, नाव ले आओ और हमें गंगा के पार उतार दो।

केवट : (हाथ जोड़कर) ....

....

....

राम : तो फिर हम गंगा पार कैसे जाएँगे ?

केवट : (गंगा की ओर इशारा करता हुआ) ....

....

राम : केवट, हम तो तुम्हारी नाव से ही गंगा पार करेंगे।

केवट : (पार उतारने की शर्त बताते हुए) ....

....

राम : (मुस्कराते हुए) हमें तुम्हारी शर्त स्वीकार हैं।

केवट : (अपने परिवार-जनों को बुलाते हुए) ....

....

उपर्युक्त संवाद पूरे करके, कक्षा में राम और केवट का अभिनय करते हुए वाचन कीजिए।

शब्दार्थ और टिप्पणी

घरनी = पत्नी, गृहणी

अवलम्ब = सहारा

बरु = चाहे

हौं = मैं

रावरे = आपके

भूरि = बहुत

वाद = बहस, झगड़ा
कठौता = काठ का बर्तन
एहि घाट ते = इस घाट से
थोरी दूरि अहै = थोड़ी दूर है
कटि लौं = कमर तक
जल थाह = जल की गहराई
दिखाइहौं जू = दिखाऊँगा ('जू' आदर सूचक शब्द है)
परसे पग धूरि = चरणों की धूल के स्पर्श से
तरै तरनी = नाव तर जाती है
क्यों समुझाइहौं जू = कैसे समझाऊँगा
लरिका केहि भाँति जिआइहौं जू = बच्चों का पालन-पोषण कैसे करूँगा ?
पात भरी सहरी = दोने भर मछली
सकल सुत बारे-बारे = सभी बच्चे छोटे-छोटे
कछु बेद न पढ़ाइहौं = वेद तो पढ़ाऊँगा नहीं
सारौ परिवार मेरौ = मेरा सारा परिवार
बित्तहीन = धनहीन, निर्धन
दूसरी गढ़ाइहौं = कैसे दूसरी बनवाऊँगा
दोष न पाँयन कौ = पैरों का कसूर नहीं है
पग-धूरि = पैरों की धूल
पाहन से = पत्थर की तुलना में
बन-बाहन = नाव
खाय रहा है = कमजोर कर रहा है
आयसु होत कहा है = क्या आज्ञा है ?
बर बैन = सुन्दर वचन
आनि = लाकर
सराहैं = सराहना करते हैं
सानुरांग : प्रेम सहित
सुर : देवता
टेरि-टेरि : पुकार-पुकार कर
बिबुध : देवता

हँसे प्रभु जानकी ओर हहा	:	सीता की ओर देखकर प्रभु राम ठठा-कर (ज़ोर से) हँसे।
असपानी बानी	:	ऐसी वाणी, जिसमें सयानापन न हो अर्थात् भोली-भाली बातें
गौतम की घरनी	:	अहिल्या गौतम ऋषि की पत्नी थीं। किन्तु वे अपने पति के शाप से पत्थर की शिला बन गई थीं। श्रीराम के चरण-स्पर्श से ही उनकी शाप से मुक्ति हुई।
पात भरी सहरी	:	केवट मछली पकड़ते हैं। वही उनका भोजन है। उनके पास बर्तन आदि कम होते हैं। पत्तों के दोने बनाकर उन्हीं में मछलियाँ रखते हैं। निर्धनता का बोध कराने के लिए ही इस शब्द का प्रयोग किया गया है।

नरोत्तमदास

नरोत्तमदास का जन्म उत्तर प्रदेश के सीतापुर ज़िले के बाड़ी ग्राम में सन् 1493 ई. में हुआ था। वे सादा जीवन और उच्च विचार के व्यक्ति थे। उनकी मृत्यु तिथि के बारे में निश्चित जानकारी नहीं मिलती। वह युग नाम-प्रचार का युग नहीं था।

नरोत्तमदास ने सरल और सजीव ब्रज भाषा में अपना काव्य लिखा है। उनके काव्य में कवित्त और सवैया छंद विशेष रूप से मिलते हैं, परन्तु कहीं-कहीं दोहों का भी प्रयोग हुआ है। नरोत्तमदास ने काव्य-सौंदर्य के लिए उपमा, रूपक और अनुप्रास आदि अलंकारों का सफल प्रयोग किया है। सुदामा-चरित के आधार पर ही काव्य-जगत में नरोत्तमदास को प्रसिद्धि मिली। इस खण्ड काव्य में श्रीकृष्ण और सुदामा की मित्रता का बड़ा ही रोचक, भावपूर्ण और मार्मिक वर्णन हुआ है। उन्होंने सुदामा की दरिद्रता और आत्म-सम्मान की भावना तथा कृष्ण के अतुल वैभव और मैत्रीभाव का सजीव चित्र खींचा है।

नरोत्तमदास की प्रमुख रचनाओं में 'सुदामा-चरित', 'ध्रुव-चरित' और 'विचारमाला' का उल्लेख मिलता है। इनमें से केवल 'सुदामाचरित' ही उपलब्ध है। उनकी अन्य दो कृतियाँ उपलब्ध नहीं हैं।

16

सुदामा चरित

[प्रस्तुत कविता में श्रीकृष्ण और सुदामा की मित्रता से संबंधित एक रोचक प्रसंग है। पत्नी के आग्रह से सुदामा श्रीकृष्ण के पास सहायता माँगने के लिए गए। श्रीकृष्ण ने सुदामा का अत्यधिक सम्मान किया परन्तु प्रकट रूप से उन्हें कुछ नहीं दिया। सुदामा ने भी अपने आप कुछ नहीं माँगा। घर पहुँच कर उन्होंने पाया कि उनकी टूटी झोंपड़ी के स्थान पर सोने का महल खड़ा है। यह परिवर्तन श्रीकृष्ण की कृपा से हुआ था। कवि ने श्री-कृष्ण-सुदामा की परम्परागत कथा को संवादों के माध्यम से सजीव कर दिया है।]

सीस पगा न झगा तन में प्रभु ! जानै को आहि बसै केहि ग्रामा।
धोती फटी-सी लटी दुपटी अरु, पाँय उपानहु को नहिं सामा।
द्वार खड़ो द्विज दुर्बल एक, रह्यो चकि सो वसुधा अभिरामा।
पूँछत दीनदयाल कौ धाम, बतावत आपनो नाम सुदामा।

बोल्यौ द्वारपालक सुदामा नाम पाँड़े सुनि,
छाँड़े राज-काज ऐसे जी की गति जाने को ?
द्वारिका के नाथ हाथ जोरि धाय गहे पाँय,
भेंटे भरि अंक लपटाय दुख साने को ?
नैन दोऊ जल भरि, पूँछत कुसल हरि,
बिप्र बोल्यौ विपदा में मोहि पहिचानै को ?
जैसी तुम करी बैसी करै को दया के सिन्धु,
ऐसी प्रीत दीनबंधु! दीनन सों माने को।।

ऐसे बेहाल बिवाइन सों, पग कंटक जाल लगे पुनि जोए।।
हाय महादुख पायो सखा ! तुम आए इतै न कितै दिन खोए।।
देखि सुदामा की दीन दशा, करुना करि कै करुनानिधि रोए।।
पानी परात को हाथ छुयौ नहिं, नैनन के जल सों पग धोए।।

कछु भाभी हमकौं दियौ, सो तुम काहे न देत।
चाँपि पोटरी काँख में, रहे कहौ केहि हेत।।

आगे चना गुरुमातु दए, ते लए तुम चाबि हमें नहिं दीने।
स्याम कह्यो मुसकाय सुदामा सौं, चोरी की बान में हौ जू प्रबीने।।
पोटरी काँख में चाँपि रहे तुम, खोलत नाहिं सुधा-रस भीने।
पाछिली बानि अजौ न तजी तुम, तैसेई भाभी के तंदुल कीन्हे।।

वह पुलकनि, वह उठि मिलनि, वह आदर की बात।
वह पठवनि गोपाल की, कछु न जानी जात।।
घर-घर कर ओड़त फिरे, तनक दही के काज।
कहा भयौ जो अब भयौ, हरि कौ राज-समाज।।

बैसोई राज समाज बनौ, गज-बाजि घने, मन संभ्रम छायो।
कैधौं परयो कहुँ मारग भूलि, कै फेरि कै मैं अब द्वारिका आयो।।
भौन बिलोकिबे कौं मन लोचत, सोचत ही सब गाँव मँझायो।
पूँछत पाँड़े फिरे सब सौं पर, झोपरि कौ कहुँ खोज न पायो।।

टूटी सी मड़ैया मेरी परी हुती याही ठौर,
तामैं परयौ दुःख काटौ कहाँ हेम-धाम री।
जेवर जराऊ तुम साजे सब अंग-अंग,
सखी सोहै संग वह छूछी हती छामरी।।
तुम तो पटंबर री ! ओढ़ै हौ किनारीदार,
सारी जरतारी, वह ओढ़ै कारी कामरी।
मेरी वा पँड़ाइन तिहारी अनुहार ही पै,
बिपदा सताई वह पाऊँ कहाँ पामरी।।
कै वह टूटी-सी छानी हती, कहँ कंचन के अब धाम सुहावत।
कै पग में पनहीं न हती, कहँ लै गजराजहु ठाढ़े, महावत।।

भूमि कठोर पै रात कटै, कहँ कोमल सेज पै नींद न आवत।
कै जुरतो नहिं कोदौं सवाँ, प्रभु के परताप तैं दाख न भावत।।

प्रश्न-अभ्यास

I. सौंदर्य-बोध

(क) भाव-सौंदर्य

1. द्वारपाल ने सुदामा के बारे में श्रीकृष्ण को क्या बताया ?
2. श्रीकृष्ण सुदामा से किस प्रकार मिले ?
3. श्रीकृष्ण ने सुदामा से क्या परिहास किया ?
4. द्वारिका से लौटने पर अपनी झोंपड़ी न पाकर सुदामा के मन में क्या विचार आए ?
5. द्वारिका पहुँचने पर सुदामा की आँखों में चकाचौंध क्यों होने लगी ? सही उत्तर छाँटिए—
   क. द्वारिका नगरी स्वर्णमयी थी।
   ख. श्रीकृष्ण के पास अपार वैभव था।
   ग. द्वारिकापुरी के महल बहुत ऊँचे-ऊँचे थे।
   घ. द्वारिका में नागरिकों का व्यवहार अटपटा था।
6. निम्नलिखित पंक्तियों का भाव स्पष्ट कीजिए—
   क. पानि परात को हाथ छुयो नहिं, नैनन के जल सों पग धोए।
   ख. वह पठवनि गोपाल की, कछू न जानी जात।

(ख) शिल्प-सौंदर्य

1. सुदामा की दरिद्रता प्रकट करने वाले अंशों को कविता में से छाँट कर लिखिए।
2. सुदामा की गरीबी और अमीरी से संबंधित कुछ स्थितियाँ कविता में दी गई हैं। ऐसी चार स्थितियों का उल्लेख कीजिए।

II. योग्यता-विस्तार

1. सुदामा और श्रीकृष्ण के मिलन-प्रसंग का अभिनय कीजिए।
2. श्रीकृष्ण और सुदामा के संवाद गद्य में लिखिए।

शब्दार्थ और टिप्पणी

पेलि = जबरदस्ती, धक्का देकर
जक = धुन, ज़िद, हठ
सलज = (सलज्ज) लज्जा से युक्त (लज्जाशील)
छरिया = द्वारपाल
पौरजन = नागरिक
सामा = सामर्थ्य, शक्ति
बैसोई = उसी प्रकार (वैसा ही)
सम्भ्रम = भ्रम में पड़ना, आश्चर्य चकित होना
मन लोचत = मन लालायित होता है
सब गाँव मँझायो = सारे गाँव में ढूँढ़ डाला
खोज न पायो = कहीं कोई भी चिह्न नहीं मिला
मड़ैया = झोपड़ी
याही ठौर = इसी स्थान पर
हेमधाम = सोने का घर (महल)
जेवर = आभूषण
छूँछी = खाली (यहाँ खाली/ छूँछी शब्द 'आभूषणहीन' के अर्थ में आया है।)
कारी कामरी = काले कम्बल का टुकड़ा
तिहारी अनुहार ही पै = तुम्हारी शक्ल-सूरत जैसी ही
पामरी = बेचारी
महावत = हाथी को चलाने वाला व्यक्ति
सेज = शय्या, बिस्तर
जुरतो = प्राप्त होना
परताप = (प्रताप) प्रभाव
दाख = किशमिश (एक प्रकार की मीठी मेवा जो अंगूर को सुखाकर बनायी जाती है।)
विप्र = ब्राह्मण
घरनी = पत्नी, गृहिणी
मिठौती = मिठाई (मिष्ठान)
सिसियातहि = सर्दी (ठंड) से काँपते हुए

ठेलि-पेलि = ज़बरदस्ती
पठौती = भेजती
जाम = याम, (तीन घंटे का एक याम होता है। इस तरह दिन और रात (24 घंटे) में आठ याम (प्रहर) होते हैं।)
नेरे = समीप या पास में
भूपति = राजा
चाँउर-चाँबर = चावल
दुपटिया खूँट = ऊपर ओढ़े जाने वाले वस्त्र का किनारा (छोर)
बाली, बूँट = गेहूँ की बाल और हरे चने
दीठि = दृष्टि
भौन = भवन
पौर-जन = नागरिक
धाय = दौड़कर
गौन = गमन करना, जाना
पीर = पीड़ा या दुःख
लटी = पुरानी, तार-तार होकर फटी हुई
अपानह = नंगे पैर (बिना जूते चप्पल पहने)
अभिरामा = सुन्दर
विपदा = विपत्ति
कंटक = काँटे
बेहाल = दुखी
परात = पीतल का बना हुआ थाली की आकृति का एक बड़ा बर्तन (पात्र)
चाँपि = दबाकर
काँख = बगल (भुजाओं का भीतरी भाग)
पोटरी = कपड़े में बँधा हुआ सामान
सुधारस = अमृत
तंडुल = चावल
ओड़त फिंरे = माँगते हुए घूमे
तनक = थोड़ा-सा, स्वल्प

कोदों सवाँ–

एक प्रकार का अन्न; यह बहुत छोटे-छोटे दानों वाला एक ऐसा अनाज है, जो जंगल में बिना बोए-जोते अपने आप उग आता है। जब गेहूँ बहुत कम पैदा होता था, तब गरीब लोग इसे खाकर ही जीवित रहते थे।

आगे चना गुरुमातु दए . . . . . .

पौराणिक कथा के अनुसार सन्दीपनि ऋषि के आश्रम में श्रीकृष्ण और सुदामा साथ पढ़ते थे। एक बार गुरुपत्नी ने सुदामा को यह कह कर चने दिए थे कि तुम और श्रीकृष्ण इन्हें बाँट कर खा लेना, पर सुदामा अकेले ही खा गए थे। यहाँ श्रीकृष्ण परिहास में उसी घटना की ओर संकेत कर रहे हैं।

अयोध्यासिंह उपाध्याय "हरिऔध"

अयोध्यासिंह उपाध्याय "हरिऔध" का जन्म उत्तर प्रदेश के आज़मगढ़ ज़िले के निज़ामाबाद कस्बे में सन् 1865 ई. में हुआ था। वे नॉर्मल की परीक्षा पास करके निज़ामाबाद के मिडिल स्कूल में पढ़ाने लगे। इसके बाद उन्होंने कई वर्षों तक कानूनगो के पद पर भी काम किया। इस सरकारी नौकरी से अवकाश ग्रहण कर उन्होंने बहुत दिनों तक हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी में अवैतनिक अध्यापक के रूप में कार्य किया। "हरिऔध" उर्दू, फ़ारसी और संस्कृत के विद्वान थे। इन भाषाओं का ज्ञान उन्होंने घर पर ही स्वाध्याय द्वारा प्राप्त किया। सन् 1945 ई. में उनका देहान्त हुआ।

अयोध्यासिंह उपाध्याय "हरिऔध" आधुनिक हिन्दी के मूर्धन्य कवि हैं। ब्रजभाषा और खड़ी बोली दोनों पर ही उनका समान अधिकार है। समासयुक्त तत्सम शब्दों के सुन्दर प्रयोग के साथ ही उनकी रचनाओं में सरल हिंदी का सहज सौंदर्य भी प्राप्त होता है। उन्होंने अपने काव्य में मुहावरों और बोलचाल के शब्दों का बड़ा सुन्दर प्रयोग किया है। "प्रियप्रवास" उनका लोकप्रिय महाकाव्य है। इसके चरित्रनायक श्रीकृष्ण हैं। "हरिऔध" ने इसमें श्रीकृष्ण को अवतार के रूप में प्रस्तुत नहीं किया बल्कि उनके लोकनायक रूप का चित्रण किया है।

"हरिऔध" की प्रमुख रचनाएँ हैं— प्रियप्रवास, वैदेही वनवास, पारिजात, रसकलश, चोखे-चौपदे, चुभते-चौपदे, बोलचाल आदि।

17

कर्मवीर

[कवि ने इस कविता में वीरतापूर्ण काम करने वाले व्यक्ति के गुणों का वर्णन किया है। सच्चा कर्मवीर वही है जो विघ्न और बाधाओं से कभी भी नहीं घबराता। कठिन-से-कठिन कार्य को हँसते-हँसते कर लेता है, वह किसी भी काम को आरंभ करके बीच में अधूरा नहीं छोड़ता। ऐसे ही कर्मवीर व्यक्तियों द्वारा देश का कल्याण होगा और मानव-जाति की भलाई होगी।]

देख कर बाधा विविध, बहु विघ्न घबराते नहीं।
रह भरोसे भाग के दुख भोग पछताते नहीं।।
काम कितना ही कठिन हो किन्तु उकताते नहीं।
भीड़ में चंचल बनें जो वीर दिखलाते नहीं।।
हो गए इक आन में उनके बुरे दिन भी भले।
सब जगह सब काल में वे ही मिले फूले-फले।।1।।

व्योम को छूते हुए दुर्गम पहाड़ों के शिखर।
वे घने जंगल जहाँ रहता है तम आठों पहर।।
गरजती जल-राशि की उठती हुई ऊँची लहर।
आग की भयदायिनी फैली दिशाओं में लवर।।
ये कँपा सकती कभी जिसके कलेजे को नहीं।
भूलकर भी वह नहीं नाकाम रहता है कहीं।।2।।

चिलचिलाती धूप को जो चाँदनी देवें बना।
काम पड़ने पर करें जो शेर का भी सामना।।
जो कि हँस-हँस के चबा लेते हैं लोहे का चना।

है कठिन कुछ भी नहीं जिनके है ज़ी में यह ठना।।
कोस कितने ही चलें पर वे कभी थकते नहीं।
कौन सी है गाँठ जिसको खोल वे सकते नहीं।।3।।

काम को आरंभ करके यों नहीं जो छोड़ते।
सामना करके नहीं जो भूल कर मुँह मोड़ते।।
जो गगन के फूल बातों से वृथा नहीं तोड़ते।।
संपदा मन से करोड़ों की नहीं जो जोड़ते।।
बन गया हीरा उन्हीं के हाथ से है कारबन।
काँच को करके दिखा देते हैं वे उज्ज्वल रतन।।4।।

पर्वतों को काटकर सड़कें बना देते हैं वे।
सैकड़ों मरुभूमि में नदियाँ बहा देते हैं वे।।
गर्भ में जल-राशि के बेड़ा चला देते हैं वे।
जंगलों में भी महा-मंगल रचा देते हैं वे।।
भेद नभ-तल का उन्होंने बहुत बतला दिया।
है उन्होंने ही निकाली तार की सारी क्रिया।।5।।

सब तरह से आज जितने देश हैं फूले-फले।
बुद्धि, विद्या, धन, विभव के हैं जहाँ डेरे डले।।
वे बनाने से उन्हीं के बन गए इतने भले।
वे सभी हैं हाथ से ऐसे सपूतों के पले।।
लोग जब ऐसे, समय पाकर जनम लेंगे कभी।
देश की औ' जाति की होगी भलाई भी तभी।।6।।

प्रश्न- अभ्यास

I. सौंदर्य-बोध

क. भाव-सौंदर्य

1. कवि के मन में संपन्न देशों की सफलता का कारण क्या है ?
2. किस प्रकार के लोग जीवन में [illegible] होते हैं ?
3. जीवन में दुखी होकर कौन लोग पश्चाताप करते हैं ?

4. वनों की सघनता का वर्णन कवि ने किन शब्दों में किया है ?
5. "कर्मवीर असंभव को संभव कर देते हैं" — यह बात कवि ने किन पंक्तियों में व्यक्त की है ? उन्हें पढ़कर सुनाइए।
6. कर्मवीर के लक्षण नीचे दिए जा रहे हैं। कविता के आधार पर कम-से-कम चार लक्षण और जोड़िए।

1. न घबराना 5.
2. भाग्य में विश्वास न करना 6.
3. निडरता 7.
4. कठिनाइयों में भी हँसते रहना 8.

7. भाव स्पष्ट कीजिए :

क. हो गए इक आन में उनके बुरे दिन भी भले,
सब जगह सब काल में वे ही मिले फूले-फले।

ख. जो गगन के फूल बातों से वृथा नहीं तोड़ते,
संपदा मन से करोड़ों की नहीं जो जोड़ते।

ग. लोग जब ऐसे, समय पाकर जनम लेंगे कभी,
देश की औ' जाति की होगी भलाई भी तभी।

ख. शिल्प-सौंदर्य

1. नीचे लिखे स्तंभ "क" के उपयुक्त विशेषण स्तंभ "ख" से छाँटिए—

क	ख
पर्वत-शिखर	चिलचिलाती
जंगल	भयदायिनी
आग	गरजती
जल-राशि	घने
धूप	दुर्गम

2. इस कविता में आए सभी मुहावरों की सूची बनाइए और उनमें से किन्हीं पाँच मुहावरों का प्रयोग अपने वाक्यों में कीजिए।

II. योग्यता-विस्तार

1. प्रथम भाषा की किसी ऐसी कविता को कक्षा में सुनाइए जो "कर्मवीर" से मिलती-जुलती हो। उस कविता का भाव हिन्दी में भी बताइए।
2. 'चिलचिलाती धूप को जो चाँदनी देवें ...' पंक्ति का भाव-पल्लवन कीजिए।

शब्दार्थ और टिप्पणी

उकताना	=	ऊबना, मन न लगना
व्योम	=	आकाश
आन	=	गौरव, सम्मान
भयदायिनी	=	डरावनी, भयानक
लवर	=	आग की लपट, ज्वाला
चिलचिलाती	=	बहुत गर्म, झुलसानेवाली
कोस	=	दूरी मापने की एक इकाई, जो अब प्रचलन में नहीं है। (लगभग दो मील का एक कोस होता है।)
बेड़ा	=	नावों या जहाज़ों का समूह
नाकाम	=	असफल
व्योम को छूते हुए	=	बहुत-ऊँचे
कलेजा कँपाना	=	डराना
लोहे के चने चबाना	=	कठिन परिश्रम करना
गाँठ खोलना	=	रहस्य जानना
जी में ठना होना	=	पक्का निश्चय कर लेना
मुँह मोड़ना	=	ध्यान न देना
गगन के फूल बातों से तोड़ना	=	केवल बातें करना, दिवास्वप्न देखना
मन से करोड़ों की संपदा जोड़ना	=	असंभव कल्पनाएँ करना
जंगल में मंगल रचाना	=	निर्जन स्थान में भी उत्सव मनाना (चहल-पहल होना)
फूला-फला होना	=	संपन्न और उन्नत होना

सियारामशरण गुप्त

सियारामशरण गुप्त का जन्म सन् 1895 ई. में उत्तर प्रदेश के झाँसी ज़िले के चिरगाँव कस्बे में हुआ था। उनकी शिक्षा-दीक्षा घर पर ही हुई। उन्होंने संस्कृत, बंगला और अंग्रेज़ी आदि भाषाओं का ज्ञान अर्जित किया। उनके परिवार में रामभक्ति की परम्परा थी और साहित्यिक वातावरण था। राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त इनके बड़े भाई थे। इससे उनकी प्रतिभा का बहुमुखी विकास हुआ। उनका स्वर्गवास सन् 1963 ई. में हुआ।

गुप्तजी महात्मा गांधी और विनोबा भावे के विचारों में बहुत आस्था रखते थे। इसका प्रभाव उनकी रचनाओं में स्पष्ट दिखाई देता है। उनका काव्य—गुण और परिमाण दोनों दृष्टि से समृद्ध है। कथात्मकता उनके काव्य का प्रमुख गुण है। उन्होंने सामाजिक कुरीतियों पर करारी चोट की है। सरल शब्दों में गंभीर भाव एवं विचार प्रस्तुत करना उनकी मुख्य विशेषता है। गुप्तजी की भाषा अलंकार और प्रतीक आदि से बोझिल नहीं है। उन्होंने उच्च कोटि की गद्य-रचनाएँ भी की हैं, जिनमें नाटक, कहानी और निबंध प्रमुख हैं।

सियारामशरण गुप्त की प्रमुख काव्य-कृतियाँ हैं—मौर्य विजय, आर्द्रा, पाथेय, मृण्मयी, बापू, उन्मुक्त, आत्मोत्सर्ग, दूर्वादल और नकुल।

18

एक फूल की चाह

[प्रस्तुत कविता छुआछूत की समस्या पर आधारित है। कवि ने बड़े मार्मिक शब्दों में एक अछूत की व्यंथा का चित्रण किया है। एक अछूत लड़की बहुत बीमार है वह अपने पिता से देवी के प्रसाद के रूप में एक फूल पाने की इच्छा व्यक्त करती है। उसका पिता मंदिर जाकर देवी को दीप और पुष्प अर्पित करता है। फूल लाने की जल्दी में वह प्रसाद लेना भी भूल जाता है। अचानक कुछ उसे पहचान लेते हैं और पकड़कर पीटते हैं। उसके हाथ से फूल गिर जाता है। वह जब तक घर पहुँचता है, उसकी बेटी मर चुकी होती है। उसे जीवन भर यह पछतावा रहता है कि वह अपनी बेटी की अंतिम इच्छा पूरी न कर सका।]

बहुत रोकता था सुखिया को,
    "न जा खेलने को बाहर"
नहीं खेलना रुकता उसका
    नहीं ठहरती वह पल-भर।
मेरा हृदय काँप उठता था,
    बाहर गई निहार उसे
यही मनाता था कि बचा लूँ
    किसी भाँति इस बार उसे।
भीतर जो डर रहा छिपाए,
    हाय ! वही बाहर आया।
एक दिवस सुखिया के तन को
    ताप-तप्त मैंने पाया।
ज्वर में विह्वल हो बोली वह,

क्या जानूँ किस डर से डर,
मुझको देवी के प्रसाद का
एक फूल ही दो लाकर।
क्रमशः कंठ क्षीण हो आया,
शिथिल हुए अवयव सारे,
बैठा था नव-नव उपाय की
चिंता में मैं मन मारे।
जान सका न, प्रभात सजग से
हुई अलस कब दोपहरी,
स्वर्ण-घनों में कब रवि डूबा,
कब लौटी संध्या गहरी।
सभी ओर दिखलाई दी बस,
अंधकार की ही छाया।
छोटी-सी बच्ची को ग्रसने
कितना बड़ा तिमिर आया,
ऊपर विस्तृत महाकाश में
जलते-से अंगारों से,
झुलसी-सी जाती थीं आँखें
जगमग जगते तारों से।
देख रहा था—जैसे सुस्थिर हो
नहीं बैठती थी क्षण-भर,
हाय ! वही चुपचाप पड़ी थी
अटल शांति-सी धारण कर।
सुनना यही चाहता था मैं
उसे स्वयं ही उकसाकर—
मुझको देवी के प्रसाद का
एक फूल ही दो लाकर।
ऊँचे शैल-शिखर के ऊपर
मंदिर था विस्तीर्ण विशाल,

स्वर्ण-कलश-सरसिज विहँसित थे
पाकर समुदित रवि-कर-जाल।
दीप-धूप से आमोदित था
मंदिर का आँगन सारा,
गूँज रही थी भीतर-बाहर
मुखरित उत्सव की धारा।
भक्त-वृंद मधुर कंठ से,
गाते थे सभक्ति मुद-मय
"पतित-तारिणी, पाप-हारिणी,
माता तेरी जय-जय-जय !"
"पतित-तारिणी, तेरी जय-जय"
मेरे मुख से भी निकला,
बिना बढ़े ही मैं आगे को
जाने किस बल से ढिकला।
मेरे दीप-फूल लेकर वे
अंबा को अर्पित करके,
दिया पुजारी ने प्रसाद जब
आगे को अंजलि भरके,
भूल गया उसका लेना झट,
परम लाभ-सा पाकर मैं।
सोचा बेटी को माँ के ये
पुण्य पुष्प दूँ जाकर मैं।
सिंहपौर तक भी आँगन से
नहीं पहुँचने मैं पाया,
सहसा यह सुन पड़ा कि—"कैसे
यह अछूत भीतर आया ?
पकड़ो देखो भाग न जाए,

बना धूर्त यह है कैसा,
साफ-स्वच्छ परिधान किए है,
भले मानुषों के जैसा !
पापी ने मंदिर में घुसकर
किया अनर्थ बड़ा भारी,
कलुषित कर दी है मंदिर की
चिरकालिक शुचिता सारी।"
ऐं, क्या मेरा कलुष बड़ा है
देवी की गरिमा से भी,
किसी बात में हूँ मैं आगे
माता की महिमा के भी ?
माँ के भक्त हुए तुम कैसे,
करके यह विचार खोटा ?
माँ के सम्मुख ही माँ का तुम
गौरव करते हो छोटा !
कुछ न सुना भक्तों ने, झट से
मुझे घेरकर पकड़ लिया,
मार-मारकर मुक्के-घूँसे
धम-से नीचे गिरा दिया।
मेरे हाथों से प्रसाद भी
बिखर गया हा ! सब-का-सब,
हाय ! अभागी बेटी, तुझ तक
कैसे पहुँच सके यह अब !
अंतिम बार गोद में बेटी,
तुझको ले न सका मैं हा !
एक फूल माँ के प्रसाद का
तुझको दे न सका मैं हा !

प्रश्न-अभ्यास

I. **सौंदर्य-बोध**

क. **भाव-सौंदर्य**

1. सुखिया का पिता अपनी बेटी को बाहर जाने से क्यों रोकता था ?
2. बीमार सुखिया ने क्या इच्छा प्रकट की ?
3. सुखिया के पिता को पुत्री की गंभीर बीमारी से क्या चिन्ता हुई ?
4. मन्दिर के सौन्दर्य का वर्णन कविता के आधार पर कीजिए।
5. सुखिया के पिता को मंदिर में पीटा जाना किस सामाजिक बुराई को व्यक्त करता है ?
6. पीटे जाने पर सुखिया के पिता ने माँ के भक्तों से क्या कहा ?
7. सुखिया के पिता को अंत में किस बात का पछतावा रहा ?
8. सुखिया का पिता पुजारी के हाथ से प्रसाद क्यों नहीं ले पाया ?
   सही उत्तर छाँटिए :
   क. मंदिर में भीड़ बहुत थी।
   ख. उसे अपनी जान का डर था।
   ग. उसे सुखिया को फूल देने की जल्दी थी।
   घ. उसे प्रसाद ग्रहण करना नहीं आता था।
9. भाव स्पष्ट कीजिए—
   क. देख रहा था जैसे सुस्थिर हो
      नहीं बैठती थी क्षण-भर,
      हाय ! वही चुपचाप पड़ी थी
      अटल शांति-सी धारण कर।
   ख. माँ के भक्त हुए तुम कैसे
      करके यह विचार खोटा
      माँ के सम्मुख ही माँ का तुम
      गौरव करते हो छोटा।

ख. **शिल्प-सौंदर्य**

1. "स्वर्ण-कलश-सरसिज विहँसित थे
   पाकर समुदित रवि-कर-जाल"
   उपर्युक्त पंक्तियों के आधार पर बताइए कि स्वर्ण-कलशों के सौन्दर्य की तुलना कवि ने किससे की है।
2. "जान सका न प्रभात सजग से,
   हुई अलस कब दोपहरी।"

आपके विचार में प्रभात के लिए "सजग" और दोपहर के लिए "अलस" विशेषणों का प्रयोग कवि ने क्यों किया है ?

II. योग्यता-विस्तार

1. "एक फूल की चाह" के कविता-पाठ में दो वाचन-प्रकार हो सकते हैं— कथात्मक और संवादात्मक। दोनों के अन्तर को समझिए और इस कविता में उन अंशों को ढूँढ कर उनका उपयुक्त कविता-पाठ कीजिए।
2. भाव-पल्लवन कीजिए—

क. ऐं, क्या मेरा कलुष बड़ा है
 माता की गरिमा से भी ?

ख. बच्चे पल-भर भी टिक कर नहीं बैठते।

शब्दार्थ और टिप्पणी

तापत्तप्त = ज्वर से पीड़ित
अवयव = अंग
विह्वल = दुखी
स्वर्ण-घन = सुनहले बादल
ग्रसना = निगलना
विस्तीर्ण = फैला हुआ
आमोदित = आनंद से भरा
ढिकला = ठेला गया, धकेला गया
सिंहपौर = मंदिर का मुख्य द्वार
परिधान = वस्त्र
शुचिता = पवित्रता
कंठ क्षीण होना = रोने के कारण स्वर धीमा हो जाना
सजग प्रभात = जागृति और हलचल से भरी सुबह
अलस दोपहरी = आलस्य से भरी दोपहर
स्वर्ण-कलश-सरसिज = कमल के समान सुंदर सोने के कलश
रवि-कर-जाल = सूर्य की किरणों का समूह

सूर्यकांत त्रिपाठी "निराला"

सूर्यकांत त्रिपाठी "निराला" का जन्म सन् 1897 ई. में वसंत-पंचमी के दिन बंगाल के महिषादल राज्य में हुआ था। उनके पिता पं. रामसहाय त्रिपाठी उत्तर प्रदेश के उन्नाव ज़िले के निवासी थे। वे आजीविका के लिए बंगाल चले गए थे। ढाई वर्ष की आयु में ही निराला की माताजी का निधन हो गया था। पिताजी ने उनका पालन-पोषण किया। निराला जी की प्रारंभिक शिक्षा-दीक्षा महिषादल में हुई। उन्होंने संस्कृत, बाङ्ला और अंग्रेजी भाषा का अध्ययन घर पर ही किया। उनका देहांत सन् 1961 ई. में हुआ।

निराला बहुमुखी प्रतिभा के साहित्यकार थे। वे विद्रोही, क्रांतिकारी और युग-प्रवर्तक कवि माने जाते हैं। कविता के अतिरिक्त उन्होंने उपन्यास, कहानी, समालोचना और संस्मरण भी लिखे हैं। आधुनिक कविता की प्रायः सभी प्रवृत्तियाँ और रचना-शैलियाँ निराला जी के काव्य में विद्यमान हैं। निराला जी ने प्रेम और सौंदर्य के गीतों के अतिरिक्त प्रकृति-चित्रण और राष्ट्र-प्रेम की कविताएँ भी लिखी हैं। दीन-हीन और शोषितों के प्रति उनमें गहरी सहानुभूति थी। उनकी भाषा प्रायः संस्कृत-निष्ठ रही है जिसमें समासयुक्त पदावली और प्रतीक शैली का प्रयोग हुआ है। हिन्दी में मुक्त छन्द के प्रवर्तक निरालाजी ही माने जाते हैं।

निराला की प्रमुख काव्य रचनाएँ हैं—परिमल, गीतिका, अनामिका, तुलसीदास, कुकुरमुत्ता, अणिमा, अपरा, वेला, नए पत्ते, आराधना और अर्चना।

19

प्रियतम

[प्रस्तुत कविता में विष्णु और नारद से संबंधित एक पौराणिक प्रसंग लिया गया है। इस प्रसंग के माध्यम से कवि ने यह स्पष्ट किया है कि जीवन में अपने उत्तरदायित्व को निभाने वाला व्यक्ति ही श्रेष्ठ है। पूजा-पाठ करने वाले की अपेक्षा कर्तव्य पालन करने वाला ही प्रभु को प्रिय है।]

एक दिन विष्णुजी के पास गए नारद जी,
पूछा, "मृत्युलोक में कौन है पुण्यश्लोक
भक्त तुम्हारा प्रधान ?"

विष्णु जी ने कहा, "एक सज्जन किसान है
प्राणों से प्रियतम।"
"उसकी परीक्षा लूँगा," हँसे विष्णु सुनकर यह,
कहा कि, "ले सकते हो।"

नारद जी चल दिए
पहुँचे भक्त के यहाँ
देखा, हल जोतकर आया वह दोपहर को,
दरवाजे पहुँचकर रामजी का नाम लिया,
स्नान-भोजन करके
फिर चला गया काम पर।
शाम को आया दरवाजे फिर नाम लिया,
प्रातः काल चलते समय
एक बार फिर उसने
मधुर नाम स्मरण किया।

"बस केवल तीन बार ?"
नारद चकरा गए—
किन्तु भगवान् को किसान ही यह याद आया ?
गए विष्णुलोक
बोले भगवान् से
"देखा किसान को
दिन-भर में तीन बार
नाम उसने लिया है।"

बोले विष्णु, "नारद जी,
आवश्यक दूसरा
एक काम आया है
तुम्हें छोड़कर कोई
और नहीं कर सकता।
साधारण विषय यह।
बाद को विवाद होगा,
तब तक यह आवश्यक कार्य पूरा कीजिए
तैल-पूर्ण पात्र यह
लेकर प्रदक्षिणा कर आइए भूमंडल की
ध्यान रहे सविशेष
एक बूँद भी इससे
तेल न गिरने पाए।"

लेकर चले नारद जी
आज्ञा पर धृत-लक्ष्य
एक बूँद तेल उस पात्र से गिरे नहीं।
योगिराज जल्द ही
विश्व-पर्यटन करके

लौटे बैकुंठ को
तेल एक बूँद भी उस पात्र से गिरा नहीं
उल्लास मन में भरा था
यह सोचकर तेल का रहस्य एक
अवगत होगा नया।
नारद को देखकर विष्णु भगवान् ने
बैठाया स्नेह से
कहा, "यह उत्तर तुम्हारा यहीं आ गया
बतलाओ, पात्र लेकर जाते समय कितनी बार
नाम इष्ट का लिया ?"

"एक बार भी नहीं"
शंकित हृदय से कहा नारद ने विष्णु से
"काम तुम्हारा ही था
ध्यान उसी से लगा रहा
नाम फिर क्या लेता और ?"
विष्णु ने कहा, "नारद
उस किसान का भी काम
मेरा दिया हुआ है।
उत्तरदायित्व कई लादे हैं एक साथ
सबको निभाता और
काम करता हुआ
नाम भी वह लेता है
इसी से है प्रियतम।"
नारद लज्जित हुए
कहा, "यह सत्य है।"

प्रश्न-अभ्यास

I. सौंदर्य-बोध

क. भाव-सौंदर्य

1. यह जानकर कि विष्णु का श्रेष्ठ भक्त कोई किसान है, नारद ने क्या निर्णय लिया ?
2. नारद क्या देखकर चकरा गए ?
3. तेल का पात्र लेकर प्रदक्षिणा कर लौटें नारद के मन में उल्लास क्यों भरा था ?
4. "यह उत्तर तुम्हारा आ गया" विष्णु ने नारद से यह क्यों कहा ?
5. विष्णु ने नारद की शंका को साधारण विषय कहकर उन्हें दूसरा काम क्यों सौंप दिया ? सही उत्तर छाँटिए :
   - क. वे नारद की बात टालना चाहते थे।
   - ख. वे नारद से ही उत्तर निकलवाना चाहते थे।
   - ग. उनके पास नारद के प्रश्न का कोई उत्तर न था।
   - घ. उनके लिए नारद और किसान में कोई भेद न था।
6. इस कविता का संदेश क्या है ? सही उत्तर बताइए :
   - क. ईश्वर भक्ति की प्रेरणा देना।
   - ख. विष्णु और नारद के संबंध बताना।
   - ग. किसान के काम को महत्त्वपूर्ण बताना।
   - घ. उत्तरदायित्व निभाते हुए ईश्वर का नाम लेना।

ख. शिल्प-सौंदर्य

1. इस कविता में छंद या तुक का अभाव है किंतु लय और प्रवाह मुख्य है। कविता को लय और प्रवाह में उचित आरोह-अवरोह के साथ पढ़िए।
2. "काम तुम्हारा ही था
   ध्यान उसी से लगा रहा
   नाम फिर क्या लेता और"

इस पद्यांश के पदक्रम में परिवर्तन मिलता है। इसे गद्य में लिखिए।

II. योग्यता-विस्तार

1. स्वयं को नारद मान कर इस कथा को आत्मकथा के रूप में सुनाइए।
2. इस कविता के संदेश की तुलना रवीन्द्रनाथ ठाकुर की कविता "पुजारी—भजन, पूजन और साधन" के संदेश से कीजिए।

शब्दार्थ और टिप्पणी

प्रियतम	=	सबसे अधिक प्रिय
मृत्युलोक	=	पृथ्वी, संसार
पुण्यश्लोक	=	नामी, यशस्वी
प्रदक्षिणा	=	परिक्रमा, फेरी
योगिराज	=	श्रेष्ठ योगी (नारद)
सविशेष	=	खास, महत्वपूर्ण
अवगत होना	=	मालूम पड़ना
इष्ट	=	उपासना के लिए मनचाहा देवता
शंकित	=	संदेह से भरा
विष्णु	=	एक देवता का नाम। कहा जाता है कि विष्णु की नाभि से कमल की उत्पत्ति हुई; उसी कमल से ब्रह्माजी उत्पन्न हुए। ब्रह्माजी सृष्टि रचते हैं और भगवान विष्णु सृष्टि का पालन करते हैं।
नारद	=	ब्रह्मा के मानस–पुत्र एवं भगवान् विष्णु के परम भक्त।

गोपाल सिंह "नेपाली"

गोपाल सिंह "नेपाली" का जन्म सन् 1902 ई. में बिहार के चम्पारन जिले के बेतिया नामक स्थान में हुआ। उनके पिता सेना में थे, इसी कारण उन्हें भारत के विभिन्न स्थानों पर घूमने का अवसर मिला। वे पत्रकार भी रहे और उन्होंने 'रतलाम टाइम्स', 'मालवा', 'चित्रपट' (दिल्ली), 'सुधा' (लखनऊ), 'योगी' (पटना) के सम्पादकीय विभागों में कार्य किया। उन्होंने हिन्दी सिनेमा के लिए भी गीत लिखे। सन् 1963 ई. में उनकी मृत्यु हो गई।

नेपाली ने प्रकृति-प्रेम की सुन्दर रचनाएँ की हैं। "उमंग" उनकी पहली काव्य-रचना है जिसमें कवि के युवा मन की उमंग दिखाई पड़ती है। छायावाद के मानवतावादी और स्वच्छंदतावादी कवियों में 'नेपाली' का प्रमुख स्थान है। उनकी भाषा अत्यंत मधुर, सरस एवं कोमल है। बीच-बीच में तद्भव शब्दों का प्रयोग इनकी निजी विशेषता है। उनके गीतों में संगीतात्मकता सर्वत्र व्याप्त है।

गोपाल सिंह "नेपाली" की प्रमुख रचानाएँ हैं : उमंग, पंछी, रागिनी, टुकड़ी, विद्रोही, दार्जिलिंग की बूँदाबाँदी, गंगा किनारे आदि।

20

हिमालय और हम

[इस कविता में हिमालय और भारतवासियों की समान विशेषताओं पर प्रकाश डाला गया है। जिस प्रकार हिमालय अपराजेय है, उसी प्रकार हमारा मस्तक भी किसी के सामने नहीं झुकता। हिमालय पर जिस प्रकार उषा और संध्या की लालिमा समान रूप से दिखाई देती है, उसी प्रकार हम भारतीय भी सुख-दुख में समान रहते हैं। हिमालय की भाँति हम भी अविचल और अमर हैं। इसका प्रभाव हमारे जीवन के प्रत्येक पक्ष पर दिखाई देता है।]

गिरिराज हिमालय से भारत का कुछ ऐसा ही नाता है

(1)

इतनी ऊँची इसकी चोटी कि सकल धरती का ताज यही
पर्वत-पहाड़ से भरी धरा पर केवल पर्वतराज यही
अंबर में सिर, पाताल चरन
मन इसका गंगा का बचपन
तन वरन-वरन मुख निरावरन
इसकी छाया में जो भी है, वह मस्तक नहीं झुकाता है।
गिरिराज हिमालय से भारत का कुछ ऐसा ही नाता है।।

(2)

अरुणोदय की पहली लाली इसको ही चूम निखर जाती
फिर संध्या की अंतिम लाली इस पर ही झूम बिखर जाती
इन शिखरों की माया ऐसी
जैसा प्रभात, संध्या वैसी
अमरों को फिर चिन्ता कैसी

इस धरती का हर लाल खुशी से उदय-अस्त अपनाता है।
गिरिराज हिमालय से भारत का कुछ ऐसा ही नाता है।।

(3)

हर संध्या को इसकी छाया सागर-सी लंबी होती है
हर सुबह वही फिर गंगा की चादर-सी लंबी होती है
इसकी छाया में रंग गहरा
है देश हरा, परदेश हरा
हर मौसम है, संदेश-भरा
इसका पद-तल छूनेवाला वेदों की गाथा गाता है।
गिरिराज हिमालय से भारत का कुछ ऐसा ही नाता है।।

(4)

जैसा यह अटल, अडिग-अविचल, वैसे ही हैं भारतवासी
है अमर हिमालय धरती पर, तो भारतवासी अविनाशी
कोई क्या हमको ललकारे
हम कभी न हिंसा से हारे
दुःख देकर हमको क्या मारे
गंगा का जल जो भी पी ले, वह दुःख में भी मुसकाता है।
गिरिराज हिमालय से भारत का कुछ ऐसा ही नाता है।।

(5)

टकराते हैं, इससे बादल, तो खुद पानी हो जाते हैं।
तूफ़ान चले आते हैं, तो ठोकर खाकर सो जाते हैं।।
जब-जब जनता को विपदा दी
तब-तब निकले लाखों गाँधी
तलवारों-सी टूटी आँधी
इसकी छाया में तूफ़ान, चिरागों से शरमाता है।
गिरिराज, हिमालय से भारत का कुछ ऐसा ही नाता है।।

प्रश्न-अभ्यास

I. सौंदर्य-बोध

(क) भाव-सौंदर्य

1. हिमालय को धरती का ताज क्यों कहा गया है ?
2. हिमालय के शिखर पर प्रभात और संध्या समान क्यों बताए गए हैं? यह समानता का भाव हम भारतीयों में किस रूप में मिलता है?
3. "इसका पद-तल छूने वाला वेदों की गाथा गाता है"—इस पंक्ति से कवि का क्या अभिप्राय है ?
4. कवि ने गंगा-जल की क्या विशेषता बताई है ?
5. "जो हमसे टकराता है, चूर चूर हो जाता है" इस भाव से मिलती-जुलती पंक्ति छाँटिए।
6. कवि ने हिमालय से हमारे कंई सम्बन्ध बताए हैं, उनमें से किन्हीं तीन का उल्लेख कीजिए।
7. हम भारतवासी किसी के सामने मस्तक क्यों नहीं झुकाते ? सही उत्तर छाँटिए :
   - क. हिमालय हमारा पहरेदार है।
   - ख. हिमालय हमें जड़ी-बूटी देता है।
   - ग. हिमालय से गंगा निकलती है।
   - घ. हिमालय पर्वत सबसे ऊँचा है।
8. भाव स्पष्ट कीजिए :

   (क) इसकी छाया में रंग गहरा,
   है देश हरा, परदेश हरा।
   हर मौसम है संदेश-भरा।।

   (ख) जैसा यह अटल, अडिग, अविचल
   वैसे ही हैं भारतवासी।
   हैं अमर हिमालय धरती पर,
   तो भारतवासी अविनाशी।

   (ग) जब-जब जनता को विपदा दी,
   तब-तब निकले लाखों गाँधी,
   तलवारों-सी टूटी आँधी।

ख. शिल्प-सौंदर्य

1. "मन इसका गंगा का बचपन
   तन वरन-वरन, मुख निरावरन"
   उपर्युक्त पंक्तियों में किन वर्णों के दुहराए जाने से ध्वनि-सौंदर्य उत्पन्न हुआ है ?

2. इस कविता से "हिमालय" के दो पर्याय छाँटिए जिनसे कविता का सौंदर्य बढ़ गया है।

II. योग्यता-विस्तार

1. इस कविता को याद करके ओजपूर्ण स्वर में प्रार्थना-सभा में सुनाइए।
2. इस कविता की तुलना सुब्रह्मण्यम् भारती की कविता "यह है भारत देश हमारा" से कीजिए और बताइए कि दोनों में क्या समानता है ?
3. हिमालय की विशेषताओं पर एक लेख लिखिए, जिसमें इस कविता की किन्हीं दो पंक्तियों का प्रयोग किया गया हो।

शब्दार्थ और टिप्पणी

गिरिराज	=	पर्वतों का राजा (हिमालय पर्वत का एक विशेषण)
वरन-वरन	=	भिन्न-भिन्न रंगों का
निरावरन	=	निरावरण, खुला हुआ
अरुणोदय	=	सूर्योदय
पद-तल	=	चरण
चिराग	=	दीपक
उदय-अस्त	=	सुख-दुख, खुशियों का आना उदय है और खुशियों का जाना अर्थात् दुखों का आना अस्त है।
अविचल	=	स्थिर, निश्चय
विपदा	=	विपत्ति, कष्ट (संपदा का विलोम)
पानी हो जाना	=	चूर-चूर हो जाना, बरस पड़ना
तूफ़ान का चिरागों से शरमाना	=	हिमालय की शक्ति के प्रभाव से तूफान इतना निर्बल हो जाता है कि दीपक को भी नहीं बुझा पाता। अर्थात् इसकी छत्र-छाया में रहने वालों का कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकता।
इसका पद-तल छूने वाला	=	इसके चरणों का स्पर्श करने वाला
वेदों की गाथा गाता है	=	आज भी लोग ज्ञान की साधना के लिए हिमालय की ओर जाते हैं। वेदों की रचना हिमालय की गोद में ही हुई थी।

हरिवंशराय "बच्चन"

हरिवंशराय "बच्चन" का जन्म सन् 1907 ई.. में इलाहाबाद (प्रयाग) में हुआ। उन्होंने प्रयाग और काशी में शिक्षा प्राप्त की। कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय से उन्होंने अंग्रेजी-साहित्य में डॉक्टरेट की उपाधि प्राप्त की। कुछ समय तक वे इलाहाबाद विश्वविद्यालय में प्राध्यापक रहे। उसके बाद विदेश मंत्रालय की सेवा में दिल्ली आ गए।

हरिवंशराय "बच्चन" की रचनाओं में मानवीय भावनाओं की सहज अभिव्यक्ति हुई है। सरसता, संगीतात्मकता, प्रवाह और मार्मिकता उनकी कविताओं की प्रमुख विशेषताएँ हैं। इसी गीत-शैली के कारण वे लोकप्रिय हुए। उनकी भाषा की सहजता उनके काव्य को सजीव बनाती है। उनकी रचनाओं में व्यक्ति-वेदना, राष्ट्र-चेतना और जीवन-दर्शन के स्वर मिलते हैं। कविता के अतिरिक्त उन्होंने अन्य विधाओं में भी रचनाएँ की हैं। उनकी आत्मकथा चार खंडों में प्रकाशित हुई है। इस पर उन्हें "सरस्वती सम्मान" से विभूषित किया गया।

बच्चन की प्रमुख काव्य-कृतियाँ हैं : मधुशाला, मधुबाला, निशानिमंत्रण, एकांत-संगीत, मिलन-यामिनी, आरती और अंगारे, सतरंगिनी।

21

गीत मेरे

[प्रस्तुत गीत में कवि ने अपनी कविता को देहरी का दीप बनाकर संसार का अंधकार मिटाने की आकांक्षा व्यक्त की है। जैसे देहरी पर रखा हुआ दीपक घर के भीतर और बाहर दोनों ओर उजाला फैलाता है उसी प्रकार कवि अपने गीत द्वारा स्वयं के जीवन में तथा विश्व में ज्ञानरूपी प्रकाश फैलाना चाहता है। इसके लिए कवि अपनी पूर्ण प्राणशक्ति लगाने को भी तत्पर है। कवि का विश्वास है कि जब उसके अंदर की कालिमा दूर हो जाएगी तब विश्व में भी प्रकाश फैल जाएगा।]

गीत मेरे, देहरी के दीप-सा बन।

एक दुनिया है हृदय में, मानता हूँ,
वह घिरी तम से, इसे भी जानता हूँ,
छा रहा है किंतु बाहर भी तिमिर-घन;
गीत मेरे, देहरी के दीप-सा बन।

प्राण की लौ से तुझे जिस काल बारूँ,
और अपने कंठ पर तुझको सँवारूँ,
कह उठे संसार, आया ज्योति का क्षण;
गीत मेरे, देहरी के दीप-सा बन।

दूर कर मुझमें भरी तू कालिमा जब,
फैल जाए विश्व में भी लालिमा तब,
जानता सीमा नहीं है अग्नि का कण;
गीत मेरे, देहरी के दीप-सा बन।

जग विभामय तो न काली रात मेरी,
मैं विभामय तो नहीं जगती अँधेरी,
यह रहे विश्वास मेरा, यह रहे प्रण;
गीत मेरे, देहरी के दीप-सा बन।

प्रश्न-अभ्यास

I. सौंदर्य-बोध

क. भाव-सौंदर्य

1. कवि गीत से क्या चाहता है ?
2. कवि के हृदय की दुनिया कैसी है ?
3. कवि अपने गीत को देहरी का दीप क्यों बनाना चाहता है ?
4. विश्व में लालिमा कब फैलेगी ?
5. जग विभामय कब होगा ? सही उत्तर चुनिए :
   क. जब सवेरा हो जाएगा।
   ख. जब दीपक जल जाएगा.
   ग. जब काली रात बीत जाएगी।
   घ. जब व्यक्ति स्वयं प्रकाशमय हो जाएगा।
6. भाव स्पष्ट कीजिए :
   क. "प्राण की लौ से तुझे किस काल बारूँ,
   और अपने कंठ पर तुझको सँवारूँ,"
   ख. "जग विभामय तो न काली रात मेरी,
   मैं विभामय तो नहीं जगती अँधेरी,"

ख. शिल्प-सौंदर्य

1. "वह घिरी तम से" कहकर कवि ने अपने हृदय के अंधकार की ओर संकेत दिया है। इसी प्रकार "बाहर भी तिमिर घन" से कवि संसार के अंधकार की ओर संकेत कर रहा है। "अंधकार" को व्यक्त करने वाले इसी तरह के अन्य शब्द छाँटिए।
2. "कालिमा" शब्द अंधकार-रूपी अज्ञान का प्रतीक है और "लालिमा" शब्द ज्ञान-रूपी प्रकाश का। कवि ने इन प्रतीकात्मक शब्दों के द्वारा कविता में अर्थ-सौंदर्य प्रकट किया है। कविता में से इसी तरह के अन्य प्रतीकात्मक शब्दों को चुनिए।

II. योग्यता-विस्तार

1. इस गीत का गायन कीजिए।
2. "गीत मेरे, देहरी के दीप-सा बन" का भाव-पल्लवन कीजिए।
3. "दीप-सा" में उपमा अलंकार है।

सा, इव, सम, समान, सदृश आदि शब्दों द्वारा उपमा अलंकार की पहचान होती है। अपनी पाठ्यपुस्तक की अन्य कविताओं में से उपमा अलंकार के उदाहरण ढूँढकर निकालिए।

शब्दार्थ और टिप्पणी

देहरी	=	देहलीज़, घर या कमरे के दरवाजे का प्रवेश स्थान
तम	=	अंधकार
तिमिर	=	अंधकार
घन	=	घना, गहन, अत्यधिक
कालिमा	=	कालिख, दोष, अवगुण, अज्ञानरूपी-अंधकार
लालिमा	=	लाली (उल्लास प्रसन्नता और ज्ञान के प्रतीकार्थ में)
विभामय	=	प्रकाश से युक्त, ज्ञानरूपी-ज्योति
कालीरात	=	दु:ख, अज्ञानमय रात्रि
जगती	=	संसार
प्रण	=	प्रतिज्ञा

गीत मेरे, देहरी के दीप-सा-बन—जैसे घर की देहरी पर रखा हुआ दीपक भीतर और बाहर दोनों ओर उजाला करता है, उसी प्रकार कवि अपनी कविता द्वारा स्वयं के कलुष (अज्ञान) तथा संसार के अज्ञानरूपी अंधकार के दूर होने की कामना करता है।

प्राण की लौ से तुझे जिस काल बारूँ,
और अपने कंठ पर तुझको सँवारूँ—

कवि अपने गीत-रूपी-दीपक की रचना पूरी निष्ठा और प्राणशक्ति द्वारा करना चाहता है जिससे कि कवि के कंठ (गले) से गीत फूटते ही संसार में परिवर्तन (ज्योति का क्षण) अर्थात् ज्ञान का प्रकाश फैल जाए।

जग विभामय तो न काली रात मेरी
मैं विभामय तो नहीं जगती अँधेरी,

कवि के अनुसार, व्यक्ति के ज्ञान से संसार (समाज) का अज्ञान दूर हो सकता है और संसार के ज्ञान से व्यक्ति का अज्ञान। अर्थात् व्यक्ति समाज को बदल सकता है और समाज व्यक्ति को। एक व्यक्ति भी अपने ज्ञान के एक कण को सर्वत्र फैलाकर अज्ञानरूपी अंधकार मिटा सकता है।

नागार्जुन

नागार्जुन का जन्म दरभंगा (बिहार) ज़िले के सतलखा ग्राम में 1911 ई. में हुआ। उनका वास्तविक नाम वैद्यनाथ मिश्र है। उनकी प्रारंभिक शिक्षा स्थानीय संस्कृत पाठशाला में हुई। अभावों ने उनके जीवन को संघर्षशील बनाया है। उन्होंने सम्पूर्ण भारत का कई बार भ्रमण किया है। वे राजनीतिक गतिविधियों से भी जुड़े रहे और इस सिलसिले में उन्हें कई बार जेल-यात्रा भी करनी पड़ी। 1935 ई. में उन्होंने 'दीपक' (हिन्दी मासिक) का सम्पादन किया। 1936 ई. में वे श्रीलंका गए और वहाँ उन्होंने बौद्ध धर्म की दीक्षा ली। 1938 ई. में वे स्वदेश लौट आए। 1942-43 में 'विश्वबंधु' (साप्ताहिक) का सम्पादन किया।

नागार्जुन एक प्रगतिशील साहित्यकार के रूप में जाने जाते हैं। राजनैतिक एवं सामाजिक स्थितियों पर तीखी और सीधी चोट करने वाला स्वर उनकी कविता में सर्वत्र विद्यमान है। वे शोषण और अन्याय के विरोध में लिखने वाले प्रमुख जनवादी कवि हैं। वे धरती, जनता और श्रम के गीत गाने वाले संवेदनशील कवि हैं। उनकी भाषा-शैली सरल, स्पष्ट तथा मार्मिक है। उन्होंने मैथिली तथा हिन्दी दोनों भाषाओं में रचनाएँ की हैं। वे अपनी मातृभाषा (मैथिली) में "यात्री" नाम से लिखते हैं। बाङ्ला और संस्कृत में भी उन्होंने कविताएँ लिखी हैं। साहित्य-सेवा के लिए मैथिली रचनाओं पर उन्हें साहित्य अकादमी पुरस्कार मिला है। कविता के अतिरिक्त उन्होंनें उपन्यास भी लिखे हैं।

नागार्जुन की प्रमुख काव्य-कृतियाँ हैं—युगधारा, प्यासी पथराई आँखें, सतरंगे पंखों वाली तालाब की मछलियाँ, हज़ार-हज़ार बाहों वाली, तुमने कहा था, पुरानी जूतियों का कोरस, आखिर ऐसा क्या कह दिया मैंने, रत्नगर्भा, ऐसे भी हम क्या ऐसे भी तुम क्या, भस्मांकुर आदि।

22

अकाल और उसके बाद

[प्रस्तुत कविता में कवि ने अकाल से उत्पन्न स्थिति का सजीव और मार्मिक चित्रण किया है। अकाल का प्रभाव न केवल परिवार के सदस्यों पर ही पड़ा है बल्कि घर में रहने वाले अन्य जीवधारी– (कानी कुतिया, छिपकलियाँ, कौआ और चूहे) भी उससे प्रभावित हुए हैं। जैसे ही घर में अनाज के दाने आते हैं, वैसे ही सभी के मन में खुशी की लहर दौड़ उठती है।]

कई दिनों तक चूल्हा रोया, चक्की रही उदास
कई दिनों तक कानी कुतिया सोई उनके पास
कई दिनों तक लगी भीत पर छिपकलियों की गश्त
कई दिनों तक चूहों की भी हालत रही शिकस्त।

दाने आए घर के अन्दर कई दिनों के बाद
धुँआ उठा आँगन से ऊपर कई दिनों के बाद
चमक उठीं घर-भर की आँखें कई दिनों के बाद
कौए ने खुजलायी पाँखें कई दिनों के बाद

प्रश्न-अभ्यास

I. सौन्दर्य-बोध

क. भाव-सौंदर्य

1. "चक्की रही उदास और चूल्हा रोया" से कवि का क्या अभिप्राय है?

2. छिपकली, कानी कुतिया और चूहों की हालत खराब क्यों थी ?
3. कानी कुतिया चक्की के पास किस आशा में सोती रही ?
4. घर में रहने वाले मानव और जीव-जन्तुओं की किस समान भावना को कवि ने इस कविता में प्रकट किया है ?
5. अकाल में घर की स्थिति कैसी हो गयी है ? अपने शब्दों में लिखिए।
6. अकाल के बाद अन्न के दाने आने से घर-भर की आँखों में चमक क्यों आ गयी ?
7. छिपकली, कुतिया और चूहे आदि जीव-जन्तुओं को कवि ने घर-परिवार के रूप में क्यों बताया है ? सही उत्तर चुनिए :
   क. उनका जीवन घर की खाद्य-सामग्री पर निर्भर है।
   ख. उनका जीवन मनुष्य पर निर्भर है।
   ग. उनका जीवन घर की चहारदीवारी तक सीमित है।
   घ. उनका जीवन घर की रसोई पर आश्रित है।

ख. शिल्प-सौंदर्य

1. "कई दिनों तक" शब्द-समूह का बार-बार प्रयोग करने से कविता में क्या अर्थ-सौंदर्य आ गया है ?
2. "कई दिनों तक" और "कई दिनों के बाद" का प्रयोग कवि ने किस उद्देश्य से किया है ?

II. योग्यता-विस्तार

1. "चमक उठीं घर-भर की आँखें कई दिनों के बाद" का भाव-पल्लवन कीजिए।
2. अकाल के दिनों में चूल्हा और चक्की के नीचे दिए गए संवाद को ध्यान से पढ़िए और चक्की, चूल्हा, कुतिया, छिपकली और चूहे के संवाद रिक्त स्थानों में लिखिए—

चक्की : चूल्हे, तू बुझा हुआ क्यों है ? फिर से जल ना !
चूल्हा : मुझे तो तूने बुझा रखा है। आटा हो तो जलूँ ना !
चक्की : ____________
चूल्हा : ____________
कुतिया : ____________
छिपकली : ____________
चूहा : ____________

शब्दार्थ और टिप्पणी

चक्की = दो भारी पत्थरों से बना हुआ यंत्र, जो अन्न पीसने के काम आता है।
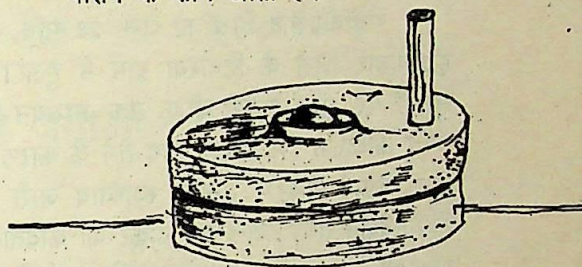
भीत = दीवार

गश्त = घूमना, पहरा देना

शिकस्त = हार, भूख से दुर्बल

पाँखें = पंख

अकाल = ऐसा समय जब भोजन की सामग्री का नितांत अभाव हो जाता है और लोग भूख से मरने लगते हैं।

भवानीप्रसाद मिश्र

भवानीप्रसाद मिश्र का जन्म 28 मार्च, 1913 ई. को मध्य प्रदेश के होशंगाबाद जिले के टिमरिया ग्राम में हुआ। उनकी प्रारंभिक शिक्षा कई स्थानों पर हुई। उन्होंने बी.ए. तक अध्ययन किया। 1942 ई. के "भारत छोड़ो आंदोलन" में सक्रिय भाग लेने के कारण उन्हें तीन वर्ष के लिए जेल जाना पड़ा। जेल में उन्होंने स्वाध्याय जारी रखा। वे महात्मा गाँधी के जीवन-दर्शन तथा रवीन्द्रनाथ ठाकुर की कविताओं से विशेष प्रभावित हुए। 1946 ई. से 1950 ई. तक उन्होंने वर्धा के महिला-आश्रम में अध्यापन कार्य किया। एक वर्ष तक "राष्ट्रभाषा-प्रचार समिति" का कार्य करते रहे। 1952 ई. से 1955 ई. तक हैदराबाद से प्रकाशित पत्रिका "कल्पना" का सम्पादन किया। वे आकाशवाणी के हिन्दी कार्यक्रमों से भी सम्बद्ध रहे। उन्होंने "सम्पूर्ण गाँधी-वाङ्‌मय" का सम्पादन किया और मृत्युपर्यन्त "गाँधी-स्मारक निधि सर्वसेवा संघ" से जुड़े रहे। 1985 ई. में उनका देहान्त हुआ।

मिश्रजी रचना को बोलचाल की भाषा में उतारना चाहते थे। उन्होंने अपनी कविता में सरल भाषा में सुख-दुख को छन्दबद्ध किया है। सरलता और सादगी ही उनकी शैलीगत विशेषता है। उनकी कविता की सहजता और ताजगी पाठकों का हृदय छू लेती है। मिश्रजी गाँधीवादी कवि के रूप में भी जाने जाते हैं। उनके काव्य में बोलचाल का लहजा, नाटकीय उतार-चढ़ाव और भाषा का प्रवाह है।

मिश्रजी की प्रमुख रचनाएँ हैं– गीतफरोश, चकित है दुख, अँधेरी कविताएँ, गाँधी पंचशती, बुनी हुई रस्सी, कवितांतर, खुशबू के शिलालेख, शतदल, त्रिकाल संध्या आदि।

इसे जगाओ

["इसे जगाओ" बोलचाल की भाषा में लिखी एक सहज कविता है। कविता का सन्देश है कि जो व्यक्ति समय पर सचेत होकर अवसर का लाभ उठाता है, वही जीवन में सफलता प्राप्त करता है। सही समय पर काम न करने वाला व्यक्ति जीवन की दौड़ में पिछड़ जाता है। कवि सूरज, पवन और पक्षी से आग्रह करता है कि वे मानव को इस सत्य से परिचित कराएँ।]

भई, सूरज
ज़रा इस आदमी को जगाओ !
भई, पवन
ज़रा इस आदमी को हिलाओ !
यह आदमी जो सोया पड़ा है,
जो सच से बेखबर
सपनों में खोया पड़ा है।
भई पंछी,
इसके कानों पर चिल्लाओ !
भई सूरज ! ज़रा इस आदमी को जगाओ !
वक्त पर जगाओ,
नहीं तो जब बेवक्त जगेगा यह
तो जो आगे निकल गए हैं
उन्हें पाने—
घबरा के भागेगा यह !

घबरा के भागना अलग है,
क्षिप्र गति अलग है,
क्षिप्र तो वह है
जो सही क्षण में सजग है।
सूरज, इसे जगाओ,
पवन, इसे हिलाओ,
पंछी, इसके कानों पर चिल्लाओ !

प्रश्न-अभ्यास

I. सौंदर्य-बोध

क. भाव-सौंदर्य

1. कवि ने मनुष्य को जगाने का अनुरोध किस-किस से किया है ?
2. आदमी सच से बेखबर कब हो जाता है ?
3. कैसे लोग जीवन में आगे निकल जाते हैं?
4. मनुष्य को समय पर जगाना क्यों जरूरी है ?
5. असमय जागने पर मनुष्य घबराकर क्यों भागता है ?
6. जीवन की दौड़ में मनुष्य पिछड़ क्यों जाता है ? सही उत्तर चुनिए:
   क. वह सुबह नहीं उठता।
   ख. वह सुबह नहीं दौड़ता।
   ग. वह समय पर सोया रहता है।
   घ. वह उचित समय पर सजग नहीं रहता।
7. भाव स्पष्ट कीजिए :
   क. यह आदमी जो सोया पड़ा है,
   जो सच से बेखबर
   सपनों में खोया पड़ा है।
   ख. घबरा के भागना अलग है
   क्षिप्रगति अलग है
   क्षिप्र तो वह है
   जो सही क्षण में सजग है।

ख. शिल्प-सौन्दर्य

1. मनुष्य को जगाने के लिए किसे, क्या, क्यों करना है— यह क्रमशः नीचे स्तंभ क, ख और ग में दिया गया है, पर क्रम भिन्न हैं। आप उनका सही क्रम में मिलान कीजिए—

(क)	(ख)	(ग)
सूरज	चिल्लाओ	मनुष्य को गति देने
हवा	जगाओ	मनुष्य को समझने-बोलने की सामर्थ्य देने
पक्षी	हिलाओ	मनुष्य का मार्ग प्रकाशित करने

2. कविता की उन पंक्तियों को उद्धृत कीजिए जिनसे प्रतीत होता है कि यह कविता मनुष्य को नींद से जगाने की ही नहीं, अपितु समय पर सचेत होकर अवसर का लाभ उठाने की प्रेरणा भी देती है।

II. योग्यता-विस्तार

1. "समय का महत्व" विषय पर विद्यालय की प्रार्थना-सभा में दो मिनट का भाषण दीजिए।
2. कल्पना कीजिए कि एक बच्चे को सुबह विद्यालय जाना है। उसकी माँ उसे जगाती है। वह उठ तो गया है, पर बिस्तर नहीं छोड़ रहा है। ऐसी स्थिति में उसके और उसकी माँ के बीच संभावित वार्तालाप को लिखिए।

शब्दार्थ और टिप्पणी

ज़रा = कुछ, थोड़ा
बेखबर = अनजान
बेवक्त = असमय
क्षिप्र = तेज, गतिशील
सजग = जगा हुआ, सचेत

रवीन्द्रनाथ ठाकुर

रवीन्द्रनाथ ठाकुर का जन्म बंगाल के एक सम्पन्न परिवार में 6 मई, सन् 1861 में हुआ था। उनकी शिक्षा-दीक्षा अधिकांशतः घर पर ही हुई। छोटी उम्र में ही स्वाध्याय तथा समुचित शिक्षा से उन्होंने सभी विषयों का ज्ञान प्राप्त कर लिया। प्रकृति से उन्हें गहरा लगाव था। उन्हें बैरिस्टरी पढ़ने के लिए विदेश भेजा गया लेकिन वे बिना परीक्षा दिए स्वदेश लौट आए। देश-विदेश के भ्रमण के अतिरिक्त रवीन्द्रनाथ ने बंगाल के गाँवों का भ्रमण किया और वहाँ के लोक-जीवन को आत्मसात् कर लिया। इसी कारण उनकी कविताओं में लोक-संस्कृति का स्वर प्रमुख रूप से मुखरित हुआ है।

प्रकृति से गहरे लगाव ने उनके भावुक मन को बचपन से ही रचनाशील बना दिया। उन्होंने लगभग एक हज़ार कविताएँ और दो हज़ार गीत लिखे हैं। उनकी रचनाओं में मानवीयता और आध्यात्मिकता की विशेष अभिव्यक्ति हुई है। प्रेम और सौंदर्य की दृष्टि से उनकी रचनाएँ विश्व-साहित्य में अपना अनूठा स्थान रखती हैं। उनके काव्य-संग्रह "गीतांजलि" पर सन् 1913 ई. में उन्हें "नोबेल पुरस्कार" से सम्मानित किया गया। बाङ्ला के साथ-साथ उन्होंने अंग्रेजी में भी काफी साहित्य लिखा है। उनकी प्रायः सभी रचनाओं का भारतीय तथा विश्व की अनेक भाषाओं में रूपांतरण हुआ है। कविता के अतिरिक्त उन्होंने कहानी, नाटक, उपन्यास, यात्रा-वृत्तांत, निबंध आदि की रचना भी की है। साथ ही वे चित्रकला, संगीत तथा भावनृत्य के सृजनशील प्रणेता रहे हैं।

रवीन्द्रनाथ ठाकुर की प्रमुख काव्य रचनाएँ हैं—गीतांजलि, नैवैद्य, पूरबी, वलाका, क्षणिका, चित्र और सांध्य-गीत।

24

पुजारी, भजन, पूजन और साधन

[इस कविता में कवि ने पुजारी को भजन, पूजन और आराधना का नया मार्ग सुझाया है। कवि पुजारी से कहता है कि द्वार बंद करके देवालय के कोने में तू कौन-सी पूजा में डूबा हुआ है। आँखें खोलकर ज़रा देख तेरा देवता देवालय छोड़कर उस कर्मभूमि में चला गया है, जहाँ उत्पादन में लगे लोग अपनी मेहनत-मजदूरी से नया मार्ग प्रशस्त कर रहे है। स्वयं प्रभु भी सृजन-कर्म से बँधे हैं, और तू अपने मन के अंधकार में छिपा बैठा है। तू भी कर्मभूमि की ओर चल। किसानों और मजदूरों के पसीने के साथ तू भी अपना पसीना बहा।]

पुजारी! भजन, पूजन, साधन, आराधना
इन सबको किनारे रख दे।
द्वार बन्द करके देवालय के कोने में क्यों बैठा है ?
अपने मन के अन्धकार में छिपा बैठा, तू कौन-सी पूजा में मग्न है ?
आँखें खोलकर जरा देख तो सही
तेरा देवता देवालय में नहीं है।
जहाँ मज़दूर पत्थर फोड़कर रास्ता तैयार कर रहे हैं,
तेरा देवता वहीं चला गया है !
वे धूप-बरसात में एक समान तपते-झुलसते हैं,
उनके दोनों हाथ मिट्टी में सने हैं
उनकी तरह सुन्दर परिधान त्याग कर मिट्टी-भरे रास्तों से जा
तेरा देवता देवालय में नहीं है।
भजन, पूजन, साधन को किनारे रख दे !
मुक्ति ! मुक्ति अरे कहाँ है ?

कहाँ मिलेगी मुक्ति !
अपने सृष्टि-बंध से प्रभु स्वयं बँधे हैं।
ध्यान-पूजा को किनारे रख दे
फूल की डाली को छोड़ दे
वस्त्रों को फटने दे, धूलि-धूसरित होने दे
उनके साथ काम करते हुए पसीना बहने दे।

प्रश्न-अभ्यास

I. सौंदर्य-बोध

क. भाव-सौंदर्य

1. कवि ने पुजारी से भजन, पूजन छोड़ने की बात क्यों कही ?
2. "तेरा देवता वहीं चला गया है" पंक्ति से कवि का क्या अभिप्राय है ?
3. कविता में किसान और मज़दूरों के बारे में क्या कहा गया है ?
4. भाव स्पष्ट कीजिए :

   (क) मुक्ति ! मुक्ति अरे कहाँ है ?
   कहाँ मिलेगी मुक्ति !
   अपने सृष्टि-बंध से प्रभु स्वयं बँधे हैं।

   (ख) फूल की डाली को छोड़ दे,
   वस्त्रों को फटने दे, धूलि-धूसरित होने दे
   उनके साथ काम करते हुए पसीना बहने दे।

5. इस कविता का मूल संदेश क्या है ? सही उत्तर छाँटिए :

   (क) परिश्रम ही सच्ची उपासना है।
   (ख) एकांत आराधना ही सच्ची उपासना है।
   (ग) भजन करना ही सच्ची उपासना है।
   (घ) देवालय में बैठना ही सच्ची उपासना है।

ख. शिल्प-सौंदर्य

1. कविता में किन-किन मुहावरों के प्रयोग से सौंदर्य आया है ?
2. कविता में नाटकीयता पैदा करने के लिए प्रश्नवाचक वाक्यों की रचना की गयी है। ऐसी कोई दो पंक्तियाँ चुनिए।

II. योग्यता-विस्तार

1. "परिश्रम ही ईश्वर की उपासना है" –
   इस विषय पर एक संक्षिप्त भाषण दीजिए।
2. इस प्रकार की अन्य कोई कविता पुस्तकालय से छाँटिए।

शब्दार्थ और टिप्पणी

साधन	=	पूजा-सामग्री, साधना
आराधना	=	उपासना
मग्न	=	डूबा हुआ
परिधान	=	वस्त्र
सृष्टि-बंध	=	रचना कार्य में संलग्न
मन के अंधकार में	=	अज्ञानता में
किनारे रखना	=	छोड़ देना, परित्याग कर देना
धूप-बरसात में एक समान होना	=	सुख-दुख में समान होना
धूलि-धूसरित होना	=	धूल-मिट्टी की परवाह न कर काम करना
पसीना बहाना	=	कड़ी मेहनत करना

सुब्रह्मण्यम भारती

सी. सुब्रह्मण्मय भारती का जन्म 11 दिसम्बर सन् 1882 ई. को तमिलनाडु के तिरुनलवेली जिले के एट्टयपुरम् में हुआ। बचपन से ही उन्हें काव्य-रचना का शौक था। 11 वर्ष की उम्र में एक कवि-सम्मेलन में आशु कविता रचने के उपलक्ष्य में उन्हें "भारती" नाम दिया गया और तब से वे इसी नाम से जाने गए। सन् 1898 में पिता के देहांत के बाद वे अपनी बुआ के पास बनारस आ गये। वहाँ से उन्होंने प्रथम श्रेणी में मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण की और हिंदी, संस्कृत तथा अन्य भाषाएँ भी सीखीं।

प्रारंभ में भारती ने मद्रास के तमिल दैनिक "स्वदेश मित्रन" के सम्पादकीय विभाग में काम किया। इसके बाद उन्होंने "इंडिया", "विजयं", "कर्मयोगी" तथा "बाल-भारत" नामक पत्र-पत्रिकाओं का सम्पादन किया। इस दौर में वे स्वतंत्रता-आंदोलन में जुड़ गए। 11 सितम्बर, 1921 को 39 वर्ष की आयु में उनका निधन हुआ।

भारती ने अपने गीतों के द्वारा जनमानस को जगाया और जनता को हर प्रकार के शोषण और दमन का विरोध करने के लिए प्रेरित किया। उनके गीतों में भारत माँ की महिमा गाई गई है। उन्होंने ऐसे भारत की कल्पना की जिसमें, जातपाँत, धर्म, भाषा का बंधन नहीं होगा लेकिन विविधताओं में एकता का आनंद प्राप्त कर सकेंगे। वे स्त्री-शिक्षा और नारी-मुक्ति के समर्थक थे। सच तो यह है कि देश-प्रेम और मानवीय समता के गीत गाने वाले रचनाकारों में भारती की समानता कम ही कवि कर पाते हैं।

सी. सुब्रहमण्यम भारती की प्रमुख रचनाएँ हैं— पांचाली शपथम् (द्रौपदी की शपथ), कण्णन पाट्टू (कृष्ण-गीत) तथा कुयिल पाट्टू (कोकिला गीत)।

25

यह है भारत देश हमारा

[इस कविता में भारत की अनेक विशेषताओं का गुणगान किया गया है। हिमालय के ऊँचे शिखर, गंगा की पावन धारा और वेदोपनिषद् आदि अमर ग्रंथ इस देश को यश और गरिमा प्रदान करते हैं। विश्व का कोई भी देश इसकी समानता नहीं कर सकता। यह देश महारथियों, पुराण-पुरुषों और अवतारों का देश रहा है। ऐसे गौरवशाली देश के निवासी अपने सामने आने वाली विघ्न-बाधाओं का साहस के साथ सामना करने के लिए सदा तत्पर रहेंगे और कभी भी स्वार्थवश कोई अनुचित काम नहीं करेंगे।]

चमक रहा उत्तुंग हिमालय, यह नगराज हमारा ही है।
जोड़ नहीं धरती पर जिसका, वह नगराज हमारा ही है।
नदी हमारी ही है गंगा, प्लावित करती मधुरस-धारा,
बहती है क्या कहीं और भी ऐसी पावन कल-कल धारा ?
सम्मानित जो सकल विश्व में, महिमा जिनकी बहुत रही है,
अमर ग्रंथ वे सभी हमारे, उपनिषदों का देश यही है
गाएँगे यश हम सब इसका, यह है स्वर्णिम देश हमारा।
आगे कौन जगत में हमसे, यह है भारत देश हमारा।

यह है देश हमारा भारत, महारथीगण हुए जहाँ पर,
यह है देश मही का स्वर्णिम, ऋषियों ने तप किए जहाँ पर,
यह है देश जहाँ नारद के, गूँजे मधुमय गान कभी थे,
यह है देश जहाँ पर बनते, सर्वोत्तम सामान सभी थे।
यह है देश हमारा भारत, पूर्ण-ज्ञान का शुभ्र निकेतन।
यह है देश जहाँ पर बरसी, बुद्धदेव की करुणा चेतन।

है महान, अति भव्य पुरातन, गूँजेगा यह गान हमारा।
है क्या हम-सा कोई जग में, यह है भारत देश हमारा।

विघ्नों का दल चढ़ आए तो, उन्हें देख भयभीत न होंगे,
अब न रहेंगे दलित दीन हम, कहीं किसी से हीन न होंगे,
क्षुद्र स्वार्थ की खातिर हम तो कभी न गर्हित कर्म करेंगे।
पुण्यभूमि यह भारतमाता, जग की हम तो भीख न लेंगे।
मिसरी-मधु-मेवा-फल सारे, देती हमको सदा यही है,
कदली, चावल, अन्न, विविध और क्षीर सुधामय लुटा रही है।
आर्यभूमि उत्कर्षमयी यह, गूँजेगा यह गान हमारा।
कौन करेगा समता इसकी, महिमामय यह देश हमारा।

प्रश्न-अभ्यास

I. सौंदर्य-बोध

क. भाव-सौंदर्य

1. कवि ने हिमालय को संसार में बेजोड़ क्यों बताया है ?
2. "बहती है क्या कहीं और भी ऐसी पावन कल-कल धारा" —पंक्ति में गंगा की किस विशेषता का वर्णन हुआ है ?
3. कवि ने भारत को किन-किन कारणों से महान बताया है ?
4. इस कविता में विदेशी सहायता का विरोध क्या कहकर किया गया है ?
5. इस कविता में किन महापुरुषों की महिमा का गुणगान हुआ है ?

ख. शिल्प-सौंदर्य

1. कविता के दूसरे पद की प्रथम छह पंक्तियों में "यह है देश" अभिव्यक्ति का बार-बार प्रयोग कर कवि क्या कहना चाहता है ?
2. निम्नलिखित संज्ञा-पदों के ऐसे विशेषण चुनिए जिनके कारण कविता में सौंदर्य की वृद्धि हुई है :
   हिमालय, धारा, गान, निकेतन

II. योग्यता-विस्तार

1. प्रथम-भाषा की राष्ट्रप्रेम संबंधी किसी अन्य कविता का सार कक्षा में सुनाइए।

2. "स्वतंत्रता के बाद भारत की प्रगति" विषय पर एक निबंध लिखिए।

शब्दार्थ और टिप्पणी

उत्तुंग	=	ऊँचा
नगराज	=	हिमालय पर्वत
प्लावित	=	जल में डूबा हुआ
मही	=	पृथ्वी
निकेतन	=	घर
शुभ्र	=	उज्ज्वल
गर्हित	=	निन्दनीय
उत्कर्षमयी	=	उन्नतिशील
क्षुद्र	=	तुच्छ, छोटा, नीच

कवि ने भारत के कुलज्ञान, वेद उपनिषद् आदि ग्रन्थ, महारथियों के शौर्य, ऋषियों के तप, नारद की मधुर वाणी, अध्यात्म ज्ञान, महात्मा बौद्ध धर्म के कारण इसे महान बताया है।

महारथी ऐसे शूरवीर योद्धा को कहते हैं जो अकेला दस हजार धनुर्धारियों का मुकाबला कर सकता है। भीष्म, अर्जुन, कृष्ण, द्रोणाचार्य, कर्ण जैसे अनेक महारथी हुए हैं।

शब्दार्थ

अ

अंतर्व्यापी	=	मन के भीतर तक फैले हुए (पाठ के संदर्भ में –– गलियों के अन्दर स्थित)
अंतःकरण	=	हृदय
अकाल	=	सूखा पड़ने अथवा फसल नष्ट हो जाने से किसी क्षेत्र में अन्न का अभाव जिसके कारण लोग भूख से मरने लगें
अतीत	=	भूत काल, बीता हुआ
अनुग्रह	=	कृपा
अनुपम	=	अनोखा
अनुष्ठान	=	पवित्र कर्म
अनुहार	=	शक्ल सूरत
अप्रतिभ	=	आश्चर्य चकित, विस्मित
अबाध	=	बाधा रहित
अभिभूत	=	वश में किया हुआ, प्रभावित, रोमांचित
अभिषिक्त	=	पवित्र जल से भीगा हुआ
अनुशीलन	=	सतत् तथा गंभीर अभ्यास
अरमान	=	इच्छा, लालसा, अभिलाषा
अरुण	=	लाल रंग, सूर्य
अरुणोदय	=	सूर्योदय
अर्जित	=	प्राप्त
अभिराम	=	सुंदर
अला-बला	=	भूत प्रेत का बुरा प्रभाव
अल्पांश	=	थोड़ा, कम
अवगत	=	मालूम, विदित
अवयव	=	अंग
अवलम्ब	=	सहारा

अवांछित = अनचाहा
असमंजस = दुविधा, पशोपेश

आ

आकार-प्रकार = रूप, बनावट
आक्रोश = क्रोध, नाराज़गी
आत्मतुष्ट = अपने आप में संतुष्ट
आत्मविश्वास = अपने आप पर भरोसा
आत्मसात् = पचा लेना, अपना लेना
आध्यात्मिक = आत्मा और परमात्मा से संबंधित
आनंदातिरेक = बहुत अधिक खुशी
आन = गौरव, सम्मान
आनन = मुख
आनि = लाकर
आब = आभा
आमोदित = आनंद से भरा
आराधना = उपासना
आरोप-प्रत्यारोप = परस्पर दोषारोपण, एक दूसरे पर दोष लगाना
आवेश = जोश, क्रोध
आशंका = सन्देह, कुछ बुरा होने का भय
आश्वस्त = संतुष्ट, निश्चिंत
ओड़ना = माँगना (ओड़त फिरे—माँगते हुए घूमे)

इ

इच्छानुसार = इच्छा के अनुसार
इष्ट = उपासना के लिए मनचाहा देवता
इहै = यही

ई

ईंगुर = सिंदूर

उ

उकताना = ऊबना, मन न लगना
उजरत = मानदेय, टैक्स
उत्कर्षमयी = उन्नतिशील

उत्तराधिकार = पूर्वजों से प्राप्त अधिकार
उत्तुंग = ऊँचा
उदास = दुखी
उद्घाटन = खोलना, प्रकट करना
उद्दण्ड = शरारती, जो किसी के वश में न आए
उपत्यका = घाटी
उपानह = बिना जूता-चप्पल पहने (नंगे पैर)
उर्वर = उपजाऊ
उषा काल = प्रभात
उसूल = सिद्धांत
उस्ताद = गुरु, चतुर, कुशल, प्रवीण

क

कदली = केला
कठौता = काठ का बरतन
कनावड़ी = कृतज्ञ
कर = हाथ
करुए = कड़वे, कटु
कद्र = इज्ज़त, सम्मान
कंटक = काँटे
काबिल = योग्य
क़ामरी = कंबल
कारगुजारी = चतुराई से किया हुआ काम
कालिमा = कालिख, दोष, अवगुण
काँख = बगल, हाथ के अंदर (नीचे का भाग)
कुंठित = किसी इच्छा के पूरा न होने पर निराश होना
कुदरत = प्रकृति
कुपित = गुस्से से भरा
कुफ़्र = हठ, दुराग्रह, नास्तिक
कुमुदिनी = कमलिनी, एक प्रकार का फूल जो रात्रि में खिलता है
क़ुरान = मुसलमानों का धार्मिक ग्रंथ
केतकी = केवड़ा (फूल का एक प्रकार)
कोदों सवाँ = मोटा अन्न (चावलों के जैसा एक अन्न)

कोस	=	दूरी मापने की एक इकाई जो अब प्रचलन में नहीं है। (2.25 किमी. = 1 कोस)
कृतकर्म	=	किया हुआ कर्म
क्षितिज	=	जहाँ धरती-आकाश मिलते हुए दिखाई देते हैं
क्षिप्र	=	तेज, गतिशील
क्षीण	=	कमजोर, दुर्बल
क्षुद्र	=	तुच्छ, छोटा, नीच

ख

खाद्य	=	खाने योग्य
खुराफात	=	शैतानी, झगड़ा करने वाली बात
खोज	=	चिह्न, ढूँढना (क्रिया), अन्वेषण, शोध
ख्याति	=	यश
ख्वाहिश	=	इच्छा
खूँट	=	वस्त्र के किनारे का भाग, छोर

ग

गंडा	=	गाँठ लगा पवित्र धागा जो जंतर-ताबीज की तरह पहना जाता है
गंतव्य	=	जहाँ जाना है, मंजिल, लक्ष्य
ग्रंथ	=	पुस्तक
गरहित (गर्हित)	=	निंदनीय
ग्रसना	=	निगलना
गश्त	=	घूमना, पहरा देना
गह्वर	=	गड्ढा, गुफा, कंदरा
गौन	=	गमन करना, जाना

घ

घट	=	घड़ा
घरनि (नी)	=	पत्नी, गृहिणी
घन	=	घना, गहन, अत्यधिक, मेघ

च

चक्की	=	दो भारी पत्थरों से बना हुआ आटा पीसने का यंत्र; जिसे देहात में स्त्रियाँ अन्न पीसने के काम में लाती हैं।

चाँबर = चावल
चाँपि = दबाकर
चूक = भूल, गलती
चून = आटा
चरितार्थ = सिद्ध करता हुआ
चेष्टा = प्रयत्न, कोशिश

छ

छरिया = द्वारपाल
छाम = दुबली-पतली
छूँछी = निर्धन, खाली (कविता के संदर्भ में, "आभूषण हीन")
छोकरा = बालक, लड़का

ज

जक = धुन, ज़िद
जगती = जागना (क्रिया), संसार
जरतारी = सोने के तार से जड़ी
ज़रा = कुछ थोड़ा
जानू-ब-जानू = सटकर बैठना, अगल-बगल बैठना
जाम (याम) = प्रहर (तीन घंटे का एक याम होता है इस प्रकार दिन-रात) चौबीस घंटे में आठ प्रहर चारयाम होते हैं
जाहिल = गँवार, मूर्ख
जेवर = आभूषण
जुटना = प्राप्त होना

झ

झाऊ = वृक्ष विंशेष का नाम

ट

टेरि-टेरि = पुकार-पुकार कर

ठ

ठग = धोखेबाज
ठेलि-पेलि = जबरदस्ती

ठूँठी = फ़सल कटने के बाद खेतों में बची गड़ी हुई लकड़ी
ठौर = जगह, स्थान

ढ

ढाढ़ = दहाड़, गर्जना

त

तदनुरूप = उसके अनुसार
तसबीह = जप की माला
ताप = बुखार, ज्वर, गरमी
तापतप्त = ज्वर से पीड़ित
तनक = थोड़ा, स्वल्प
तम = अँधेरा, तमस् (अंधकार)
तरुण = नवयुवक
तिमिर = अंधकार
तिय = स्त्री
तीरथ = तीर्थ, पवित्र स्थान
तुषार मंडित = बर्फ से ढकी हुई
तृष्णा = प्यास, आवश्यकता से अधिक किसी वस्तु की चाह
तंदुल (तंडुल) = चावल
त्रस्त = भयभीत, डरा हुआ

द

दकियानूसी = परम्परावादी, पुराणपंथी, पुराने विचारों का
दस्तंदाजी = दखल देना, बीच में पड़ना
दाख = किशमिश, मुनक्का (एक प्रकार की मीठी मेवा जो अंगूर को सुखाकर बनाई जाती है।
दाद = प्रशंसा, एक प्रकार का रोग
दाह-संस्कार = मृत शरीर को चिता में जलाना
दिलचस्पी = रुचि, पसंद
दीठि = दृष्टि, नज़र
दूर्वा = दूब, एक प्रकार की घास
देहरी = देहलीज़, घर या कमरे के दरवाजे का [illegible] स्थान

ध

धर्मभीरु = धर्म से डरने वाला
धाय = दो अर्थ हैं– (1) दौड़कर, (2) बच्चे की देखरेख करने वाली महिला (आया)
धुँधलका = मंद प्रकाश, अंधेरा-सा
धृतलक्ष्य = उद्देश्य मान कर

न

नगराज = हिमालय पर्वत
नमाज़-बंदगी = पूजा-पाठ
नाकाम = असफल
नारिकेल = नारियल
निकेतन = घर
निकृष्ट = बेकार, सबसे बुरा, तुच्छ
निधि = खजाना, मूल्यवान वस्तु
नियाज़ = चढ़ावा, भेंट, प्रार्थना
निरखना = प्यार से देखना
निरुद्देश्य = बिना किसी उद्देश्य के
निर्जन = सुनसान
निस्संदेह = संदेह रहित, अवश्य, बेशक
निहत्था = बिना किसी हथियार के
नीम आस्तीन = आधी बाँहों वाला वस्त्र
नूरानी = प्रकाशमान
नेरे = समीप
पठाना = भेजना
दामरी = बेचारी
पोटरी = कपड़े में बँधा हुआ सामान
परताप (प्रताप) = प्रभाव
पीर = पीड़ा
पंचगव्य = गाय से प्राप्त पाँच वस्तुएँ– दूध, दही, घी, मूत्र, गोबर
पंचभूत = पृथ्वी, जल, अग्नि, आकाश, वायु नामक पाँच तत्व
पग-धूरि = पैरों की धूल
पटंबर = रेशमी वस्त्र, पाटंबर

पटसार = पाठशाला
पठवनि = विदाई
परात = पीतल का बना हुआ थाल की आकृति का बड़ा बर्तन (पात्र)
परित्यक्ता = त्यागी हुई
परिधान = वस्त्र
परिधि = सीमा
पाँखें = पंख
पाद-प्रक्षालन = पैर धोना
पानी = चमक, सम्मान, जल
पिंगल = छंदशास्त्र
पितृव्य = चाचा, ताऊ
पुकुर = तालाब, पोखर
पुण्यश्लोक = नामी, यशस्वी
पुलकित = प्रसन्न
पेलि = जबरदस्ती
पैका = ताज़ियों का जुलूस
पैरगाड़ी = साइकिल
पोलङ गाछ = एक प्रकार का पेड़
पौरजन = नागरिक
प्रकृत कवि = जिनमें कविता करने की शक्ति स्वभावतः विद्यमान हो
प्रकाशवृत्त = रोशनी का घेरा
प्रज्ज्वलित = अधिक चमकीला, जलता हुआ
प्रतिष्ठा = आदर-सम्मान, स्थापना
प्रतिष्ठित = सम्मानित, नामी
प्रतीक = चिह्न, प्रतिनिधि, सूचक
प्रदक्षिणा = परिक्रमा, फेरी
प्रदत्त = दिया हुआ
प्रण = प्रतिज्ञा
प्रियतम = सबसे अधिक प्रिय
प्रोत्साहन = विशेष रूप से उत्साहित करना
प्लावित = जल में डूबा हुआ

फ

फ़तह = विजय
फरक (फ़र्क़) = अंतर, भेद
फिरंगी ज़बान = अंग्रेज़ी भाषा
फूट डालना = भेद या विरोध पैदा करना

ब

बढ़ै = बुझने पर, बड़ा होने पर
बर-बैन = सुन्दर-वचन
बरु = चाहे
बहँगी = काँवर, बाँस के डंडे के दोनों ओर छींका लटकाकर बोझ ढोने का साधन
बागवानी = फूल-पौधे लगाना
वाद = बहस
बानक = संयोग
बारे = जलाने पर, बचपन में
बाली-बूँट = गेहूँ की बाली तथा हरे चने
बिबुध = देवता
बीज गोदाम = बीज भंडार
बुतपरस्त = मूर्ति-पूजक
बूँट = हरा चना, चने की कच्ची फलियाँ
बेखबर = अनजान, निश्चिंत
बेड़ा = नावों या जहाज़ों का समूह
बेवक्त = असमय
बेहाल = दुखी
बैसोई = उसी प्रकार का (वैसा ही)

भ

भय-दायिनी = डरावनी, भयानक
भाव-भंगिमाएँ = भाव-चेष्टाएँ
भीटा = पान की बेल चढ़ाने के लिए बना टीला
भीत = दीवार
भुजंग = साँप
भूपति = राजा, नृप

भूरि = बहुत
भेषज = औषधि, दवा
भौन (भवन) = महल, मकान, बड़ा कक्ष/ इमारत
भ्रष्टाचार = बुरा आचार-व्यवहार

म

मंत्र-अभिषिक्त = मंत्र से पवित्र किया हुआ
मंदाकिनी = एक नदी, गंगा की स्वर्ग में बहने वली धारा
माँझी = मल्लाह, नाव चलाने वाला
मँझायौ = ढूँढ लिया
मग्न = डूबा हुआ
मड़ैया = झोपड़ी
मदिरालय = शराबघर
मधु = शराब, शहद
मधुवन = बगीचा
मन लोचत = मन लालायित होना, मन को अच्छा लगना
ममता = लगाव
मर्मज्ञ = विषय-वस्तु की गहराई को जानने वाला
महावत = हाथी को हाँकने या चलाने वाला व्यक्ति
मही = पृथ्वी
मादक = हर्षजनक, नशा पैदा करने वाला
मादक़ता = नशा
मार्जन = मंत्र के द्वारा पवित्र किया गया जल छिड़कना
मासूमियत = भोलापन
माहौल = वातावरण
मिठौती = मिठाई
मिताई-जोग = मित्रता के योग्य
मिन्नत = विनती
मुक़र्रर = निश्चित
मुक्ति = मोक्ष
मुलाज़िम = नौकर
मुल्क = देश
मुए = मर गए
मूक = चुपचाप

मूल-प्रवृत्तियाँ	=	जन्मजात गुण
मृत्युलोक	=	पृथ्वी, संसार
मृदु	=	कोमल
मृदुल	=	कोमल

य

योगिराज	=	श्रेष्ठ योगी (नारद)

र

रमणीक	=	सुन्दर, मनमोहक
रवैया	=	ढंग, तौर-तरीका
रसास्वादन	=	रस का स्वाद लेना
रसूल	=	पैगम्बर
रहस्यमय	=	छिपा, गूढ़, रहस्य से भरा
राज	=	मिस्त्री, मकान बनाने वाला कारीगर
रावरे	=	आपके
रिसर्च (अं.)	=	खोज, शोध
रूह	=	आत्मा, प्राण

ल

लक्षण	=	चिह्न, विशेषता
लटी	=	पुरानी तार-तार होकर फटी हुई
लवर	=	आग की लपट
लालसा	=	प्रेम, लगाव
लोकप्रियता	=	लोगों का प्रिय होना
लोन	=	नमक, लवण

व

वंचना	=	धोखा, छल, ठगी
वध	=	जान से मार डालना
वल्लरी	=	बेल, लता
वहशी	=	जंगली, असभ्य
विप्र	=	ब्राह्मण
विपदा	=	विपत्ति
विमुग्ध	=	मोहित

विषण्ण = उदास, दुखी
विसर्जन = प्रवाहित करना
विश्वासघात = धोखा, विश्वास तोड़ना
विस्तृत = फैला हुआ
विभामय = प्रकाश से युक्त
विह्वल = दुखी
वृथा = व्यर्थ बेकार
बैदगी = वैद्यक, चिकित्सा-शास्त्र
बैसोई = उसी प्रकार का (वैसा ही)
व्यवधान = बाधा, रुकावट
व्योम = आकाश

श

शंकित = संदेह-युक्त
शहीदी = शहीद होने की तैयारी, किसी महान काम के लिए कुरबानी देने को तैयार
शिकस्त = थका हुआ, शिथिल, भूख से दुर्बल
शिष्टाचार = सभ्य आचरण, सद्व्यवहार
शुचिता = पवित्रता
शुभ = उज्ज्वल, सफेद
शोकग्रस्त = दुखी
श्रमजीवी = मेहनत करके पेट भरने वाला मजदूर
श्रद्धांजलि = श्रद्धा का भाव प्रकट करना
श्रोता = सुनने वाला

स

संचहिं = इकट्ठा करते हैं
संशय = संदेह
संस्कारिता = संस्कार से युक्त होना
सजग = जगा हुआ, सचेत
सखुआ = साखू, सागौन का वृक्ष
सदमा = गहरा आघात (गहरी चोट)
सम्भ्रम = भ्रम में पड़ना, आश्चर्यचकित होना
सरोवर = तालाब

सराहैं = सराहना करते हैं
सविशेष = खास, महत्वपूर्ण
सरणि = मार्ग
सराहना = प्रशंसा करना
सलज = लज्जाशील, शरमीली
सहकर्मी = साथ-साथ काम करने वाला
साधन = पूजा-सामग्री, साधना
सानुराग = प्रेम सहित
सामा = सामर्थ्य
सार्वभौमिक = सारी पृथ्वी में फैला हुआ
सिकता-प्रांतर = बालू से भरा क्षेत्र
सिसियाना = ठंड लगना
सिंह-पौर = मंदिर का मुख्य द्वार
सुर = देवता
सून = व्यर्थ, शून्य
सूरमा = वीर, बहादुर, योद्धा
सेज = शय्या, बिस्तर
सृष्टिबंध = रचना कार्य में संलग्न
सुधारस = अमृत
सँभालि = सँभालकर
स्वर्णघन = सुनहरे बादल
स्वच्छन्द धारा = उन्मुक्त धारा, खुले रूप में बहने वाली धारा
स्वत्वाधिकारी = प्रकाशन का अधिकार रखने वाला, स्वामी

ह

हज = मक्का नामक तीर्थ स्थान की यात्रा
हरड़ और बहेड़ा = आयुर्वेद की दो वन-औषधियाँ
हाट = बाज़ार
हित = उपकार, भलाई
हितू = मित्र, हितैषी
हितरि = लहर, तरंग
हेमधाम = सोने का घर (महल)